* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

गोरखपुर

वर्ष ७६
संख्या १-२

नीतिसार-अङ्क

जनवरी
एवं
फरवरी अङ्क

दुर्गति-नाशिनि दुर्गा जय-जय, काल-विनाशिनि काली जय जय।
उमा-रमा-ब्रह्माणी जय जय, राधा-सीता-रुक्मिणि जय जय॥
साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव जय शंकर।
हर हर शंकर दुखहर सुखकर अघ-तम-हर हर हर शंकर॥
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥
जय-जय दुर्गा, जय मा तारा। जय गणेश जय शुभ-आगारा॥
जयति शिवाशिव जानकिराम। गौरीशंकर सीताराम॥
जय रघुनन्दन जय सियाराम। व्रज-गोपी-प्रिय राधेश्याम॥
रघुपति राघव राजाराम। पतितपावन सीताराम॥

(संस्करण २,५०,०००)

कल्याणमयी प्रार्थना

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां
ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो धिया।
मनश्च भद्रं भजतादधोक्षजे
आवेश्यतां नो मतिरप्यहैतुकी॥

हे नाथ! विश्वका कल्याण हो, दुष्टोंकी बुद्धि शुद्ध हो, सब प्राणियोंमें परस्पर सद्भावना हो, सभी एक-दूसरेका हितचिन्तन करें, हमारा मन शुभ मार्गमें प्रवृत्त हो और हम सबकी बुद्धि निष्कामभावसे भगवान् श्रीहरिमें प्रवेश करे। (श्रीमद्भागवत ५। १८। ९)
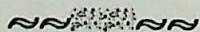
आवश्यक सूचना

फरवरी मासका अङ्क (परिशिष्टाङ्क) विशेषाङ्कके साथ संलग्न है।

इस अङ्कका मूल्य १२० रु० (सजिल्द १३५ रु०)

...रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥
...रूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
... जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

दसवर्षीय शुल्क*
भारतमें १२०० रु०
सजिल्द १३५० रु०
विदेशमें—सजिल्द
US$250 (Air Mail)
US$130 (Sea Mail)

...या नियम देखें।

...य श्रीजयदयालजी गोयन्दका
...ी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार
...मका
...र, गोरखपुरसे मुद्रित तथा प्रकाशित

...res@ndf.vsnl.net.in

ईसपकी नीति-कथाएँ

[ईसासे ६२० वर्ष पूर्व जनमे ईसपके जीवनके बारेमें अधिक जानकारी नहीं मिलती। कहते हैं कि वे किसी पूर्वी देशमें जनमे और यूनानके निवासी एक गुलाम थे। उनके नामपर प्रचलित अनेक कथाओंपर बौद्ध जातकों तथा पञ्चतन्त्र आदिकी भारतीय कथाओंकी स्पष्ट छाप दिखायी देती है। सुकरात तथा सिकन्दर आदिके युगमें अनेक भारतवासी उन देशोंकी यात्रा किया करते थे, इस कारण प्राचीन यूनानकी इन नीति-कथाओंपर भारतीय प्रभाव होना कोई अनहोनी बात नहीं है। इन नीति-कथाओंमें व्यावहारिक जीवनके अनेक सत्योंका निदर्शन मिलता है, अतः ये आबालवृद्ध सभीके लिये रोचक तथा उपयोगी हैं। इनकी लोकप्रियताका यही कारण है कुछ कथाएँ यहाँ प्रस्तुत हैं।—सम्पादक]

दुष्टोंके साथ ज्यादा मेल-जोल अच्छा नहीं

[बाघ और बगला]

एक बार एक बाघके गलेमें हड्डी अटक गयी। बाघने उसे निकालनेकी बड़ी चेष्टा की, पर उसे सफलता नहीं मिली। पीड़ासे परेशान होकर वह इधर-उधर दौड़-भाग करने लगा। किसी भी जानवरको सामने देखते ही वह कहता—'भाई! यदि तुम मेरे गलेसे हड्डीको बाहर निकाल दो तो मैं तुम्हें एक विशेष पुरस्कार दूँगा और आजीवन तुम्हारा ऋणी रहूँगा।' परंतु कोई भी जीव भयके कारण उसकी सहायता करनेको राजी नहीं हुआ।

पुरस्कारके लोभमें आखिरकार एक बगला तैयार हुआ। उसने बाघके मुँहमें अपनी लम्बी चोंच डालकर अथक प्रयासके बाद उस हड्डीको बाहर निकाल दिया। बाघको बड़ी राहत मिली। बगलेद्वारा पुरस्कारकी बात उठानेपर वह आँखें तरेरकर दाँत पीसते हुए बोला—'अरे मूर्ख! तूने बाघके मुँहमें अपनी चोंच डाल दी थी; उसे तू सुरक्षितरूपसे बाहर निकाल सका, इसीमें अपना भाग्य न मानकर ऊपरसे पुरस्कार माँग रहा है? यदि तुझे अपनी जान प्यारी है तो मेरे सामनेसे दूर हो जा; नहीं तो अभी तेरी गरदन मरोड़ दूँगा।' यह सुनकर बगला स्तब्ध रह गया और तत्काल वहाँसे चल दिया। ठीक ही कहा है—दुष्टोंके साथ ज्यादा मेल-जोल अच्छा नहीं।

अपनी मर्यादाका त्याग अपमानका कारण बनता है

[कौआ और मोरके पंख]

एक जगह बहुत-से मोरके पंख पड़े हुए थे। एक कौएने उन्हें देखकर मन-ही-मन सोचा—यदि मैं इन मोरके पंखोंको अपने पंखोंपर लगा लूँ तो मैं भी मोरके समान ही सुन्दर दिखने लगूँगा। यह सोचकर कौएने उन्हें अपने पंखोंपर लगा लिया और अन्य कौओंके पास जाकर कहने लगा—'तुमलोग बड़े नीच और कुरूप हो; मैं अब तुम लोगोंके साथ नहीं रहूँगा।' यह कहकर वह मोरोंकी टोलीमें सम्मिलित होने चला।

मोरोंने उसे देखते ही पहचान लिया कि यह कौआ है। इसके बाद सभी मोरोंने मिलकर उसके पंखोंसे एक-एक मोर-पंख निकाल लिये और उसे अत्यन्त मूर्ख ठहराकर उसपर प्रहार करने लगे। कौआ परेशान हो गया और उसने भागकर अपनी जान बचायी।

इसके बाद वह फिर अपनी टोलीमें शामिल होने गया। इसपर दूसरे कौओंने उसकी हँसी उड़ाते हुए कहा—'अरे मूर्ख! तू मोरोंके पंख पाकर अहंकारमें उन्मत्त हो हम लोगोंसे घृणा करके और गालियाँ देते हुए मोरोंके दलमें शामिल होने गया था; वहाँसे अपमानित होकर अब तू फिर हमारी टोलीमें मिलने आया है। तू तो बड़ा ही नीच और निर्लज्ज है।' इस प्रकार उसका तिरस्कार करते हुए उन लोगोंने उस मूर्ख कौएको भगा दिया।

मनुष्य यदि दूसरोंकी नकलका प्रयास छोड़कर, अपने गुण-अवगुण जानकर अपनी अवस्थासे संतुष्ट रहे, अपनी मर्यादामें रहे तो उसे किसीके सामने अपमानित नहीं होना पड़ता।

लोभका फल

[कुत्ता और उसकी परछाईं]

रोटी मुखमें लिये एक कुत्ता नदी पार कर रहा था। नदीके स्वच्छ जलमें पड़ते हुए अपने प्रतिबिम्बको एक

आलस्यसे पतन होता है

महाभारतमें नीतिकी एक सुन्दर कथा इस प्रकार आयी है—एक ऊँट था। उसे पूर्वजन्मकी सारी बातें ज्ञात थीं। ऊँट होते हुए भी वह कठिन तपस्यामें निरत रहता था। उसकी कठिन तपस्यासे ब्रह्माजी बहुत प्रसन्न हो गये और उससे वर माँगनेको कहा। ऊँटने कहा— भगवन्! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे यह वर दीजिये कि मेरी यह गरदन बहुत लंबी हो जाय, जिससे मुझे भोजनके लिये इधर-उधर भटकना न पड़े और मैं एक ही स्थानपर बैठा-बैठा सौ योजन दूरतककी वस्तुओंको भी पा लूँ।

ब्रह्माजीने कहा—'ऐसा ही होगा।' यह मुँहमाँगा वर पाकर ऊँट बहुत प्रसन्न हो गया और वनमें अपने स्थानपर जाकर आरामसे बैठ गया। अब उसे भोजनकी खोजमें कहीं जानेकी जरूरत नहीं पड़ती थी। उसकी गरदन सौ योजन लंबी हो गयी थी, वह बैठे-बैठे ही दूर-दूरतक अपनी गरदन घुमाकर भोजन प्राप्त कर लेता था। दैववश मूर्ख ऊँटने ऐसा वर माँगा जिससे अब वह आलस्यकी मूर्ति बन बैठा। कुछ भी करना उसे अच्छा न लगता और न उसे ऐसी जरूरत ही महसूस होती थी। बैठा-बैठा वह महान् आलसी बन गया था। उसका पुरुषार्थ लुप्त हो गया था।

ऐसे ही कुछ दिन बीते। एक दिनकी बात है वह ऊँट भोजनकी खोजमें अपनी सौ योजन लंबी गरदन इधर-उधर घुमाकर दूर देशमें चर रहा था। उसी समय अकस्मात् जोरकी हवा चलने लगी। तूफान-सा आने लगा। थोड़ी ही देरमें भयंकर वर्षा भी प्रारम्भ हो गयी। वह ऊँट अपनी गरदनको एक गुफाके अंदर डालकर चरने लगा। संयोगसे उसी समय एक सियार और सियारिन भूख और थकानसे व्याकुल हो, साथ ही वर्षासे बचनेके लिये उस गुफाके अंदर प्रविष्ट हुए। वह मांसजीवी सियार भूखसे कष्ट पा रहा था। अकस्मात् वहाँ उसे ऊँटकी गरदन दिखायी पड़ी, फिर क्या था! सियार-सियारिन दोनों साथ-साथ ऊँटकी गरदनको काट-काटकर मांस खाने लगे।
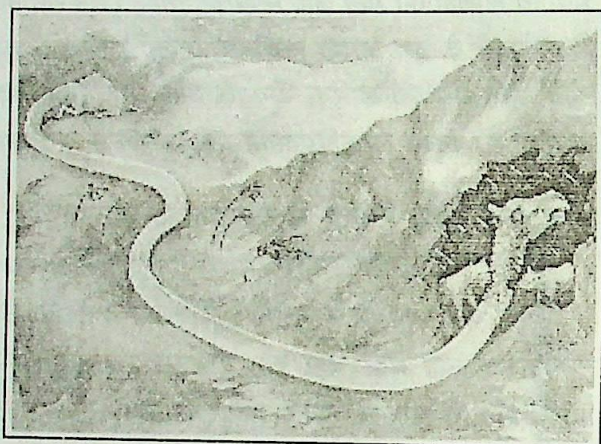
इधर सौ योजन दूर बैठे उस ऊँटको जब अपनी गरदन कटनेका दर्द महसूस हुआ तो वह अपनी गरदन समेटनेका प्रयास करने लगा, परंतु इतनी लंबी गरदन समेटना सम्भव नहीं था। इधर सपरिवार सियार बड़े मजेसे काट-काटकर मांस खाये जा रहा था। गरदनके कट जानेसे ऊँटकी मृत्यु हो गयी। जब थोड़ी देर बाद वर्षा बंद हो गयी तो वह सियार-परिवार गुफासे बाहर निकलकर चला गया।

इस प्रकार आलस्यके कारण ऊँटकी मृत्यु हो गयी। अतः मनुष्यको आलस्य और प्रमादका त्याग करके सदैव पुरुषार्थी बने रहना चाहिये। प्रमाद न करनेवाला मनस्वी व्यक्ति सदा सफलता प्राप्त करता है। जो व्यक्ति जितेन्द्रिय और दक्ष है उसीकी सदा विजय होती है और वह अपने प्रयत्नमें सदा सफल होता है। लौकिक कार्योंमें प्रमादसे दुष्परिणाम होते ही हैं, साधनाके क्षेत्रमें तो प्रमाद एक महान् शत्रुरूप है। (महा०, शान्ति० अ० ११२) इसलिये शास्त्रोंने प्रमाद न करनेकी नीतिका उपदेश दिया है— 'मा प्रमदितव्यम्।'

आराधनाके समय उन लोगोंसे दूर रहो, जो भक्त और धर्मनिष्ठ लोगोंका उपहास करते हों। —श्रीरामकृष्ण परमहंस

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

कल्याण

यस्य निःश्वसितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत्।
निर्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थं महेश्वरम्॥

वर्ष ७६

गोरखपुर, सौर फाल्गुन, वि० सं० २०५८, श्रीकृष्ण-सं० ५२२७, फरवरी २००२ ई०

संख्या २

पूर्ण संख्या ९०३

मार्कण्डेयजीद्वारा भगवान् गौरी-शंकरका दर्शन और उनका अभिवादन

आत्मन्यपि शिवं प्राप्तं तडित्पिङ्गजटाधरम्। त्र्यक्षं दशभुजं प्रांशुमुद्यन्तमिव भास्करम्॥
व्याघ्रचर्माम्बरधरं शूलखट्वाङ्गचर्मभिः। अक्षमालाडमरुककपालासिधनुः सह॥
बिभ्राणं सहसा भातं विचक्ष्य हृदि विस्मितः। किमिदं कुत एवेति समाधेर्विरतो मुनिः॥
नेत्रे उन्मील्य ददृशे सगणं सोमयाऽऽगतम्। रुद्रं त्रिलोकैकगुरुं ननाम शिरसा मुनिः॥

(श्रीमद्भा० १२। १०। ११—१४)

मार्कण्डेय मुनिने देखा कि उनके हृदयमें तो भगवान् शंकरके दर्शन हो रहे हैं। शंकरजीके सिरपर बिजलीके समान चमकीली पीली-पीली जटाएँ शोभायमान हो रही हैं। तीन नेत्र हैं और दस भुजाएँ। लम्बा-तगड़ा शरीर उदयकालीन सूर्यके समान तेजस्वी है। शरीरपर बाघम्बर धारण किये हुए हैं और हाथोंमें शूल, खट्वाङ्ग, ढाल, रुद्राक्ष-माला, डमरू, खप्पर, तलवार और धनुष लिये हैं। मार्कण्डेय मुनि अपने हृदयमें अकस्मात् भगवान् शंकरका यह रूप देखकर विस्मित हो गये। 'यह क्या है? कहाँसे आया?' इस प्रकारकी वृत्तियोंका उदय हो जानेसे उन्होंने अपनी समाधि खोल दी। जब उन्होंने आँखें खोलीं, तब देखा कि तीनों लोकोंके एकमात्र गुरु भगवान् शंकर श्रीपार्वतीजी तथा अपने गणोंके साथ पधारे हुए हैं। उन्होंने उनके चरणोंमें माथा टेककर प्रणाम किया।
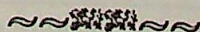
सत्साहित्यमें नीति-मीमांसा

[विशेषाङ्क पृ० ४८८ से आगे]

रामस्नेही संतोंकी रीति-नीति

(रामस्नेही श्रीपुरुषोत्तमदासजी शास्त्री)

हरिया रत्ता तत्व का, मत का रत्ता नाहिं।
मत का रत्ता से फिरै, तहँ तत्व पायो नाहिं॥

उपर्युक्त पंक्तियोंमें रामस्नेही आचार्य-प्रवर श्रीहरिरामदासजी महाराजका मन्तव्य स्पष्ट है कि 'सच्चे संत किसी भी मत-मतान्तर (पन्थ)-के पचड़ेमें नहीं रहते। वे सदैव पक्षपातरहित रहते हुए गुरुद्वारा उपदिष्ट साधनमें मन-वचन-कर्मसे तल्लीन रहा करते हैं। उनके लिये गुरुद्वारा निर्दिष्ट उपदेश, साधन तथा मार्ग आचरणीय रीति-नीति हुआ करते हैं और वे ही रीति-नीतियाँ आत्मोद्धार करने-करानेका आधार बनती हैं।'

सींथल-खेड़ापा रामस्नेही-पद्धतिमें गुरु महाराजसे दीक्षित होते समय शिष्यके लिये आचरणीय (पालनीय) जो बातें बतायी जाती हैं, उनमेंसे कुछ-एकका दिग्दर्शन इस प्रकार है—

१. आडम्बरी परिधानका त्याग

बाह्य आडम्बरको साधनामें बाधक माना गया है। इसे आचारविरुद्ध बताते हुए कहा गया है—

प्रथम तजो तन साँङ्ग[1] वुहारा। नाटक चेटक मन वटपारा[2]॥
रेस केस तें कंचन नाँहीं। पारस दूषण दीजे काँहीं॥

२. धारणीय सहज परिधान

साधकको सहज परिधानमें रहना चाहिये, मनको निर्मल रखना चाहिये, हरि-गुरुमें प्रीति रखनी चाहिये और इसीमें मनको स्थिर भी करना चाहिये—

शुक्ल वर्ण पति आदि सम्प्रदा[3]। निर्मल तन-मन भेद ब्रह्मदा॥
जैमलदास आप गुरु रीती। रहो इसी विध हरिगुरु प्रीती॥
कर्मटाळ चण्डाळ कहीजे। आन-रूप में मन नहिं दीजे॥

३. साधना कहाँ करे?

भगवत्प्राप्तिके लिये कहीं बाहरजानेकी आवश्यकता नहीं है। सच्चे भावसे गुरु—रामके नामका स्मरण करना चाहिये। रामका स्मरण करनेसे राम-पदकी प्राप्ति हो जाती है—

घर वन कारण कदै न जानो। साच भाव गुरु शब्द पिछानो।
राम कहत जन परगट भया। घर वन पख तजि हरिपद लया॥

पाग टोप कारण नहीं, घर वन कारण नाहिं।
रामा सुमरे राम कूँ, मिले रामपद माहिं॥

४. गृहस्थ साधक (पति-पत्नी) क्या अलग-अलग रहें?

बताया गया है कि गृहस्थ साधक घरमें रहता हुआ ही साधना करे। घरमें परिवारके साथ रहते हुए राममें मन लगाकर निर्मल भक्ति करनी चाहिये। स्त्री स्वयंको हरिदासी समझते हुए पति, गुरु तथा भगवान्‌की आज्ञाका प्रसन्नतापूर्वक पालन करे। जिन्हें यह सब प्राप्त हो जाय, वे बड़े भाग्यशाली हैं—

युगल समीप रहो सुखदाई। निर्मल भक्ति करो मन लाई॥
स्वामी सो भृत[4] रक्षा करिहै। हरिदासी पति-आज्ञा धरिहै॥
हरि गुरु पति स्त्री आज्ञा माँही। बड़ो भाग्य जिन भक्ती पाँही॥

५. क्या साधकको उद्यमका परित्याग कर देना चाहिये?

साधकको चाहिये कि वह कर्तव्यकर्मोंका अनुष्ठान करता रहे और संतोषी वृत्तिका पालन करे—

निरहिंसा उद्यम जन करिही। मिले संतोष उदर इम भरही॥

६. अयाची (आकाशीय)-वृत्ति धारण करे

रामस्नेहीको चाहिये कि वह अयाचक-वृत्तिसे रहे और भगवान्‌पर पूर्ण भरोसा रखे—

वृत्ति अजाच सूरमत जाको। एक उपाय भजन चित राखो॥
जाचै[5] नहीं रामजन कबहूँ। प्राण विछोह होय भल अबहूँ॥
राम-भाव सूँ आवै सोई। लेत प्रसाद विचारजु कोई॥

अम्बर दूजै[6] भूँत कमावे, कह्या वचन गुरुदेव।

१. आडम्बरी वेश-भूषा। २. लुटेरे। ३. श्री सम्प्रदाय। ४. सेवापरायण भामिनि। ५. याचना (माँगना)। ६. दुग्ध-वर्षा।

रामदास साँ सो तजौ, करो सन्तां की सेव॥

७. रामस्नेही कौन है?

जो रामसे स्नेह करे, गुरुसे स्नेह करे और साधु-संगति करे वही रामस्नेही है। यह सारा जगत् झूठा है, इससे स्नेह करना बन्धनका हेतु है—

आन सनेह जाळ जग झूठा। जामण मरण काल क्रम कूटा॥
मोह सनेह जनम धर धरना। जाति सनेह चौरासी फिरना॥
काम क्रोध के लोभ सनेही। खान-पान उनमान मिलेही॥
पाँच-पचीच सनेह सनेहा। पञ्च-कोष मध चितवन देहा॥
ऐता नेह तजै रे भाई। एक प्रीति गुरु चरण संभाई॥
रामसनेही जाको नामा। हरि गुरु साध संगति विश्रामा॥

८. एकमात्र 'राम' नामकी उपासना करनी चाहिये

रामस्नेहीके लिये एकमात्र 'राम' नामकी उपासना ही सर्वोपरि है; इसलिये उसे राम-नामका ही मुखसे उच्चारण (कीर्तन) करना चाहिये। राम-नामके जपसे ही तपस्या, संयम, योग, यज्ञ, तीर्थ, व्रत तथा वैराग्य आदि सब सिद्ध हो जाते हैं—

राम भजन बिन मिद्धम सारा। उत्तम सोई राम भज पारा॥
गुरु सा धारण ऐ षट करमा। राम मंत्र है सब को धरमा॥
रैं-भमैं बिच साधन जेता। सांख्य योग नवध्या तप तेता॥
तीरथ ब्रत शुचि यज्ञ आचारा। धर्म अनेक नाम की लारा॥
आन मन्त्र उर सबै बिसारो। राम मन्त्र इक मुखाँ उचारो॥

तपस्या संयम जोग जिग, तीरथ व्रत वैराग।
राम कह्याँ ते सब सजै, जन रामा बड़भाग॥

९. नाम-साधनाका लोक-दिखावा नहीं करना चाहिये

राम भजन एकान्तहि कीजै। और किसी को भेद न दीजै॥
ध्यान एकान्तहि पण[1] सों धरज्यो। जग बकवाद संग मत करज्यो॥
या जग सूँ बकवाद न करना। संयम-नियम देखि पग धरना॥

१०. साधु कौन है?

जो केवल भक्ति करे, भजन करे, नामकी साधना करे और सबका भला करे वही साधु है—

केवल भक्ति साधु सो कहिये॥
साध सुकोमल सुख करण, द्वन्द्व निवारण दूर।
जन हरिया उण सन्त का, नित भेटीजे नूर॥

साध साधना शब्द की, उर अन्तर मुख एक।
हितकारी सबका सजन, रामा ज्ञान विवेक॥

गुरुजनोंकी अनुभव-वाणीसे उद्धृत इन सिद्धान्तोंके अतिरिक्त समय-समयपर गुरुजनोंद्वारा दी जानेवाली आज्ञा-विशेषको भी रामस्नेहीजन कल्याणकारी सिद्धान्तके रूपमें मानकर हृदयङ्गम किये रहते हैं।

आचार्य श्रीद्यालदासजी महाराजकी अनुभव-वाणीसे भी अनेक सिद्धान्त निःसृत हुए हैं, जो बड़े ही मार्मिक और कल्याणकारी हैं। साधकोंके लिये इनका पालन करना विशेष महत्त्वपूर्ण है। यहाँ कुछ बातें दी जा रही हैं—

मिलतां पारख परसिध, बिमल चित रामसनेही।
उर कोमल मुख निर्मल, प्रेम प्रवाह विदेही॥
दरसण परसण भाव, नेम नित श्रद्धा दासा।
साच वाच गुरु ज्ञान, भक्ति प्रणमत इक आसा॥
देह गेह सम्पति सकल, हरि अर्पण परमानिये।
जन रामा मन वच करम, रामसनेही जानिये॥
खान पान पहिरान, निर्मली दशा सदाई।
सात्विक लेत अहार, हिंसा करहै न कदाई॥
नीर छाण तन वरत, दया जीवाँ पर राखे।
बोले ज्ञान विचार, असत कबहूँ नहिं भाखे॥
साधु संगति पणव्रत सुदृढ़, नेम प्रेम दासा लियाँ।
रामसनेही रामदास, तन मन धन लेखे कियाँ॥
श्रद्धा सुमिरण राम, मीन मम रामसनेही।
गुण ग्राही गुणवन्त, लाय लेखे हरि देही॥
अमल तम्बाखू भांग, तजै अमिष मद पानं।
जुआ द्यूत का कर्म, नारि पर माता जानं॥
साच शील क्षम्या गहे, राम-राम सुमिरण रता।
रामा भक्ति भाव दृढ़, रामसनेही ये मता॥

(श्रीद्याल-बाणी छन्दभण)

रामस्नेही संतोंकी अभिव्यक्ति सूनृतावाणीके रूपसे समदर्शनकी प्रवर्तक है। इन रामस्नेही संतोंका लक्ष्य मानसिक दोषोंसे दूर रहते हुए परम विनय एवं शीलको अपनाना तथा जीव-जन्तुमात्रके प्रति सेवाभाव रखना रहता है। रामस्नेहीजन गृहस्थ हो या नैष्ठिक ब्रह्मचारी, जो कुछ भी करता है, उसका बल और आधार एकमात्र 'राम' ही होते हैं।

१. नियम तथा निष्ठापूर्वक।
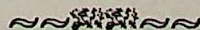
धम्मपदका नीतिदर्शन

(डॉ० श्रीरामकृष्णजी सर्राफ)

किसी भी देश अथवा समाजकी समुन्नति उसकी अपनी लोककल्याणकारी शाश्वत नीतिके निर्धारण एवं तदनुरूप आचरणपर आधारित होती है। विश्वके विभिन्न देशोंके बीच शान्ति एवं सौहार्दकी कल्पना भी उनकी अपनी अन्तः एवं बाह्य नीतिपर अवलम्बित होती है। कभी-कभी एककी महत्त्वाकाङ्क्षा दूसरेके लिये संकटका कारण बन जाती है। उसका कारण स्पष्ट है—आततायी राष्ट्रके द्वारा अपनी महत्त्वाकाङ्क्षाकी पूर्ति-हेतु नैतिक आचारसंहिताका तिरस्कार और उसकी अवहेलना।

इस सम्बन्धमें भारतीय मनीषियोंका नीति-चिन्तन स्पष्ट, व्यापक एवं सर्वदा लोककल्याणकारी रहा है। उसमें राष्ट्र, समाज तथा व्यक्तिके जीवनके प्रत्येक पक्षपर विचार किया गया है। उनके चिन्तनका निचोड़ निम्नांकित सार्वभौम मङ्गलाशंसामें निहित है—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥

इसी उदात्त चिन्तनसे भारतकी धर्मनीति, राजनीति एवं लोकनीति सदा अनुप्राणित रही है। इस देशमें नीति और धर्म एक-दूसरेके निरपेक्ष कभी नहीं रहे। न तो धर्मके बिना नीतिको कभी स्वीकार किया गया और न नीतिके बिना धर्मकी कभी कल्पना की गयी। इस प्रकार हमारे यहाँ नीतिको सदा व्यापक परिप्रेक्ष्यमें देखा गया है।

किसी भी देश अथवा व्यक्तिका चरित्र उसके आचरणमें प्रतिबिम्बित होता है। भारत-भूमिमें शील एवं आचारकी सदैव प्रतिष्ठा रही है। भारतका प्राचीन वाङ्मय नीति, धर्म एवं लोकमङ्गलकी भावनासे ओतप्रोत है। संस्कृत, जैन तथा बौद्ध वाङ्मयमें सर्वत्र नीतिसमन्वित धर्माचरणपर आग्रह है। इस दृष्टिसे भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृतिके प्रतिनिधि ग्रन्थोंमें श्रीमद्भगवद्गीताका विशिष्ट स्थान है। भगवान् पद्मनाभके मुखकमलसे विनिःसृत गीताके वचन किसी भी देश, समाज अथवा सम्प्रदायके लिये समान रूपसे मङ्गलकारी हैं। गीतामें सार्वजनीन, सार्वकालिक सत्य सिद्धान्तोंका प्रतिपादन मिलता है। नीतिके मार्गपर दृढ़तापूर्वक चलनेका उसमें शाश्वत संदेश है। जिस प्रकार संस्कृत वाङ्मयमें गीताकी अतिशय प्रतिष्ठा है, उसी प्रकार बौद्ध परम्परामें धम्मपदकी है।

धम्मपद पालि-साहित्यका अमूल्य ग्रन्थ-मणि है। इसे बौद्धोंकी गीता कहा जाता है। धम्मपद २६ वग्गों (वर्गों)-में विभक्त है तथा इसमें ४२३ गाथाएँ (पद्य) हैं। इन गाथाओंमें भगवान् बुद्धके द्वारा समय-समयपर अपने शिष्योंको दिये गये उपदेश-वचन संकलित हैं। बौद्ध साहित्यमें धम्मपदका अत्यन्त महत्त्व है। इसमें बौद्ध नीतियों एवं सिद्धान्तोंका सारगर्भित विवेचन मिलता है। भारतीय संस्कृतिसम्मत नैतिक आदर्श धम्मपदमें संगृहीत हैं। यह ग्रन्थ भगवान् तथागतद्वारा उपदिष्ट शील एवं आचारका उत्कृष्ट अभिलेख है।

धम्मपदमें नीति, शील, प्रज्ञा तथा निर्वाण आदिका बड़ी सुन्दरतासे वर्णन किया गया है। उसमें मानव-कल्याणका अत्यन्त सहज एवं सुगम मार्ग प्रशस्त है। धर्म एवं नीतिका धम्मपदमें बड़ा सुन्दर प्रतिपादन है, जो मानवमात्रके लिये सर्वथा उपादेय है। इसमें जीवनके लिये अभीष्ट उदात्त गुणोंका सुन्दर विवेचन है, जो भारतीय नीतिदर्शन एवं भारतीय प्रज्ञाके प्राणतत्त्व हैं। हेय गुणोंके परिहारका भी इसमें सार्थक संकेत मिलता है।

धर्मके सम्बन्धमें भगवान् तथागतके बड़े उदात्त विचार हैं। धर्मको वे आचरणसे जोड़ते हुए कहते हैं कि धर्म प्राणीके आचरणमें प्रतिबिम्बित होना चाहिये। धार्मिक वही है, जो धर्माचरणमें कभी प्रमाद नहीं करता। धम्मपदका समग्र नीतिदर्शन इसी धर्मभावनासे परिचालित है—

स वे धम्मधरो होति यो धम्मं नप्पमज्जति॥
स वै धर्मधरो भवति यो धर्मं न प्रमाद्यति॥

(धम्मट्ठवग्गो-४ (गाथा २५९))

शास्ता कहते हैं कि जो पवित्रात्मा है, वह इहलोक तथा परलोक—इन दोनों लोकोंमें आनन्द प्राप्त करता है (गाथा १८)। जो शील एवं सम्यक् दृष्टिसे सम्पन्न, धर्ममें स्थित, सत्यवक्ता और अपना कार्य निष्पादित करनेवाला होता है, लोग उससे प्रेम करते हैं (गाथा २१७)। वह यशस्वी होता है, अपने माता-पिताकी

सेवा-संतुष्टिमें उसे आनन्दकी अनुभूति होती है, श्रमण-भावमें उसे प्रसन्नता प्राप्त होती है तथा निष्कलुष जीवनमें उसे सुख मिलता है। ऐसा मनुष्य निन्दनीय कर्मसे सर्वथा मुक्त रहता है (गाथा ३३२)। शास्ता कहते हैं कि जो कभी क्रोध न करनेवाला, व्रतधर, शीलवान् और संयमी है, उसे मैं ब्राह्मण अर्थात् निष्पाप-जीवन जीनेवाला मानता हूँ (गाथा ४००)। उसकी समग्र शक्ति उसकी क्षमावृत्तिमें निहित होती है—

खन्तिबलं ब्रलानीकं तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं॥

क्षान्तिबलं बलानीकं तमहं वच्मि ब्राह्मणम्॥

(ब्राह्मणवग्गो-१७ (गाथा ३९९))

भगवान् तथागत कहते हैं कि जो धीर पुरुष अपने कार्य, वाणी एवं मनसे संयमवान् हैं, वे ही पूर्णरूपसे संयत हैं—

कायेन संवुता धीरा अथो वाचाय संवुता।
मनसा संवुता धीरा ते वे सुपरिसंवुता॥

कायेन संवृता धीरा अथ च वाचा संवृताः।
मनसा संवृता धीराः ते वै सुपरिसंवृताः॥

(कोधवग्गो-१४ (गाथा २३४))

भगवान् तथागतने अविद्याको परम मल मानते हुए भिक्षुओंको उससे मुक्ति पानेका उपदेश दिया है (गाथा २४३)। असंयत आचरणके दुष्परिणामोंसे उन्होंने सदा सचेत किया है। सद्ग्रन्थोंका पाठ करनेवाले किंतु तदनुरूप आचरण न करनेवालेको भगवान्ने गर्हणीय बतलाया है (गाथा १९)। उन्होंने अप्रमादको प्रशंसनीय एवं प्रमादको सर्वथा निन्दनीय कहा है (गाथा ३०)।

भगवान् बुद्ध कहते हैं कि जिसका चित्त स्थिर नहीं (चंचल) है, जो सद्धर्मको नहीं जानता तथा जिसके मनकी प्रसन्नता अस्थिर है उसकी प्रज्ञा पूर्ण नहीं हो सकती—

अनवट्ठितचित्तस्स सद्धम्मं अविजानतो।
परिप्लवपसादस्स पञ्ञा न परिपूरति॥

अनवस्थितचित्तस्य सद्धर्मं अविजानतः।
परिप्लवप्रसादस्य प्रज्ञा न परिपूर्यते॥

(चित्तवग्गो-६ (गाथा ३८))

किंतु जो अनासक्त, अपरिग्रही, क्षीणतारहित तथा द्युतिमान् हैं वे तो लोकमें निर्वाण प्राप्त कर चुके हैं—

आदानपटिनिस्सग्गे अनुपादाय ये रता।
खीणासवा जुतीमन्तो ते लोके परिनिब्बुता॥

आदानप्रतिनिःसर्गे अनुपादेये ये रताः।
क्षीणास्रवा ज्योतिष्मन्तस्ते लोके परिनिर्वृताः॥

(पण्डितवग्गो-१४ (गाथा ८९))

भगवान् तथागतने आत्मसंयम, आत्मदमन एवं आत्मजयकी प्रशंसा की है (गाथा १०४-१०५), साथ ही उन्होंने श्रद्धा, शील, सत्य एवं प्रिय वाणीकी भी प्रभूत प्रशंसा की है (गाथा १०९, ४०८)।

शास्ताने एक सुन्दर रूपकके माध्यमसे तृष्णा एवं अहंकार आदि दूषणोंपर विजय प्राप्त करनेका संदेश दिया है (गाथा २९४)। मोहको वे जन्म-मृत्युरूपी संसरण-पङ्कमें डुबानेवाला बतलाते हैं (गाथा ४१४)। मूर्ख एवं पण्डितके बीचके भेदको अत्यन्त सरल शब्दोंमें व्यक्त करते हुए भगवान् बुद्ध कहते हैं कि जो मूर्ख अपनी मूर्खताको समझता है, वह तो पण्डित है; किंतु जो मूर्ख होते हुए भी अपनेको पण्डित मानता है वह वास्तवमें मूर्ख है। भगवान्‌के इन वचनोंमें व्यावहारिक नीतिका अत्यन्त गूढ रहस्य समुद्घाटित हुआ है—

यो बालो मञ्ञती बाल्यं पण्डितो चापि तेन सो।
बालो च पण्डितमानी स वे बालोति वुच्चति॥

यो बालो मन्यते बाल्यं पण्डितश्चापि तेन सः।
बालश्च पण्डितमानी स वै बाल इत्युच्यते॥

(बालवग्गो-४ (गाथा ६३))

मेरा पुत्र एवं मेरा धन—इसको लेकर मूर्ख व्यक्ति आसक्ति एवं परिग्रह-भावनाके कारण सदा अस्त-व्यस्त रहता है जब कि सचाई यह है कि जब मनुष्य स्वयं ही अपना नहीं है तो उसके पुत्र और धन यथार्थरूपमें उसके कहाँसे हो सकते हैं (गाथा ६२)? इसीलिये धम्मपदमें मूर्खकी संगतिका सदा निषेध किया गया है (गाथा ६१)।

जो वास्तवमें पण्डित हैं, वे निन्दा अथवा प्रशंसासे कभी नहीं डिगते (गाथा ८१)। क्योंकि पण्डित अथवा ज्ञानी पुरुषको कभी कोई आसक्ति नहीं होती (गाथा १७)। धम्मपदमें आसक्तिका कारण कामनाको बतलाया गया है

(गाथा ३४७)। भगवान् बुद्ध राग, द्वेष एवं तृष्णासे दूर रहनेका उपदेश देते हैं; क्योंकि ये सभी पतनकी ओर ले जाते हैं (गाथा २५१)।

भगवान् बुद्ध सहनशीलता एवं क्षमाशीलताको परम तप कहते हैं (गाथा १८४)। वे कहते हैं कि संसारमें वैरसे वैर कभी समाप्त नहीं होता, प्रत्युत अवैर (मैत्रीभाव)-से वैर शान्त होता है—

न हि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचन।
अवेरेन च सम्मन्ति एस धम्मो सनन्तनो॥

न हि वैरेण वैराणि शाम्यन्तीह कदाचन।
अवैरेण च शाम्यन्ति एष धर्मः सनातनः॥

(यमक वग्गो-५ (गाथा-५))

धम्मपदमें कटुभाषणका निषेध किया गया है (गाथा-१३३)। क्रोध और अभिमानको त्यागनेका परामर्श दिया गया है (गाथा २२२)। क्रोधपर विजय प्राप्त करनेका साधन अक्रोध बतलाया गया है।

भगवान् तथागतने अकर्कश (मृदु), सार्थक एवं उद्वेगरहित सत्य वाणीकी प्रशंसा की है (गाथा ४०८)। विश्वासको सबसे बड़ा मित्र बतलाया है तथा संतोषको परम धन कहा है (गाथा २०४)। भगवान् कहते हैं कि यदि किसीके ऊपर कार्षापणों (मुद्राओं)-की भी वर्षा हो तो भी उसकी एषणाओंकी तृप्ति कभी नहीं हो सकती। सभी काम (भोग) अल्पस्वाद और दुःखद हैं, ऐसा जानकर विद्वान् देवताओंके भोगोंमें भी रति नहीं करता। वास्तविकता तो यह है कि सभी कामनाएँ अन्ततः दुःखदायी होती हैं—

न कहापणवस्सेन तित्ति कामेसु विज्जति।
अप्पस्सादा दुखा कामा इति विञ्ञाय पण्डितो॥
अपि दिब्बेसु कामेसु रतिं सो नाधिगच्छति।

न कार्षापणवर्षेण तृप्तिः कामेषु विद्यते।
अल्पस्वादा दुःखाः कामा इति विज्ञाय पण्डितः॥
अपि दिव्येषु कामेषु रतिं स नाऽधिगच्छति।

(बुद्धवग्गो ८-९ (गाथा-१८६-१८७))

शास्ता कहते हैं कि जो विवेकवान् ऐसा सही हितप्रद उपदेश दे, लोकको सन्मार्ग दिखाते हुए उन्हें कुमार्गसे बचाये वह सत्पुरुषोंको तो प्रिय होता है, किंतु दुर्जनोंको अप्रिय होता है (गाथा ७७)। इसीलिये धम्मपदमें पापप्रिय मित्रों तथा अधम पुरुषोंकी संगति न करनेका उपदेश दिया गया है तथा सन्मित्रों एवं श्रेष्ठ पुरुषोंकी सत्संगति करनेको हितकर बतलाया गया है (गाथा ७८)।

भगवान् तथागतने उसी कर्मको करनेका उपदेश दिया है, जिसे करके अनुताप न करना पड़े एवं जिसके फलकी प्राप्तिमें प्रसन्नता हो—

तञ्च कम्मं कतं साधु यं कत्वा नानुतप्पति।
यस्स पतीतो सुमनो विपाकं पटिसेवति॥

तच्च कर्म कृतं साधु यत् कृत्वा नानुतप्यते।
यस्य प्रतीतः सुमना विपाकं प्रतिसेवते॥

(बालवग्गो-९ (गाथा ६८))

इसीलिये धम्मपदमें स्वयं प्राणि-वध करने अथवा प्राणि-वध करनेके लिये किसी दूसरेको प्रेरित करनेके कृत्यका निषेध किया गया है (गाथा १३०)। हिंसाकर्मसे दूर रहनेवालोंकी प्रशंसा करते हुए भगवान् तथागत कहते हैं कि जो प्रज्ञावान् हिंसासे रहित हैं तथा ब्रह्मोपासना आदि नैत्यिक कार्योंमें संयत हैं, वे उस अच्युत पदको प्राप्त करते हैं, जहाँ जाकर उन्हें शोक नहीं होता—

अहिंसका ये मुनयो निच्चं कायेन संवुता।
ते यन्ति अच्चुतं ठानं यत्थ गन्त्वा न सोचरे॥

अहिंसका ये मुनयो नित्यं कार्येण संवृताः।
ते यन्ति अच्युतं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति॥

(क्रोधवग्गो-५ (गाथा २२५))

धम्मपदमें कहा गया है कि नीतिसम्मत पवित्र आचरणमें ही जीवनकी सार्थकता है। भगवान् बुद्धके द्वारा बतलाये गये मार्गपर चलनेसे निर्वाणकी प्राप्ति होती है। उनके धर्मोपदेशोंमें मानव-जीवनके सर्वाङ्गीण कल्याणका मार्ग प्रशस्त होता है। इन्हीं उपदेशोंमें धम्मपदके नीतिदर्शनकी अभिव्यक्ति है। इस प्रकार धम्मपदमें नीति एवं धर्म परस्पर ताने-बानेके रूपमें अनुस्यूत हैं। उनसे प्रोत—निर्मित निर्मल पट जिसने ओढ़ा, वह कृतार्थ हो गया।

बाइबिलमें नीतिवचन

(श्रीमहावीरसिंहजी यदुवंशी, एम्०ए०, बी० एड्०, आयुर्वेदरत्न)

पुराना नियम

(नीतिवचन ३:१—१५)

हे मेरे पुत्र! प्रभुकी शिक्षासे मुँह न मोड़ना, जब वह तुझे डाँटे, तब तू बुरा न मानना, क्योंकि प्रभु जिससे प्रेम करता है उसको डाँटता भी है, जैसे कि पिता उस पुत्रको ही डाँटता है, जिसे वह अधिक प्यार करता है।

धन्य है वह मनुष्य जो परमेश्वरसे बुद्धि एवं समझ प्राप्त करता है। क्योंकि बुद्धिकी प्राप्ति चाँदीकी प्राप्तिसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और उसका लाभ शुद्ध सोनेके लाभसे भी उत्तम है। वह मूँगेसे भी अधिक मूल्यवान् है। जिन-जिन वस्तुओंकी तू इच्छा करता है, उनमेंसे कोई भी उसके तुल्य न ठहरेगी।

जिनका भला करना चाहिये, यदि तुझमें शक्ति रहे, तो उनका भला करनेसे न रुकना।

यदि तेरे पास देनेको कुछ हो तो अपने पड़ोसीसे कभी यह न कहना कि—'जा कल फिर आना, कल मैं तुझे दूँगा।'

दूसरेको तुच्छ समझनेवालोंको प्रभु तुच्छ समझता है, पर जो मनुष्य नम्र और दीन हैं, उनपर प्रभु अनुग्रह करता है। बुद्धिमान्‌को सम्मान मिलता है, पर मूर्खका हर जगह अपमान होता है।

धर्मी और अधर्मी

(नीतिवचन १२:१—२५)

कोई भी मनुष्य दुष्टताके कारण स्थिर नहीं होता, परंतु धर्मियोंकी जड़ कभी नहीं उखड़ती।

भली स्त्री अपने पतिका मानो मुकुट है, परंतु जो व्यभिचार करती है, वह तो मानो उसकी ही हड्डियोंके सड़नेका कारण बनती है।

धर्मी मनुष्य अपने पालतू पशुके भी प्राणकी सुधि रखता है, परंतु अधर्मीकी दया भी निर्दयता है।

जो किसान अपनी भूमिको जोतता है, वह पेटभर खाता है, परंतु जो निकम्मोंकी संगति करता है, वह निर्बुद्धि ठहरता है। बुरा मनुष्य अपने दुर्वचनोंके कारण जालमें फँसता है, जबकि धर्मात्मा अपने सद्वचनसे बच निकलता है। 'जैसी जिसकी करनी, वैसी उसकी भरनी' होती है।

बिना सोचे-विचारे बोले गये वचन तलवारके समान चुभते हैं, परंतु बुद्धिमान् मनुष्यके वचन घावपर मरहमका काम करते हैं।

सचाई सदा बनी रहेगी, जबकि झूठ पलभरका ही होता है।

षड्यन्त्र रचनेवालोंके मनमें छल-कपट भरा रहता है, परंतु मेल-मिलाप करानेवालोंको आनन्द प्राप्त होता है।

सफल-जीवनके लिये महत्त्वपूर्ण सुझाव

(नीतिवचन २१:१—९)

मनुष्यका सारा आचरण उसे अपनी दृष्टिमें ठीक लगता है, परंतु प्रभु तो मनको जाँचता है।

जो धन झूठके द्वारा प्राप्त हो, वह वायुसे उड़ जानेवाला कुहरा है, उसे ढूँढ़नेवाले मृत्युहीको ढूँढ़ते हैं।

जो उपद्रव दुष्ट लोग करते हैं, उससे उन्हींका नाश होता है, क्योंकि वे न्यायका काम करनेसे इनकार करते हैं।

पापसे भरे हुए मनुष्यका मार्ग बहुत टेढ़ा होता है, परंतु जो मनुष्य पवित्र है, उसका आचरण निष्कपट होता है।

जो मनुष्य गरीबकी दुहाईको अनसुना करता है, वह भी जब सहायताके लिये पुकारेगा, तब उसकी भी दुहाई सुनी न जायगी।

न्यायपूर्ण कार्य करना धर्मी जनोंको आनन्द प्रदान करता है, परंतु अत्याचारीको यही विनाशका कारण जान पड़ता है।

जो मनुष्य राग-रंगमें सदा डूबा रहता है, वह अन्तमें गरीब हो जाता है।

जो मनुष्य धर्म और प्रेममार्गका अनुसरण करता है, वह जीवनमें समृद्धि और सम्मान पाता है।

जो अपने मुँह और जीभको वशमें रखता है, वह अपने प्राणको अनेक विपत्तियोंसे बचा लेता है।

(नीतिवचन २२:१—९)

धनी और निर्धन—दोनों इस बातमें एक-दूसरेके

समान हैं कि प्रभु उन दोनोंका सर्जक है।

नम्रता और प्रभुका भय माननेसे मनुष्यको धन, सम्मान और जीवन प्राप्त होता है।

जो अधर्मका बीज बोता है, वह अनर्थ ही काटेगा और उसके रोषकी छड़ी टूट जायगी।

नया नियम

(मत्ती ५:१—२६)

यीशुने हमको सिखाया है कि हमें किस प्रकारका जीवन व्यतीत करना चाहिये, जो परमेश्वरको प्रिय हो।

परमेश्वरकी दृष्टिमें कौन धन्य है? क्या धनवान् अथवा अहंकारी! नहीं, बल्कि वे लोग जिनके हृदय परमेश्वरकी दृष्टिमें निष्कलंक, निर्दोष एवं पवित्र हैं।

धन्य हैं वे, जो मनके दीन हैं, क्योंकि स्वर्गका राज्य उन्हींका है।

धन्य हैं वे, जो नम्र हैं, क्योंकि वे पृथ्वीके अधिकारी होंगे।

धन्य हैं वे, जो धर्मके भूखे और प्यासे हैं, क्योंकि वे तृप्त किये जायँगे।

धन्य हैं वे, जो दयालु हैं, क्योंकि उनपर दया की जायगी।

धन्य हैं वे, जिनके मन शुद्ध हैं, क्योंकि वे परमेश्वरको देखेंगे।

धन्य हैं वे, जो मेल-मिलाप करते-कराते हैं, क्योंकि वे परमेश्वरके पुत्र कहलायेंगे।

धन्य हैं वे, जो धर्मके कारण सताये जाते हैं, क्योंकि स्वर्गका राज्य उन्हींका है।
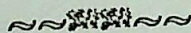
हिंदी कवियोंका नीतिवचनामृत

(ठाकुर श्रीनवलसिंहजी सिसौदिया)

हमारी पावन भारतभूमिमें अनेकानेक महान् विभूतियोंका कविरूपमें भी अवतरण हुआ है। इनमें आदिकवि महर्षि वाल्मीकि, महर्षि वेदव्यास, महात्मा सूरदास, गोस्वामी तुलसीदास, गिरिधरदास, रहीम, कबीर, पण्डित श्रीराधेश्याम, नारायण, मीराबाई, नरसी आदिका नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन महान् विभूतियोंने मानवीय समाजके उत्थान-हेतु अत्यन्त सरल-रोचक-शिक्षाप्रद नीतियाँ दोहे, चौपाई तथा कुण्डली आदिके रूपमें प्रस्तुत की हैं। श्रीरामचरितमानस, गीता आदि ग्रन्थोंमें तो समग्र प्रकारकी नीतियोंका उल्लेख किया गया है या यों कहें कि ये ग्रन्थ तो नीतियोंके महासागर ही हैं।

यदि हम उनका पूर्णरूपसे पालन करें, अपने जीवनमें उनका उपदेश ग्रहण करें तो सुखद लाभ मिलना अवश्यम्भावी है। साथ ही अनाचार, अत्याचार, दुराचार, पापाचार, भाँति-भाँतिके आतंकीय कृत्य आदि अनैतिक बाधाओंसे मुक्ति मिल सकती है।

इसी दृष्टिसे कुछ हिंदी कवियोंके नीतिवचनामृत यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

१-गुरुके प्रति श्रद्धाभावकी नीति

गुरु गोबिंद दोऊ खड़े, का के लागूँ पाँय।
बलिहारी गुर आपने, जिन गोबिंद दिया मिलाय॥
बिनु गुरु होइ कि ग्यान ग्यान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु॥

भाव यह है कि गुरु सर्वदा वन्दनीय हैं। उनकी निरन्तर सेवा-पूजा करनी चाहिये।

२-भक्तिभाव-नीति

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता॥
जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई॥
भगति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा॥

भक्तिके बिना जीवन अधूरा है, अतः ईश्वरभक्ति करते रहनी चाहिये।

३-पुत्रधर्म-नीति

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी॥
तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा॥
चारि पदारथ करतल ताकें। प्रिय पितु मातु प्रान सम जाकें॥

भगवान् राम और भक्तराज श्रवण-जैसा मातृ-पितृभक्त

बालक हर घरमें हो जाय तो रामराज्यकी कल्पना साकार हो सकती है।

४-बड़ोंके प्रति श्रद्धाभाव-नीति

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा॥
उठे लखनु निसि बिगत सुनि अरुनसिखा धुनि कान।
गुर तें पहिलेहिं जगतपति जागे रामु सुजान॥

भगवान् श्रीरामकी भाँति बालकोंको अपनेसे बड़ोंका श्रद्धाभावसे सम्मान करना चाहिये।

५-मधुर भाषणकी नीति

मधुर बचन है औषधी, कटुक बचन है तीर।
श्रवण द्वार ह्वै संचरै, सालै सकल सरीर॥
कबहुँ न भांषिय कटु बचन, बोलिय मधुर सुजान।
जेहि तें नर आदर करे, होय जगत कल्यान॥
तुलसी मीठे बचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर।
बसीकरन इक मंत्र है, परिहरु बचन कठोर॥
ऐसी बाणी बोलिये, मनका आपा खोय।
औरनकौ शीतल करै, आपहु शीतल होय॥
कागा किसका धन हरै, कोयल किसको देय।
मीठे सब्द सुनाय करि, जग अपनो करि लेय॥

बोलचालमें निरन्तर मधुर वचनोंका प्रयोग करना चाहिये। कड़वे वचन क्रोध आनेपर भी नहीं बोलने चाहिये। वाणीपर अंकुश लगाकर सदा मधुर वचनोंका प्रयोग करना चाहिये। वाक्संयम सुखी जीवनका मूल मन्त्र है।

६-परमार्थकी नीति

पानी बाढ़े नावमें, घरमें बाढ़ो दाम।
दोनों हाथ उलीचिये यही सयानो काम॥
यही सयानो काम रामकौ सुमिरण कीजै।
परस्वारथके काज शीश आगे धरि दीजै॥
कह गिरिधर कविराय बड़नकी याही बानी।
चलिये चाल सुचाल राखिये अपनो पानी॥
तरुवर, सरवर, संत जन चौथे बरसे मेह।
परमारथ के कारने, चारौ धारे देह॥
परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥
नर सरीर धरि जे पर पीरा। करहिं ते सहहिं महा भव भीरा॥
करहिं मोह बस नर अघ नाना। स्वारथ रत परलोक नसाना॥
पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया॥
तन मन धन दै कीजिये, निसिदिन पर उपकार।
यही सार नर देह में, बाद-बिबाद बिसार॥

मानवके अन्त समयमें धन आदि कुछ भी साथ नहीं जाता। अत: जीवनमें हर प्राणीका यथाशक्ति उपकार करते रहना चाहिये, तभी जीवन सार्थक हो सकेगा।

७-सत्य-वचन-नीति

धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना॥
साँचे स्राप न लागई, साँचे काल न खाय।
साँचे को साँचा मिलै, साँचे माहिं समाय॥

सत्यकी निरन्तर विजय होती है। अत: जीवनमें सत्यव्रती बनकर आत्मपथ प्रशस्त करना चाहिये।

८-मित्र-धर्म-पालक-नीति

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना॥
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा॥

मित्रको अपने भाईकी तरह ही समझकर उसके साथ व्यवहार करना चाहिये।

९-शरणागत-नीति

सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी। मम पन सरनागत भयहारी॥
सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना। सरनागत बच्छल भगवाना॥
सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि॥

शरणागतकी रक्षा अपने जीवनकी परवा किये बिना भी करनी चाहिये।

१०-सुसंगतिकी नीति

तात स्वर्ग अपबर्ग सुखं धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥
सत संगत में जाइ कै, मन को कीजै सुद्ध।
पलटि उहाँ नहिं जाइये, उपजै जहाँ कुबुद्धि॥
कबिरा संगत साधु की, हरै और की ब्याधि।
संगत बुरी असाधु की, आठों पहर उपाधि॥
साधु संग संसार में, दुर्लभ मनुज सरीर।
सत संगत सूँ मिटत है, त्रिबिध ताप की पीर॥
ग्यान घटे किये मूढ़ की संगत, ध्यान घटे बिन धीरज लाये।

प्रीत घटे परदेस बसे अरु, मान घटे नित ही नित जाये॥
सोक घटे किसी साधु की संगत, रोग घटे कोउ औषधि पाये।
'देव' कहे सुन मानव मेरे पाप घटे सच बात बताये॥

मनुष्य-जीवनमें सत्संगति ही सार तत्त्व है। अस्तु, सत्पुरुषोंका ही संग करना चाहिये।

११-कुसंगकी नीति

बसि कुसंग चाहत कुसल, यह रहीम जिय सोच।
महिमा घटी समुद्र की, रावन बस्यो परोस॥

कुसंगतिसे सदा दूर ही रहना चाहिये।

१२-सबसे मैत्रीकी नीति

तुलसी या संसार में, भाँति भाँति के लोग।
सबसों हिल मिल चालिये, नदी नाव संजोग॥
झगड़ा कबहुँ न कीजिये, सब सन रखियो प्रीति।
झगड़े में घर जात है, सत्य बचन परतीति॥

सबसे हिल-मिलकर रहनेसे सच्चे आनन्दकी अनुभूति होती है।

१३-परमात्माके प्रति आस्था-भावकी नीति

जब दाँत न थे तब दूध दियो, अब दाँत दिये तो अन्न भी दैहैं।
जल में थल में पशु-पक्षिन में, सब की सुधि लेत वो तेरी हु लैहैं॥
जान को देत अजान को देत, जहान को देत वो तो कों भी दैहैं।
रे मन मूरख! सोच करे क्यूँ, सोच करे कछु हाथ न अइहैं॥
मन क्रम बचन राम पद सेवक। सपनेहु आन भरोस न देवक॥
अस अभिमान जाइ जनि भोरे। मैं सेवक रघुपति पति मोरे॥
राम नाम जपते रहो, धरे रहो मन धीर।
कबहुँ तो दीनदयाल के, भनक परैगी पीर॥

प्रभुके चिन्तनमें सदा संलग्न रहना चाहिये। प्रभु बड़े ही दयालु हैं। वे अपने दासकी विनती अवश्य ही सुनते हैं। इस आस्थाकी नीतिके परिपालनसे निश्चिन्तताकी स्थिति प्राप्त हो जाती है।

१४-समय-बद्धताकी नीति

आछे दिन पाछे गये, हरिसे किया न हेत।
अब पछतावा क्या करै, चिड़िया चुग गइ खेत॥
काल करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब।
पलमें परलै होयगी, बहुरि करैगा कब्ब॥
पाव पलकक़ी सुध नहीं, करै काल्हका साज।
काल अचानक मारसी, ज्यों तीतरको बाज॥

तात्पर्य यह कि जो भी कार्य करना हो उसे नियत समयपर ही करना चाहिये।

१५-परस्त्रीके प्रति नीति

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ। मनु कुपंथ पगु धरइ न काऊ॥
मोहि अतिसय प्रतीति मन केरी। जेहिं सपनेहुँ परनारि न हेरी॥
जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना॥
सो परनारि लिलार गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि नाईं॥

पर-स्त्रीसे निरन्तर दूर रहे। उनसे अपनी माता, बहन, तथा पुत्रीके समान ही व्यवहार करे।

१६-सुनीति

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत॥
सुमति कुमति सब कें उर रहहीं। नाथ पुरान निगम अस कहहीं॥
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना॥

कुनीतिको त्यागकर निरन्तर सुनीतिमें रत रहना चाहिये।

१७-कर्म करनेकी नीति

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता॥
करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा॥
चार वेद षट शास्त्रमें बात मिली है दोय।
दुख दीने दुख होत है, सुख दीने सुख होय॥

भाव यह है कि सर्वदा सुकर्म करते रहना चाहिये।

१८-मानवकी मानवके प्रति नीति

जो तू चाहे अरे बावरे मिल जायें भगवान।
तब धर ले मन में इतना ध्यान, धर ले मन में इतना ध्यान॥
क्या गरीब और क्या धनवान, सभी हैं जग में एक समान।
सभी के दुख अपने तू जान, जिसे कहते हैं जन-कल्यान॥
इन्हीं में रहते बावरे भगवान, इन्हीं में बसते भगवान।
बसा ले मन में जन-कल्यान, तुझे मिल जायेंगे भगवान॥

सारार्थ है कि सभीके कल्याणमें निरत रहनेमें सच्ची मानवताके दर्शन होते हैं।

१९-अनासक्त-भावकी नीति

काम क्रोध अरु लोभ मद, मिथ्या छल अभिमान।
इन से मन को रोकिबो, साचो ब्रत है जान॥

मान धाम धन नारि सुत, इनमें जो न असक्त।
परम हंस तिहि जानियै, घरहीं माहिं विरक्त॥
चाह गई चिंता मिटी, मनुआँ बेपरवाह।
जिनको कछू न चाहिये, सोई साहंसाह॥
देह गेह की सुधि नहीं, टूट गयी जन-प्रीति।
'नारायण' गावत फिरे, प्रेम-भरे रसगीत॥
मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझ को सौंपते, क्या लागत है मोर॥

इनका मतलब यह है कि इस संसारमें अनासक्तभावसे रहते हुए सांसारिक इच्छाओंको त्यागनेका प्रयत्न करना चाहिये। क्योंकि तृष्णा कभी शान्त नहीं होती, वह बलवत्तर होती जाती है। यही तृष्णा सभी दुःखोंका मूल है। यह संसार नश्वर है। यहाँकी प्रत्येक वस्तु क्षणिक एवं नाशवान् है। अतः निवृत्ति-धर्मनीतिसे लोक-परलोक दोनों सुधर जाते हैं।

२०-भय-नीति

पूरन भय जगदीश को, जाके मन में होय।
गुपुत प्रतच्छ भीतर बाहिर, पाप करत नहिं कोय॥

सब समय सर्वत्र व्याप्त भगवान्‌के भयसे सर्वदा डरते रहना चाहिये, ताकि जाने-अनजाने किसी भी प्रकारका पाप करनेका अवसर प्राप्त न हो।

२१-दान-नीति

'नारायण' परलोक में, ये दो आवत काम।
देना मुट्ठी अन्न की, लेना भगवत-नाम॥
बाँट खाय हरि को भजे, तजे सकल अभिमान।
'नारायण' ता पुरुष को, उभय लोक कल्यान॥

हमारे पास जो भी कुछ है, उसे मिल-बाँटकर ही ग्रहण करते तथा हरि भजन करते रहना चाहिये।

२२-परदोष-दर्शनकी नीति

बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न दिख्या कोय।
जो दिल खोजा आपना, मुझसे बुरा न कोय॥
दोष पराया देखकर, चले हसंत हसंत।
अपना याद न आवई, जाका आदि न अंत॥

पराये दोषको देखनेका हमें कोई अधिकार नहीं है। हमें तो अपने ही दोषोंको देखना चाहिये। परदोष-दर्शन पतनका मार्ग है, इससे सर्वथा और सर्वदा बचना चाहिये।

२३-मानव-जीवनको सार्थक बनानेकी नीति

ग्रंथ पंथ सब जगत के, बात बतावत तीन।
राम हृदय, मन में दया, तन सेवा में लीन॥
तन मन धन कर कीजिये, निसि दिन पर उपकार।
यही सार नर देह में, बाद बिबाद बिसार॥
चींटी से हस्ती तलक, जितने लघु गुरु देह।
सब को सुख देबो सदा, परम भक्ति है येह॥
तनु पवित्र सेवा किये, धन पवित्र कर दान।
मन पवित्र हरि भजन से, होत त्रिविध कल्यान॥

२४-निन्दकोंके प्रति नीति

निन्दक नियरे राखिये, आँगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करै सुभाय॥

अपनी निन्दा करनेवालोंसे सदा स्नेह करो, उन्हें दुत्कारो नहीं।

२५-सोच-समझकर कार्य करनेकी नीति

बिना बिचारे जो करै सो पीछे पछताय।
काम बिगारै आपनो, जगमें होत हँसाय॥
जगमें होत हँसाय चित्तमें चैन न पावै।
खान पान सन्मान राग रँग मनहिं न भावै॥
कह 'गिरिधर' कविराय दुःख कछु टरत न टारे।
खटकत है जिय माहिं, कियो जो बिना बिचारे॥

बिना सोचे-समझे कोई भी कार्य नहीं करना चाहिये। रावण माँ सीताका हरण करके अपने कुलसहित स्वयं भी नष्ट हो गया था। अतः कोई भी कार्य खूब सोच-समझकर करना चाहिये।

नीतिसार

दो बातन कों भूल मति, जो चाहत कल्यान।
'नारायण' इक मौत कूँ, दूजे श्रीभगवान॥
मगन रहे नित भजन में, चलत न चाल कुचाल।
'नारायण' ते जानिये, ये लालन के लाल॥

उपर्युक्त पंक्तियोंमें वर्णित भावोंको अपने हृदयमें संगृहीत करके भवबाधासे मुक्ति-लाभकर मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। यही मानव-जीवनको सार्थक बनानेका सही एवं सरल मार्ग है।

हिंदी कवितामें वैयक्तिक नीति

(डॉ० श्रीगणेशदत्तजी सारस्वत)

हिंदी काव्यकी अन्य धाराओंकी भाँति नीतिकी धारा भी अक्षुण्ण है। 'नीति' शब्द प्रापणार्थक 'णीञ्' प्रापणे ('नी') धातुसे 'क्तिन्' ('ति') प्रत्यय लगनेसे बना है। जिसका शाब्दिक अर्थ होता है ले जाना (पहुँचाना), प्राप्त करना या कराना, निर्देशन, दिग्दर्शन, प्रबन्धन, आचरण तथा आचार आदि। ऋग्वेदमें इस शब्दका प्रयोग अभीष्ट फलकी प्राप्तिके लिये हुआ है। उसमें मित्र (सूर्य) और वरुणसे प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि वे हमें ऋजु अर्थात् सरल अथवा अकुटिल नीतिसे अभीष्टकी सिद्धि करायें—**'ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान्'** (१।९०।१)। ब्रह्मवैवर्तपुराण (११५।१३)-में 'नीति' को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि जो चर्चा सत्य, हित और परिणाममें सुख देनेवाली है वही नीति है। शुक्रनीति (२।११)-के अनुसार समस्त लोककी स्थिति बिना नीतिके उसी प्रकार असम्भव है, जिस प्रकार देहधारियोंकी स्थिति भोजनके बिना सम्भव नहीं है—**'सर्वलोकव्यवहारस्थितिर्नीत्या विना नहि, यथाऽशनैर्विना देहस्थितिर्न स्याद्धि देहिनाम्।'**

महर्षि वेदव्यास नीतिशास्त्रको इस भूमण्डलका अमृत, उत्तम नेत्र तथा श्रेयप्राप्तिका सर्वोच्च उपाय मानते हैं। समाजको स्वस्थ एवं संतुलित पथपर अग्रसर करने एवं व्यक्तिको धर्म, अर्थ, काम और मोक्षको उचित रीतिसे प्राप्ति करानेके लिये जिन विधि या निषेधमूलक वैयक्तिक और सामाजिक नियमोंका विधान देश, काल एवं पात्रके संदर्भमें किया जाता है, उसे नीति कहते हैं। दूसरे शब्दोंमें व्यवहारकी वह रीति, जिससे अपना हित हो और दूसरोंको कष्ट या हानि न पहुँचे वह नीति कहलाती है। ये वे नियम हैं जिनपर चलनेसे मनुष्यका ऐहिक, आमुष्मिक तथा सर्वविध कल्याण होता है। समाजमें संतुलन और स्थिरता बनी रहती है तथा सभी प्रकारसे अभ्युदयका मार्ग प्रशस्त होता है। भाव यह है कि उचित व्यवहारका नाम नीति है। इसीसे कर्तव्य-अकर्तव्यका बोध होता है। धर्ममें रति तथा अधर्ममें विरति इसी बोधकी देन है।

कुछ विचारकोंने नीतिकाव्य और उपदेशकाव्यमें अन्तर माना है। उनके अनुसार जीवनके परिष्कार तथा मङ्गलके निमित्त उपदेश देना—इन दोनोंका लक्ष्य समानरूपेण है, परंतु नीतिकाव्योंमें सूक्तिका सौष्ठव विद्यमान रहता है जबकि उपदेशकाव्योंमें अर्थकी कल्पनापर आग्रह रहता है।

वास्तविकता यह है कि दोनोंमें पार्थक्यभाव समझना कठिन है। उपदेशकी अन्तरात्मामें नीतिका वास होता है तथा नीति औपदेशिक शक्तिमानोंके द्वारा अभिव्यक्त होती है। दोनोंका ही उद्देश्य है अन्यथाकरण अर्थात् जो जैसा है, उसे वैसा न रहने देना। जो साधु—सत्पुरुष नहीं है, उसे साधु बनानेका प्रयत्न ही अन्यथाकरण है। अन्यथा-करणमें सन्मार्गपर प्रवृत्त होनेका परामर्श रहता है।

विषयभेदके आधारपर नीतिकी सात कोटियाँ बतलायी गयी हैं—(१) वैयक्तिक, (२) पारिवारिक, (३) सामाजिक, (४) आर्थिक, (५) राजनीतिक, (६) इतर प्राणिविषयक तथा (७) मिश्रित। इस लेखमें वैयक्तिक नीतियोंकी ही विशेषरूपसे चर्चा की गयी है।

वैयक्तिकके अन्तर्गत वे नियम आते हैं, जिनके पालनसे जीवन-निर्वाह होना सरल हो जाता है। व्यक्तिको शारीरिक रूपसे स्वस्थ, सबल तथा शक्ति-सम्पन्न होना चाहिये। इस स्थितिमें रहनेपर ही उसके सारे कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। स्वस्थ शरीरके लिये खान-पानपर विशेष रूपसे बल दिया जाना चाहिये। घाघ कविके अनुसार यदि कोई चाहता है कि उसके घरमें वैद्यका पदार्पण न हो तो निम्नलिखित बातोंका पालन करनेमें सावधानी बरते। खान-पानमें देश और कालका ध्यान रखा जाना नितान्त आवश्यक है—

चैते गुड़ बैसाखे तेल। जेठ क पंथ, असाढ़ क बेल॥
सावन साग न भादों दही। क्वार करैला, कातिक मही॥
अगहन जीरा पूसै धना। माघै मिसरी, फागुन चना॥
रहै निरोगी जो कम खाय। बिगरै काम न जो गम खाय॥

प्रातकाल खटिया ते उठिके, पिये तुरंतै पानी।
कबहूँ घर में बैद न अइहैं, बात घाघ कै जानी॥

सूरदासजीका भी यही कथन है कि कम खानेसे आलस्य नहीं आता तथा व्यक्ति सदैव स्वस्थ बना रहता है—

अरु भोजन सो इहि बिधि करै। आधी उदर अन्न सों भरै॥
आधेमें जल वायु समावै। तब तिहिं आलसु कबहुँ न आवै॥

स्वस्थ बननेके लिये शारीरिक बल ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि उसके साथ बुद्धि-बलका होना भी आवश्यक है। जिस छोटेसे अंकुशसे मतवाले हाथी तक वशमें हो जाते हैं, वह बुद्धिकी ही देन है—

सबल न पुष्ट सरीर को सबल तेजयुत होय।
हृष्ट पुष्ट गज दुष्ट ज्यौं अंकुस के बस होय॥

बलवान्-से-बलवान् शत्रु भी बुद्धि-बलके द्वारा वशमें किया जा सकता है।

नीतिकारोंने सत्य वचन तथा मृदु भाषणपर अत्यधिक बल दिया है। सत्य जीवनका वह अकाट्य धर्म है, जिसने मनुष्यको व्यावहारिक तथा सामाजिक जीवनमें प्रतिष्ठा प्रदान की है। साथ ही परलोकका मार्ग भी प्रशस्त किया है। 'मुण्डकोपनिषद्'का उद्घोष है— '**सत्यमेव जयति नानृतम्**' सत्यकी ही विजय होती है असत्यकी नहीं। आचार्य चाणक्य तो यहाँ तक कहते हैं कि—

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः।
सत्येन वाति वायुश्च सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्॥

(चा०नी० ५। १९)

अर्थात् पृथ्वीमें धारण करनेकी क्षमता सत्यसे ही आती है, सत्यके कारण ही सूर्य तपता है, सत्यके बलपर ही वायुका संचरण होता है तथा सर्वस्वकी प्रतिष्ठा सत्यमें ही है। 'श्रीतुलसीदासजी' कहते हैं—

धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना॥

अन्यत्र उनकी अभिव्यक्ति है—

सत्यमूल सब सुकृत सुहाए। बेद पुरान बिदित मनु गाए॥

कबीरकी मान्यता है कि सत्यके बराबर कोई तप नहीं और झूठके बराबर कोई पाप नहीं— *'साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप'*। तथा जिसके हृदयमें सत्यका वास है, भगवान्का वहाँ निवास है— *'जाके हिरदै साँच है, ताके हिरदै आप॥'*

बुधजन कहते हैं कि झूठ नहीं बोलना चाहिये, क्योंकि झूठसे बढ़कर और कोई पाप नहीं है— *'नहिं असत्य सम पातक पुंजा।'* इसलिये उनका आग्रह है कि *'असत बैन नहिं बोलिये तातैं होत बिगार।'*

कवियोंके नीतिवचनोंमें वाणीकी मधुरतापर भी पर्याप्त बल दिया गया है। कबीरका आग्रह है कि— *'ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय। औरन कौं सीतल करै, आपहु सीतल होय॥'* उनकी दृष्टिमें *'मधुर बचन है औषधी कटुक बचन है तीर।'* यह तीर (कटु वचन) प्रवेश तो श्रवण-द्वारसे करता है किंतु सालता है सारे शरीरको— *'श्रवन द्वार ह्वै संचरै, सालै सकल सरीर॥'* कविश्रेष्ठ रहीमका परामर्श है कि— *'मीठे बोलहु नै चलहु।'* मधुर बोलो तथा विनीत आचरण करो। इससे सारा देश तुम्हारा अपना हो जायगा। कवि सम्मन कहते हैं कि मीठी बातसे सभीको भरपूर सुख प्राप्त होता है। जिसने मधुर बोलना नहीं सीखा, उसका और सब कुछ सीखना व्यर्थ है— *'सम्मन मीठी बात सों, होत सबै सुख पूर। मीठो बोल न सीख जो, तेहि सब सीखो धूर॥'* श्रीतुलसीदासजीका आग्रह है— *'तुलसी मीठे बचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर। बसीकरन यह मंत्र है, परिहरु बचन कठोर॥'* ऐसा ही आग्रह कवि वृन्दका है— *'समझै अनसमझै कछुक कहिये मीठी बात।'* यह मीठी बात उसी प्रकार मनको प्रफुल्लित कर देती है, जैसे शिशुकी तोतली वाणी। कबीरके अनुसार वाणी मनका चित्र है। इसीलिये बोलते ही व्यक्तिके मनके भावका पता चल जाता है। मनमें परमात्माका निवास रहता है, कटु वचन बोलनेसे सुननेवालेकी आत्मा दुखती है। इसलिये कटु वचनका प्रयोग नहीं करना चाहिये— *'घट घट में वह साईं रमता कटुक बचन मत बोल रे।'*

लोक-व्यवहारमें 'अति' का सर्वत्र परित्याग करना चाहिये। अतिका बर्ताव नीति-विमुख बात है। कहा गया है कि—

अति का भला न बोलना अति की भली न चूप।
अति का भला न बरसना अति की भली न धूप॥

इसी आशयकी ये पंक्तियाँ हैं—

बहुत अधिक जो बोलते सदा हाँकते डींग।

वे नर पशु साकार हैं, बिना पूँछ औ सींग॥

ऐसे व्यक्ति कुछ समयके लिये भले ही सम्मान प्राप्त कर लें; किंतु अन्ततोगत्वा उपहासके ही पात्र बनते हैं। अन्योक्तिके माध्यमसे कौवेको सम्बोधित करते हुए बिहारी कवि कहते हैं—

दिन दस आदर पाय कै, करिलै आपु बखान।
जौ लौं काग सराध पख, तौ लौं तो सम्मान॥

श्राद्ध-पक्ष समाप्त होते ही तेरा वही हाल हो जायगा जो पहले था।

इसीलिये रसनिधि वाक्-संयमका उपदेश देते हुए कहते हैं कि जब बोलनेके लिये कहा जाय तभी बोलना चाहिये। अन्यथा चुप रहना ही श्रेयस्कर है—

याही तैं यह आदरै, जगत माँह सब कोय।
बोलै जबै बुलाइये, अनबोले चुप होय॥

अप्रासंगिक चर्चा भी अच्छी नहीं होती। जैसे युद्धभूमिमें यदि कोई श्रृंगारका वर्णन करे तो रुचिकर नहीं होता। वृन्दके इस दोहेमें अवसरके अनुकूल कथनको ही उचित बतलाया गया है—

नीकी पै फीकी लगै, बिनु औसर की बात।
जैसे बरनन युद्ध में रस सिंगार न सुहात॥

इसके विपरीत समयानुकूल फीकी बात भी अच्छी लगती है। जैसे विवाहमें स्नेहवर्धनके लिये गायी जानेवाली गालियाँ सभीके मनको हर्षित कर देती हैं—

फीकी पै नीकी लगै, कहिये समय बिचारि।
सबके मन हरसित करै, ज्यौं बिबाह मैं गारि॥

हिंदीके नीतिकारोंने आत्मिक उन्नतिपर पर्याप्त बल दिया है। इस क्रममें उन्होंने उन दोषोंकी भी चर्चा की है, जो आत्मिक उन्नतिमें बाधक हैं। काम, क्रोध, मद, लोभ तथा मोह आदि ऐसे ही दुर्गुण हैं। कबीरकी उक्ति है—

काम क्रोध मद लोभ की, जब लगि घट मैं खान।
कहा मूरख कहा पंडिता, दोनों एक समान॥

तुलसीकी अभिव्यक्ति है—

लोभ के इच्छा दंभ बल काम के केवल नारि।
क्रोध कें परुष बचन बल मुनिबर कहहिं बिचारि॥

कबीरका यह कथन हृदयङ्गम कर लेने योग्य है—

जहाँ काम तहँ राम नहिं, जहाँ राम नहिं काम।
दोनों कबहूँ ना मिलैं, रबि रजनी इक ठाम॥

अहंकार तो पलभरमें ही किये-करायेपर पानी फेर देता है—*'किया-कराया सब गया, जब आया अहँकार॥'* इस अहंकारका परित्याग बड़ा कठिन है। कबीरका यह कथन इसी संदर्भमें है—*'माया तजी तो क्या भया, मान तजा नहिं जाय। जेहि मानै मुनिबर ठगे, मान सबनको खाय॥'* इसी प्रकार लोभ भी पापका मूल है यह सम्मान तथा स्वाभिमानको गहरी ठेस पहुँचाता है—*'लोभ पाप को मूल है, लोभ मिटावत मान।'* इसीलिये कहा गया है—*'लोभ न कबहूँ कीजिये, या में नरक निदान॥'*

बृजराजने इन विकारोंसे मुक्ति पानेके लिये मनको वशमें करना आवश्यक बतलाया है। उनका कहना है कि साधकके लिये ध्येयकी प्राप्ति तभी सम्भव होगी जब उसका मन काम, क्रोध, मद, लोभ तथा मोहपर नियन्त्रण प्राप्त कर लेगा—

फेरे माला सौ सहस तऊ न कछु फल होत।
करे कि दीपक दूर निस ज्यों बिन सूर उदोत॥
ज्यों बिन सूर उदोत जोत जग नाहिं प्रकासे।
जोत जगे तब खेद भेद भ्रम सकल बिनासे॥
सुख समाज 'बृजराज' बसे उर अंतर तेरे।
काम क्रोध मद लोभ मोह इक मन का फेरे॥

कबीर कहते हैं कि जबतक मनका मैल साफ नहीं होगा तबतक नहाना-धोना व्यर्थ है। मछली सदैव पानीमें रहती है, फिर भी उसकी दुर्गन्ध नहीं जाती—*'न्हाये धोये क्या भया, जो मन मैल न जाय। मीन सदा जल में रहै, धोये बास न जाय॥'*

मनकी मलिनताको दूर करना अति आवश्यक है। नीतिके सिद्धान्तोंके अनुपालनसे मनकी निर्मलता सहज ही प्राप्त हो जाती है। मन निर्मल हो जाय, अन्तःकरण पवित्र हो जाय तो फिर आत्मकल्याण स्वयं ही सध जायगा।

संत कवियोंके काव्यमें नीति-तत्त्वका प्रतिपादन

(डॉ० श्रीविद्यानन्दजी ब्रह्मचारी, एम्० ए० (द्वय), बी० एड्०, पी-एच्० डी०, डी० लिट्०)

संतों—महात्माओंकी रचनाओंमें 'नीति' और 'उपदेश'-मूलक उक्तियाँ भी मिलती हैं। भारतीय साहित्यकी यह विशेषता है कि उसने लोकमङ्गलकी भावनासे कवियोंको सदा प्रेरित किया। संस्कृत-साहित्यका नीतिकाव्य बड़ा समृद्ध है। इसमें शुक्रनीति, विदुरनीति, भर्तृहरिनीति तथा चाणक्यनीति आदि ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध हैं।

संत कबीर, रहीम और अन्य संतोंने भी लोक-कल्याण-हेतु नीतिपरक रचनाएँ की हैं। नीतिकार या सूक्तिकार कवियोंकी इस श्रेणीमें वृन्द, बैताल, गिरिधर कविराय, दीनदयाल गिरि आदिको समाहित किया जा सकता है। बैताल के छप्पय, गिरिधरकी कुण्डलियाँ, दीनदयाल गिरिकी सूक्तियाँ—ये सभी जीवनके व्यावहारिक अनुभवसे परिपूर्ण हैं। भक्तोंके नीति-काव्यपर जहाँ आध्यात्मिकताका अधिक प्रभाव है, वहीं वृन्द और गिरिधरकी रचनाओंमें व्यवहार-पक्ष प्रधान है। लोकप्रियताकी दृष्टिसे गिरिधर कविरायको विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई है।

लोकशिक्षा और सदाचारके पोषणके लिये नीतिपरक सूक्तियोंका महत्त्व सर्वाधिक है। यहाँ हिन्दीके कुछ कवियोंका संक्षिप्त परिचय देते हुए उनकी नीति-शिक्षाओंका उल्लेख किया जा रहा है, इनसे लाभ उठाया जा सकता है—

(१) संत कबीर

मध्ययुगीन निर्गुणोपासक संत कवि महात्मा कबीरका व्यक्तित्व किंवदन्तियों और अलौकिकताओंके दुर्भेद्य आवरणसे ऐसा छिपा है कि वास्तविकताको देखना सहज नहीं। प्रवाद है कि जगद्गुरु स्वामी श्रीरामानन्दजीके आशीर्वादसे इनका जन्म संवत् १४५५ तदनुसार सन् १३९८ई० में काशीकी एक विधवा ब्राह्मणीकी कुक्षिसे हुआ था और इनके देहत्यागका समय संवत् १५७५ तदनुसार सन् १५१८ ई० माना जाता है।

कबीरदास एक साधारण जुलाहेके परिवारमें पाले-पोसे गये थे। इन्हें पढ़ने-लिखनेकी सुविधाएँ नहीं मिल पायीं, किंतु अनुभवके बलपर ये इतने बड़े ज्ञानी सिद्ध हुए कि इन्हें एक महापुरुषके रूपमें स्वीकार किया गया। हिंदुओं और मुसलमानोंके आपसी भेद-भावोंको मिटाकर इन्होंने उनको प्रेमके सूत्रमें बाँधनेका प्रयत्न किया और यह बतलाया कि अज्ञानके कारण हम भटकते रह जाते हैं, किंतु हमें ईश्वरकी झलक नहीं मिलती।

कबीरके नामपर जितने ग्रन्थ उपलब्ध हैं, उनकी संख्या लगभग ६० के ऊपर है। इनमें कितने प्रामाणिक हैं, यह कहना असम्भव-सा है फिर भी इनमें सबसे प्रसिद्ध 'बीजक' है जिसमें कबीरदासकी वाणीका मौलिक रूप सबसे अधिक सुरक्षित समझा जाता है। बीजकके तीन भाग हैं—साखी, सबद (शब्द) और रमैनी।

कबीरकी रचनाओंमें प्रधान विषय हैं—ज्ञान, भक्ति और नीति। शेष जो कुछ है वह इन्हींके अङ्ग-रूपमें होकर आया है; जैसे—गुरु-महिमा तथा काम-क्रोध आदिकी निन्दा, सत्संग एवं प्रेम-दया आदिकी प्रशंसा।

यह बात परम्परासे प्रसिद्ध है कि कबीरने स्वामी श्रीरामानन्दजीसे 'राम'-नामकी दीक्षा ली थी; इनके संदेश आज भी अमर हैं। इनका व्यक्तित्व इस बातका प्रमाण है कि शिक्षित और विद्वान् न होनेपर भी साधनाके बलपर कोई महान् ज्ञानी और महात्मा बन सकता है। यहाँ संत कबीरके कुछ नीतिपरक दोहे दिये जा रहे हैं—

प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा जेहि रुचै, सीस देइ लै जाय॥
साईं इतना दीजिए, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय॥
धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कछु होय।
माली सींचै सौ घड़ा, ऋतु आये फल होय॥
तेरा साईं तुझमें, ज्यों पुहुपनमें बास।
कस्तूरीका मिरग ज्यों, फिर-फिर सूँघै घास॥

(२) तुलसीदास

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी भारतके ऐसे संत महापुरुष हुए हैं, जिनके आविर्भावसे भगवद्भक्तिकी धारा सर्वत्र अजस्त्ररूपमें प्रवाहित हो गयी। ये वाल्मीकिजीके अवतार माने जाते हैं। इनके द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस सारे भारतमें पूज्य है। कविताके द्वारा व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और मानवमात्रका कितना बड़ा कल्याण किया जा सकता है और कैसे किया जा सकता है, तुलसीदासजीकी रचनाएँ इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। वस्तुतः ये हिन्दी-गौरवगिरिके

सुमेरु हैं। भारतने इन्हें पाकर अपने जगद्‌गुरु नामको सार्थक किया है। इनका आविर्भाव सं० १५५४ तथा तिरोधान सं० १६८० में हुआ।

सगुणोपासक भगवान् श्रीरामके अनन्य पुजारी संत-शिरोमणि श्रीतुलसीदासजीके द्वारा प्रणीत श्रीरामचरितमानसके दोहों और चौपाइयोंमें तथा उनके अन्य ग्रन्थोंमें भी नीति-शिक्षाकी बहुलता परिलक्षित होती है। उदाहरणार्थ उनके कुछ नीतिपरक दोहे यहाँ प्रस्तुत हैं—

ऊँची जात पपीहरा, नीचो पियत न नीर।
कै यांचें घन स्याम सों, कै दुख सहे सरीर॥
मर्यादा दूरहि रहे, तुलसी किये बिचारि।
निकट निरादर होत है, जिमि सुरसरि वरवारि॥
तुलसी संत सुअंब तरु, फूलि फरहिं पर हेतु।
इतते वै पाहन हनै, उतते वै फल देतु॥
दुर्जन बदन कमान सम, बचन बिमुंचत तीर।
सज्जन उर बेधत नहीं, छमा सनाह सरीर॥
क्रोध न रसना खोलिये, बरु खोलिय तरुवारि।
सुनत मधुर परिनाम हित, बोलिय बचन बिचारि॥
दुर्जन दर्पन सम सदा, करि देखो हिय दौर।
सन्मुख की गति और है, बिमुख भये कछु और॥
नीच निचाई नहिं तजइ, सज्जनहू के संग।
तुलसी चंदन बिटप बसि, बिनु बिष भए न भुअंग॥
अपने नैनन देखि जे, चलहिं सुमति बर लोग।
तिनहिं न बिपति बिषाद रुज, तुलसी सुमति सुजोग॥
रावन रावन को हन्यो, दोष राम कहँ नाहिं।
निज हित अनहित देखु किन, तुलसी आपहि माहिं॥
गो धन गज धन बाजि धन, और रतन धन खान।
जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान॥

(३) रहीम

हिन्दीके मुसलमान कवि अब्दुर्रहीम खानखानाका संक्षिप्त नाम रहीम है। ये अपने समयके वीर योद्धा, कुशल राजनीतिज्ञ, सहृदय कवि और प्रसिद्ध दानी थे। ये सम्राट् अकबरके सेनापति, मन्त्री और नवरत्नोंमेंसे थे। इन्होंने भक्ति और नीतिके दोहोंसे हिन्दी भाषा-भाषियोंको महामन्त्र प्रदान किया है।

रहीमका जन्म सन् १५५६ ई०में लाहौरमें हुआ था। अकबरके अभिभावक बैरम खाँ इनके पिता थे। ये भारतीय संस्कृतिके उपासक तो थे ही, साथ ही अरबी, फारसी, तुर्की, हिन्दी और संस्कृतके अप्रतिम विद्वान् भी थे। इनके दोहे अपनी सरलता और अनुभूतिकी मार्मिकताके लिये अति प्रसिद्ध हैं। कहते हैं, अन्त समयतक इनके यहाँसे किसी याचकको निराश नहीं लौटना पड़ा। रहीमके दोहोंमें मुख्यरूपसे लोक-व्यवहार, नीति, भक्ति तथा अन्य अनुभूतियोंका सुन्दर समन्वय हुआ है—

समय दसा कुल देखि कै, सबै करत सनमान।
रहिमन दीन अनाथ को, तुम बिन को भगवान॥
सबको सब कोऊ करै, राम जुहार सलाम।
हित अनहित तब जानिये, जा दिन अटकै काम॥
रहिमन रिस को छोड़ि कै, करो गरीबी भेस।
मीठो बोलो, नै चलो, सबै तुम्हारो देस॥
रहिमन प्रीति न कीजिए, जस खीरा ने कीन।
ऊपर से तो दिल मिला, भीतर फाँकें तीन॥
रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राखो गोय।
सुनि अठिलैहैं लोग सब, बाँटि न लैहें कोय॥
रहिमन वहाँ न जाइए, जहाँ कपट को हेत।
हम तन ढारत ढेकुली, सींचत अपनो खेत॥
रहिमन वे नर मर चुके, जे कहुँ माँगन जाहिं।
उनसे पहले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहिं॥
ओछो काम बड़े करैं, तौ न बड़ाई होय।
ज्यों रहीम हनुमंत को, गिरिधर कहै न कोय॥
बिगरी बात बनै नहिं, लाख करो किन कोय।
रहिमन बिगरे दूध को, मथे न माखन होय॥

(४) बिहारी लाल

बिहारी-जैसे सुप्रसिद्ध और लोकप्रिय कविकी जीवनीके सम्बन्धमें भी कुछ प्रामाणिक और निश्चयात्मक रूपसे नहीं कहा जा सकता। इनका जन्म संवत् १६६० तदनुसार सन् १६०३ ई० प्रसिद्ध है। ये बड़े ही लोक-चतुर, अनुभवी, अधीत और रसिक थे। इनके ये गुण इनकी कवितामें सर्वत्र झलकते हैं। बिहारीकी एकमात्र रचना सात सौसे कुछ अधिक दोहोंका संग्रह 'बिहारी-सतसई' है, जो कविकी अद्भुत लोकप्रियताका आधार और इस बातका ज्वलन्त प्रमाण है कि किसी कलाकारकी कीर्तिका कारण उसकी रचनाका परिमाण नहीं, बल्कि उसका गुणोत्कर्ष हुआ करता है।

हिन्दीके 'मुक्तक' काव्यकारोंमें बिहारीका स्थान सर्वोच्च है, कारण कि 'मुक्तक' कवितामें जो गुण होना

चाहिये वह बिहारीके दोहोंमें ही अपने चरम उत्कर्षपर पहुँच सका है। इसीसे किसी अज्ञात कविने कहा है—

सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।
देखत में छोटे लगें, घाव करें गम्भीर॥

बिहारीके काव्यमें भाव और भाषाका मणि-काञ्चन-योग हुआ है, इसीलिये इनका काव्य इतना निखर सका है। बिहारीकी भाषाकी पहली और सम्भवत: सबसे बड़ी विशेषता है, उसकी समास-शक्ति यानी थोड़ेमें अधिक कहना—'गागरमें सागर' भर देना।

बिहारीके नीतिपरक दोहे कविकी लौकिक, व्यवहारपटुता और पर्यवेक्षण-शक्तिके परिचायक हैं, जिनमें बाँकापन है, उक्तिका चमत्कार है और है बहुज्ञता। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

कनक कनक तै सौ गुनो, मादकता अधिकाइ।
उहिं खायें बौराइ नर, इहिं पायें बौराइ॥
नर की अरु नल नीर की, गति एकै करि जोइ।
जेतौ नीचौ ह्वै चलै, तेतौ ऊँचौ होइ॥
बढ़त बढ़त संपति सलिल, मन-सरोज बढ़ि जाइ।
घटत घटत सु न फिरि घटै, बरु समूल कुम्हिलाइ॥
मीन न नीति गलीतु ह्वै, जौ धरियै धनु जोरि।
खाएँ खरचैं जौ जुरै, तौ जोरियै करोरि॥
चटक न छाँड़त घटत हूँ, सज्जन नेह गँभीरु।
फीकौ परै न बरु फटै, रँग्यौ चोल रँग चीरु॥
कोटि जतन कोऊ करौ, परै न प्रकृतिहिं बीच।
नल-बल जल ऊँचैं चढ़ै, अंत नीच कौ नीच॥

(५) वृन्द

कविवर वृन्द अपने दोहोंके लिये हिन्दी-साहित्यमें रहीमकी तरह ही प्रसिद्ध हैं। इनके दोहोंमें नीति और शिक्षाकी बातें भरी हुई हैं जो जीवनके व्यावहारिक क्षेत्रोंके लिये बड़ी उपयोगी सिद्ध होती हैं।

जोधपुरके मेड़ता नामक स्थानके निवासी कवि वृन्दके सम्बन्धमें इतना ही ज्ञात है कि इन्होंने सन् १७०४ ई०में 'वृन्द-सतसई' नामक नीति-विषयक ग्रन्थकी रचना की थी। कवि वृन्दका जन्म १६८५ ई०में हुआ था। ये कृष्णगढ़ नरेश महाराज सिंहके गुरु और औरंगजेबके समकालीन थे।

कवि वृन्द सूक्तिकारके रूपमें ही प्रसिद्ध हैं। इनके प्रत्येक दोहेमें जीवनका अनुभव तथा ज्ञान भरा हुआ है। जन-साधारणके लिये इनका विशेष महत्त्व है। इनकी भाषा सरल और सरस है। जैसे—

कुल सपूत जान्यौ परै, लखि सुभ लच्छन गात।
होनहार बिरवान के, होत चीकने पात॥
कबहूँ प्रीति न जोरिये, जोरि तोरिये नाहिं।
ज्यों तोरे जोरे बहुरि, गाँठि परत मन माहिं॥
जामें हित सो कीजिये, कोऊ कहै हजार।
छल बल साधि बिजय करी, पारथ भारत वार॥
मधुर वचन ते जात मिट, उत्तम जन अभिमान।
तनक सीत जल सौं मिटै, जैसे दूध उफान॥
अपनी पहुँच बिचारि कै, करतब करिये दौर।
तेते पाँव पसारिये, जेती लाँबी सौर॥
उत्तम विद्या लीजिये, यदपि नीच पै होय।
परो अपावन ठौर में, कंचन तजत न कोय॥
मूरख को हित के बचन, सुनि उपजत है कोप।
साँपहि दूध पिवाइये, वाके मुख बिष ओप॥
जहाँ सजन तहँ प्रीति है, प्रीति तहाँ सुख ठौर।
जहाँ पुष्प तहँ वास है, जहाँ वास तहँ भौंर॥
सेवक सोई जानिये, रहै बिपति में संग।
तन छाया ज्यों धूप में, रहै साथ इक रंग॥
काहू को हँसिये नहीं, हँसी कलह को मूल।
हँसी ही ते है भयो, कुल कौरव निरमूल॥
सुनिये सबही की कही, करिये सहित बिचार।
सर्व लोक राजी रहै, सो कीजै उपचार॥
करत-करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें, सिल पर परत निसान॥

(६) बैताल

रीतिकालीन रीतिमुक्त कवियोंमें बैतालका नाम आदरके साथ लिया जाता है। इनका जन्म संवत् १७३४ तदनुसार १६७७ ई०में हुआ था। ये विक्रम शाहके दरबारी कवि थे। इन्होंने अपने छन्द उन्हींको सम्बोधित करके बनाये हैं।

बैतालके थोड़े-से स्फुट छन्द ही प्राप्त हैं, जिनके आधारपर यह कहा जा सकता है कि ये नीति-सम्बन्धी काव्यकी रचनामें पटु थे। इन्होंने कवि गिरिधररायके समान ही कुण्डली छन्दमें और सर्वथा अलंकृत भाषामें आचार-व्यवहार तथा नीति-सम्बन्धी पद्य रचे हैं। इनकी नीति-विषयक रचनाएँ अत्यन्त हृदयग्राही हैं। जैसे देखें—

टका करै कुलहूल, टका मिरदंग बजावै।
टका चढ़ै सुखपाल, टका सिरछत्र धरावै॥

टका माय अरु बाप, टका भैयन को भैया।
टका सास अरु ससुर, टका सिर लाड़ लड़ैया॥
अब एक टके बिनु टकटका रहत लगाये रात दिन।
'बैताल' कहै विक्रम सुनो धिक जीवन एक टके बिन॥
पग बिन कटै न पंथ बाहु बिन हटै न दुर्जन।
तप बिन मिलै न राज भाग्य बिन मिलै न सज्जन॥
गुरु बिन मिलै न ज्ञान द्रव्य बिन मिलै न आदर।
बिना पुरुष सिंगार मेघ बिन कैसे दादुर॥
'बैताल' कहै विक्रम सुनो, बोल बोल बोली हटे।
धिक्क धिक्क ये पुरुष को मन मिलाइ अन्तर कटे॥
ससि बिन सूनी रैन ज्ञान बिन हिरदै सूनो।
कुल सूनो बिनु पुत्र पात बिन तरुवर सूनो॥
गज सूनो इक दंत सलिल बिन सागर सूनो।
विप्र सून बिन वेद और बिन पुहुप बिहूनो॥
हरिनाम भजन बिन संत अरु घटा सून बिन दामिनी।
'बैताल' कहै विक्रम सुनो पति बिन सूनी कामिनी॥

(७) गिरिधर कविराय

गिरिधर कविराय जितने ही लोकप्रिय नीति-कवि हैं, उतने ही जीवनवृत्तकी दृष्टिसे अज्ञातप्राय। इनका जन्म संवत् १७७० तदनुसार १७१३ ई०में माना जाता है।

हिन्दी-भाषी प्रदेशोंके अशिक्षित ग्रामीणोंतकको इनकी नीति-विषयक कुण्डलियाँ कण्ठाग्र रहती आयी हैं। इन्होंने वृन्दकी तरह अपनी नीति-विषयक उक्तियोंको उपमा आदि अलंकारोंद्वारा कवित्वपूर्ण बनानेके प्रयासके बदले शिक्षाप्रद बातें दो टूक भाषामें कह दी हैं। प्राचीन कवियोंमें गिरिधरकी कुण्डलियाँ अति प्रसिद्ध हैं। जिस प्रकार हिन्दी कविता कवित्तों, सवैयों, दोहों और चौपाइयोंमें अपना मधुर रूप प्रदर्शित करती है, उसी प्रकार छः पंक्तियोंवाली कुण्डलियोंद्वारा भी अपना चमत्कार दिखलाती है।

गिरिधर कविरायकी नीतिकी कुण्डलियाँ ग्राम-ग्राममें प्रसिद्ध हैं। उनमें सीधी-सादी भाषामें तथ्य-मात्रका कथन है। इसलिये ये कोरे सूक्तिकार ही हैं, पद्यकार नहीं। वृन्द और इनमें यही अन्तर है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

यही सयानो काम, राम को सुमिरन कीजै।
परस्वारथ के काज, सीस आगे धरि दीजै॥
कह गिरिधर कविराय बड़ेन की याही बानी।
चलिये चाल सुचाल, राखिये अपनो पानी॥

साईं अपने चित्त की भूलि न कहिये कोइ।
तब लग मन में राखिये, जब लग कारज होइ॥
जब लग कारज होइ, भूलि कबहूँ नहिं कहिये।
दुरजन हँसे न कोइ, आप सियरे ह्वै रहिये॥
कह गिरिधर कविराय बात चतुर के ताईं।
करतूती कहि देत, आप कहिये नहिं साईं॥
साईं समय न चूकिये, यथाशक्ति सन्मान।
को जाने को आइ है, तेरी पौरि प्रमान॥
तेरी पौरि प्रमान, समय असमय तकि आवै।
ताको तू मन खोलि, अंक भरि हृदय लगावै॥
कह गिरिधर कविराय सबै यामैं सधि आई।
सीतल जल फल फूल, समय जनि चूकौ साईं॥

(८) दीनदयाल गिरि

बाबा दीनदयाल गिरि गोसाईं थे। इनका जन्म शुक्रवार वसन्त पञ्चमी संवत् १८५९ वि० को काशीके गायघाट मुहल्लेमें एक पाठक-कुलमें हुआ था। जब ये पाँच-छः वर्षके थे तभी इनके पिता इन्हें महंत कुशागिरिको सौंपकर चल बसे। महंतजीके साथ रहकर इन्होंने संस्कृत और हिन्दीका अच्छा ज्ञान प्राप्त किया और फिर कविता करने लगे। इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अन्योक्ति कल्पद्रुम' का हिन्दी-साहित्यमें विशेष सम्मान है। इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं—(१) अनुराग-बाग, (२) वैराग्य-दिनेश, (३) विश्वनाथ-नवरत्न और (४) दृष्टान्त-तरंगिणी आदि। 'दृष्टान्त तरंगिणी'-में नीति-सम्बन्धी दोहे हैं। बाबाजीकी लौकिक और आध्यात्मिक सूक्तियाँ प्रसिद्ध रही हैं। इनकी नीतिके दोहोंमें इनका अनुभव व्यक्त हुआ है, एक उदाहरण प्रस्तुत है—

चल चकई तेहि सर विषै, जहाँ नहिं रैन-विछोह।
रहत एक रस दिवस ही सुहृद हंस संदोह॥
सुहृद हंस संदोह कोह अरु द्रोह न जाको।
भोगत सुख-अंबोह मोह-दुख होय न ताको॥
बरनै दीन दयाल भाग बिन जाय न सकई।
पिय मिलाप नित रहै, वाहि सर चल तू चकई॥

इस प्रकार संत कवियोंकी नीतिपरक उक्तियाँ न केवल धार्मिक लोगों—साधकोंके जीवनके लिये उपादेय एवं हितकारक हैं, बल्कि सामान्य लोगोंके लिये भी अनुकरणीय हैं। इन नीतियोंका पालन और अनुसरण करके मानव अपने जीवन, समाज तथा देशको सुखमय बना सकते हैं।
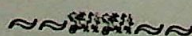
महाकवि विद्यापति एवं उनका नीतिग्रन्थ—पुरुष-परीक्षा

(डॉ० श्रीचन्द्रभूषणजी झा, वेद-साहित्याचार्य)

मिथिला नगरी एक सांस्कृतिक धरोहरके रूपमें प्रसिद्ध है। इसे समृद्ध करनेमें राजर्षि जनक-जैसे योगी, गौतम-जैसे नैयायिक एवं महर्षि याज्ञवल्क्य-जैसे धर्मशास्त्रीके अतिरिक्त अनेक विद्वानोंका योगदान सतत प्राप्त होता रहा है। इसी परम्परामें महाकवि विद्यापति भी एक जाज्वल्यमान नक्षत्रकी भाँति स्थित हैं।

वास्तवमें अभिनव जयदेव महाकवि विद्यापति बड़े ही भाग्यशाली कवियोंमेंसे एक हुए हैं। जिन्हें प्रकृति नटीकी रम्य रंगस्थली, मिथिला-सी जन्मभूमि तथा सद्गुणसम्पन्न महाराज शिवसिंहके समान आश्रयदाता मिले। इनके पितामह जयदत्त एवं पिता गणपति ठाकुर थे, जो राजपण्डित थे। इस तरह इन्हें पाण्डित्य एवं शास्त्रज्ञान उत्तराधिकारके रूपमें प्राप्त हुआ। यद्यपि इन्होंने अभिनव जयदेव, कविशेखर, कविकोकिल एवं महाकवि इत्यादि अनेक उपाधियाँ भी प्राप्त की थीं, फिर भी ये 'कविकोकिल'-के नामसे ही विशेष सुपरिचित एवं सुविख्यात हुए।

इनके जन्म-समयके सम्बन्धमें मतान्तर रहा है। अधिकतर विद्वानोंके अनुसार इनका समय १३५० ई० से १४५० ई० के मध्य माना गया है।

महाकवि विद्यापति बाल्यकालसे ही काव्य-विनोदी एवं मेधावी थे। म० म० पं० हरिमिश्र इनके गुरु तथा गीतगोविन्दकार जयदेव एवं पक्षधरमिश्र इनके सहपाठी थे। बचपनसे ही मिथिलाके राजदरबारमें प्रवेश होनेके कारण इनमें नीतिज्ञानका होना स्वाभाविक था। इनकी रचनाओंमें—१-पदावली, २-कीर्तिलता, ३-कीर्तिपताका, ४-पुरुष-परीक्षा, ५-मणिमञ्जरी, ६-गोरक्षविजय (नाटक), ७-लिखनावली, ८-शैवसर्वस्वसार, ९-शैवसर्वस्वसार-प्रमाणभूत-पुराण-संग्रह, १०-गङ्गावाक्यावली, ११-दानवाक्यावली, १२-विभागसार, १३-दुर्गाभक्तितरङ्गिणी, १४-व्याडीभक्तितरङ्गिणी, १५-गयापत्तलक, १६-वर्षकृत्य, १७-प्रश्नोत्तर-मालिका, १८-ज्योतिस्सार-समुच्चय तथा १९-चिकित्साञ्जन इत्यादि मुख्य हैं। इनमें भी मैथिलीमें रचित 'पदावली' से इनको विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई। कीर्तिलता तथा कीर्तिपताका अवहट्ठमें रचित हैं। शेष सब संस्कृत भाषामें है।

महाकवि विद्यापतिने तत्कालीन मिथिलाके महाराज शिवसिंहके आदेशानुसार 'पुरुष-परीक्षा' नामक दण्डनीति-विषयक ग्रन्थकी रचना की। पुरुष-परीक्षा सर्वथा सार्थक नाम है। इसमें प्रतिपादित युक्तियोंके द्वारा पुरुषोंका वास्तविक परिचय प्राप्त होता है।

विद्यापतिकी धारणा है कि पुरुष तो सभी होते हैं, किंतु वास्तविक पुरुष वे ही हैं, जिनमें पौरुष विद्यमान हो। पुरुषमें वीरता, विद्या एवं बुद्धि हो तथा इनके माध्यमसे उसके धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष—जीवनके इन चारों पुरुषार्थोंको प्राप्त करनेकी क्षमता हो। जो इनसे भिन्न हैं वे पुरुषका आकारमात्र धारण करनेवाले हैं। वे पुरुष नहीं अपितु पूँछरहित पुरुषाभास हैं—

वीरः सुधीः सुविज्ञश्च पुरुषः पुरुषार्थवान्।
तदन्ये पुरुषाकाराः पुरुषाः पुच्छवर्जिताः॥

(पु० प० प्र० ९)

'पुरुष-परीक्षा' में नीति-कथाओं एवं युक्तियोंके द्वारा पुरुषके लक्षणोंका वर्णन किया गया है। ग्रन्थकार इस ग्रन्थके चार प्रयोजन इस प्रकार बताते हैं—(१) कोमलमतिके बालकोंको नीति-शिक्षा देना, (२) सहृदयजनोंको मनोविनोद प्राप्त कराना, (३) राजनैतिक जटिलताओंका उदाहरणोंद्वारा स्पष्टीकरण करना तथा (४) वाग्वैदग्ध्यको गुणशाली बनाना। यह ग्रन्थ बहुत अंशोंमें 'हितोपदेश' तथा 'पञ्चतन्त्र' के समान है। किंतु अन्य ग्रन्थोंकी नीतिकथाओं तथा पुरुष-परीक्षाकी कथाओंमें स्वल्प भेद है। अन्य नीति-कथाओंमें जहाँ पशु-पक्षीके मार्मिक चरित्र, काल्पनिक कथा एवं अद्भुत अस्वाभाविक चरित्रों तथा घटनाओंका वर्णन हुआ है, वहीं प्रस्तुत ग्रन्थमें मानवीय कथाएँ वर्णित हैं, जो बड़ी ही तथ्यमूलक, स्वाभाविक तथा रसात्मक हैं।

पुरुष-परीक्षा चार परिच्छेदोंमें विभक्त है। पुरुष-लक्षणोंके अनुसार प्रथममें वीर, द्वितीयमें सुबुद्धि, तृतीयमें सविद्य एवं चतुर्थ परिच्छेदमें चारों पुरुषार्थोंकी कथाओंका वर्णन है।

इस ग्रन्थमें समष्टि रूपसे छोटी-बड़ी सभी प्रकारकी ४४ कथाएँ गुम्फित हैं, जो उत्तम-मध्यम तथा अधम प्रकृतिवाले मनुष्योंके सदाचार-दुराचार आदि क्रिया-कलापों, मानव-जीवनके प्रयोजनों और धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष आदिका विशद एवं सजीव वर्णन करती हैं। इनमें कुछ कथाएँ ऐतिहासिक, कुछ आनुश्रुतिक तथा कुछ

सामयिक घटनाओंपर आश्रित हैं। इसमें महामात्य चाणक्य, चन्द्रगुप्त, शकटार, राक्षस, विक्रमादित्य, भोज, लक्ष्मणसेन, नरसिंह इत्यादि राजपुरुषों, शबरस्वामी, वराहमिहिर, विशाखदत्त, श्रीहर्ष, कोक, चण्डेश्वर इत्यादि विद्वज्जनों तथा बोधिदास, कृष्णचैतन्य आदि गृहस्थ संतोंकी नीतिपरक कथाएँ आयी हैं। भारतके विभिन्न भागोंसे सम्बद्ध कथाओंके कारण इसका भौगोलिक परिवेश भी विस्तृत है, जिनमें मिथिलासे सम्बद्ध ८, बंगालसे ६, कुसुमपुर (पाटलिपुत्र)-से ३, धारानगरीसे ३, योगिनीपुर (दिल्ली)-से २, गोरखपुरसे २ एवं शेष १४ कथाएँ द्वारका, वाराणसी, मथुरा, अयोध्या, काञ्ची, कौशाम्बी, मेवाड़-प्रभृति विभिन्न स्थानोंके वर्णनोंसे सम्बद्ध हैं। सभी कथाएँ रोचक, बुद्धिचातुर्यपूर्ण तथा लोकस्वभावकी परिचायक हैं। इस ग्रन्थसे लोक-व्यवहारका सम्यक् अवज्ञान होता है।

न्याय-व्यवहार, वर्णाश्रमानुकूल आचार-विचार, गृहस्थ एवं संन्यासीका धर्म, धूर्त-वेश्या आदिका कूट-कपट, युद्धकी व्यूह-रचना, गुप्तचरोंकी कूटनीति, चोर, लम्पट इत्यादिका चाल-चलन तथा उससे बचनेके उपाय आदि अन्य कई लोकरीति-नीतिका ज्ञान हो जाता है। विषयवस्तु आख्यानशैलीमें प्रतिपादित होनेसे सहज ही प्रबुद्ध हो जाती है।

यहाँ नीति-ज्ञानकी एक कथा दी जा रही है—

कुसुमपुरमें नन्द नामका एक राजा था। उसके मन्त्रीका नाम था शकटार। किसी कारणवश मन्त्री और राजामें विरोध हो गया। फलस्वरूप राजाने मन्त्री शकटारकी सभी सम्पत्तियोंको जब्त करके समस्त परिवारजनोंके साथ उसे कारागारमें बंद करवा दिया। राजाकी ओरसे शकटारसहित समस्त परिवारको आहारके रूपमें आधा पाव सत्तू मिलता था, जो कि एक व्यक्तिकी क्षुधाको शान्त करने योग्य भी नहीं था। परिवारके सभी सदस्योंने विचार किया कि राजासे बदला लेनेके लिये शकटारकी प्राण-रक्षा आवश्यक है, अतः इस आहार (सत्तू)-को लेकर शकटार जीवित रहें एवं राजा नन्दका प्रतिकार करें। कालान्तरमें शकटारके परिवारके सभी सदस्य अन्न-जलके अभावमें काल-कवलित हो गये, किंतु शकटार बदला लेनेकी प्रतीक्षामें जीवित बना रहा। मन्त्री तो वह राजाका था ही। अतः कभी-कभी राजाकी अनेक समस्याओंको वह अपने बुद्धिचातुर्यसे परोक्षरूपमें सुलझा दिया करता था। राजाको जब यह ज्ञात हुआ कि शकटार अभी जीवित है एवं उसने ही इन समस्याओंका समाधान किया है तो प्रसन्न होकर राजा नन्दने शकटारको बन्धनमुक्त कर अपने प्रधान अमात्य राक्षसके सहायकके रूपमें नियुक्त कर दिया।

शकटार दुर्लभ पद पाकर प्रसन्न हुआ, साथ ही राजाकी दुर्नीतिपर इस प्रकार विचार भी करने लगा—

उत्कटं वैरमुत्पाद्य पुनः सौहृदमिच्छति।
यमपत्तनयात्रायाः स पन्थानमवेक्षते॥

(पु० प० १९।२२)

अर्थात् पहले प्रबल वैर बाँधकर फिर उससे जो मित्रताकी इच्छा करता है, वह मानो यमपुरीके मार्गकी ओर ही देखता है।

शकटारने निश्चय किया कि यह दुष्टात्मा राजा विश्वासके योग्य नहीं है। क्योंकि—

दृष्टा वैरक्रिया यस्य परापर्यन्तपातिनी।
तस्मिन् विश्वासमायान्तं मृत्युर्जिघ्रति मस्तके॥

(पु० प० १९।३)

जिसका पहले शत्रुतापूर्ण व्यवहार देखा गया हो उसपर विश्वास करना मानो मृत्यु उसका मस्तक सूँघ रही है।

पूर्वकी शत्रुता एवं वर्तमानकी प्रसन्नतासे शकटार संदेहमें पड़ गया। उसने सोचा—मेरे परिवारके सभी सदस्योंने राजा नन्दसे बदला लेनेके निमित्त अपना-अपना आहार त्यागकर मेरे प्राण बचाये। अब यही उचित अवसर है, क्यों न उस वैरका बदला ले लूँ। अवसर पाकर बदला नहीं लेनेसे समाजमें अपयश तो होगा ही, साथ ही मैं कायर भी कहलाऊँगा। कहा भी गया है—

पापात् त्रस्यति यः स एव पुरुषःस्यादुत्तमो भूतले
पापात्मा च बिभेति योऽपयशः स ज्ञायते मध्यमः।
त्रासो यस्य न पापादपि न वा लज्जापवादादपि
प्रज्ञावद्भिरुदाहृतोऽयमधमः सर्वत्र निन्दास्पदः॥

अर्थात् इस पृथ्वीपर जो हमेशा पापसे डरता रहता है (फलस्वरूप उत्तम कार्योंको करता है), वह उत्तम कोटिका पुरुष है। जो मात्र अपयशके डरसे पाप नहीं करता वह पापात्मा मध्यम कोटिका पुरुष है। इसके विपरीत जो न तो पापसे डरता है, न लज्जासे डरता है और न लोकापवादसे डरता है, उसे विद्वानोंने अधम कोटिका पुरुष कहा है, वह सर्वत्र निन्दाका पात्र बनता है।

इस प्रकार नीतिपर विचार करता हुआ शकटार नगरके

बाहर भ्रमण करने चला गया। उसने भ्रमण करते हुए देखा कि एक ब्राह्मण-बालक कुशाको उखाड़कर उसकी जड़में तक्र डाल रहा है। यह देखकर मन्त्री शकटारने पूछा ब्राह्मण! तुम कौन हो और यहाँ क्या कर रहे हो? उसने उत्तर दिया— मैं चाणक्यशर्मा नामका ब्राह्मण हूँ। अङ्गोंसहित वेदोंका अध्ययन करके विवाहार्थ इधरसे जाते हुए मेरे पाँवमें यह कुशाङ्कुर चुभ गया। इस घावके फलस्वरूप मेरा विवाह बाधित हुआ। मैंने क्रोधित होकर प्रतिज्ञा की है कि इस स्थलसे कुशोंको ही निर्मूल कर दूँगा। मैंने आयुर्वेदशास्त्रमें ऐसा पढ़ा है कि कुशकी जड़में तक्र डालनेसे कुशका नाश हो जाता है, इसपर शकटारने पूछा—'यदि तुम वृक्षायुर्वेद नहीं जानते तो इसके विनाशका क्या उपाय करते?'

चाणक्यने उत्तर दिया कि अभिचार-कर्मके द्वारा कुशके विनाशकी कामनासे हवन करता।

शकटार उस ब्राह्मण बालकके प्रतिशोधकी भावना एवं उपायोंको जानकर चकित हो गया। वह सोचने लगा कि यदि यह ब्राह्मण किसी उपायसे मेरे शत्रु अर्थात् राजा नन्दका भी शत्रु हो जाय तो मुझे वैर-भावका बदला लेनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। यह विचारकर शकटार उस ब्राह्मणके अनुकूल बातें करता हुआ उसे अपने घर ले आया और राजपुरोहितसे मिलकर बड़ी ही युक्तिसे उसने राजा नन्दके पिताके क्षयाह-श्राद्धमें ब्राह्मण-भोजनके रूपमें चाणक्यको निमन्त्रित करवाया। शकटारने सोचा कि अविवाहित, कपिशवर्ण, काले-काले नख तथा दाँतवाले एवं मेरे द्वारा निमन्त्रित इस ब्राह्मणको देखकर मेरा विरोधी मन्त्री राक्षस इसको श्राद्ध-भोजनके अयोग्य समझकर अपमानित करेगा और हुआ वही। राजा नन्द श्राद्धके आसनपर पहुँचा तो वहाँ आसनपर वैसे बालकको देखकर मन्त्री राक्षस बोला—यह ब्राह्मण श्राद्ध-कर्मके योग्य नहीं है, तदनन्तर राक्षसकी मन्त्रणासे राजाने चाणक्यको अपमानितकर बाहर निकाल दिया। अपमानित ब्राह्मण चाणक्यने क्रुद्ध होकर प्रतिज्ञा की कि जबतक राजा नन्दका वध (नाश) नहीं करवा लूँगा, तबतक अपनी इस मुक्त शिखाको नहीं बाँधूँगा (पु० प० २०।३)।

चाणक्यकी इस प्रतिज्ञाको सुनकर मन्त्री शकटार कृतकृत्य हो गया और राजा नन्दसे अपने परिवारके विनाशका बदला लेनेमें सफल हुआ।
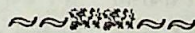
बनादासकृत 'बिसमरनसम्हार' में लोकोपयोगी नीति

(प्रो० श्रीइन्द्रदेवप्रसादसिंहजी)

गोस्वामी तुलसीदासके परवर्ती रामकाव्य-प्रणेताओंमें महात्मा बनादासका अद्वितीय स्थान है। महात्मा बनादास दास्यभावके उपासक थे। किंतु उनकी रचनाओंमें भक्तिके पञ्चरसोंकी साधनाके संकेत उपलब्ध हैं। कविवर तुलसीके बाद रचना-शैलियोंकी विविधता, प्रबन्ध-पटुता और काव्य-सौष्ठवकी दृष्टिसे बनादास राम-भक्ति-शाखाके सर्वोत्कृष्ट कवि ठहरते हैं। इनकी कृतियोंमें निर्गुण पन्थी, सूफी और रीतिकालीन रचना-पद्धतियोंका आभास मिलता है, किंतु सबका आधार रामभक्ति ही है।

महात्मा बनादासके 'उभयप्रबोधक रामायण'में रामचरितको जो उज्ज्वलता प्रदान की गयी है, वह तुलसीदासके परवर्ती प्रबन्ध-काव्योंमें दुर्लभ है। दास्य-भावके परमोपासक महात्मा बनादासकी कृतियोंमें मधुर भाव भी यत्र-तत्र दिखायी पड़ते हैं। अतः उन्हें कैंकर्याश्रित मधुरभावापन्न संत कहा जा सकता है।

इनमें अध्यात्मकी प्रवृत्ति बाल्यकालसे ही थी। पुनर्जन्म न धारण करनेका संकल्प इन्होंने बचपनमें ही ले रखा था।

बाढ़ी श्रद्धा हिये बालपन ते अतिभारी।
यहि तन नाधौं जक्त फिरौं नहीं अबकी पारी॥

ये पढ़े-लिखे व्यक्ति नहीं थे। किंतु इनकी बुद्धि बड़ी कुशाग्र थी। शिक्षासे वञ्चित रहनेका मलाल उनके हृदयमें अन्ततक बना रहा। वे स्वयं कहते हैं—

विद्या विधि नाहीं लिखी, भूलि भालहू माहिं।
पढ़े ककहरा बालपन, मात्रा साबित नाहिं॥

भगवत्कृपाके अनन्य पुजारी बनादासने देशाटन एवं सत्संगसे सद्ग्रन्थोंका साहचर्य प्राप्त कर लिया था।

इन्होंने परमहंस सियारामशरणजीसे भक्ति, ज्ञान, योग आदिकी शिक्षा सत्सङ्गके माध्यमसे प्राप्त की थी। जीवनके अन्तिमांशमें ये अविचल भावसे अयोध्याके भवहरण-कुञ्जमें रहकर स्वानुभूतिसे ग्रन्थकी रचना करते रहे। इनके द्वारा विरचित पुस्तकोंकी संख्या चौंसठ बतायी जाती है।

उनमें 'बिसमरनसम्हार' मुख्य ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थकी रचनाका उद्देश्य स्वयं संत बनादासजी बताते हैं—

यह जग भूल सराय सनातन भूलि जात सब कोई।
बनादास भूलत नहिं सोई राम कृपा जब होई॥
यह बिस्मरनसम्हार यही हित निज निज भूल सम्हारै।
संसारिन को भूल सिन्धु सम को कहि पावत पारै॥

तात्पर्य यह कि अपने लक्ष्य एवं स्वरूपसे विमुख सांसारिक प्रपञ्चोंमें आसक्त जीवोंको ईश्वरोन्मुख करना ही प्रस्तुत ग्रन्थका परम लक्ष्य है। ग्रन्थमें २७ विश्राम हैं। सबमें साधना-निरूपक तत्त्वोंका ही संनिवेश है। बिसमरनसम्हार मात्र साधकों एवं साधुजनोंके लिये ही उपादेय नहीं है, अपितु इसमें लोक-जीवनकी सामग्री भी उपलब्ध है। यों तो सम्पूर्ण ग्रन्थ ही सदुपदेश, सूक्तियों एवं मार्मिक नीतियोंकी मञ्जूषा है, परंतु यहाँपर प्रधानरूपसे वैराग्यनीति तथा अर्थनीतिके कुछ वचन दिये जाते हैं—

आज व्यक्ति धनके लिये इतना लालायित है कि उसने धर्मकी मर्यादा, न्यायकी मर्यादा, नीतिकी मर्यादाको ठुकरा दिया है। येन-केन-उपायसे वह धन-संग्रहमें लगा हुआ है और इसका परिणाम कितना दुःखदायी है, इसपर वह विचार ही नहीं कर रहा है। समाजमें फैला भ्रष्टाचार, दुराचार, अहिंसा आदि—ये सब अनैतिक स्वार्थ साधनके ही परिणाम हैं। आज तो सम्पूर्ण साधनोंका सार पैसा बन बैठा है। परंतु अनुभवी संत श्रीबनादासजीने विविध नीतिपरक उक्तियोंके द्वारा लोगोंको सावधान किया है कि रूप और धन-सम्पत्तिकी लालसा चौरासीके चक्रमें डाल देती है। सम्भव है कि साधुओंको उन्होंने विशेषरूपसे ध्यान-पथमें रखा हो, परंतु पैसेकी समस्या तो सार्वजनीन है और यह किसीको क्षमा नहीं करती। देशकालानुसार बनादासजीने सर्वहितकी नीति प्रदर्शित की है। पाश्चात्त्य संस्कृतिसे अभिभूत आजके लोगोंके लिये तो पैसा ही सर्वस्व है, परंतु साधु-संतोंका भी यही साध्य हो जाय तो यह घोर विडम्बना है।

पैसा पैसा मति करै, पैसा में बहु पाप।
जो पैसा संग्रह करै, अन्त होय मरि साँप॥

इस कथनके माध्यमसे संतने कितनी कठोर चेतावनी दी है। संग्रही व्यक्तिका भविष्य कितना भयावह होनेवाला है अर्थात् उसका अगला जन्म दारुण सर्पयोनिमें सम्भाव्य है।

धन-प्राप्ति होते ही व्यक्तिके मनोराज्यमें अनेक कल्पनाएँ, अनेक कामनाएँ उठ खड़ी होती हैं। पैसा कपट-सृजनका मूल है—

पैसा आबत ही उठत मनोराज बिन कार।
पैसा कपट खड़ा करै सबसे बेइतिबार॥

धनसे प्रतिष्ठा तो मिलती नहीं, किंतु वह भगवान्से विमुख भी कर देता है। पैसा भगवद्विमुख करनेवाले तत्त्वोंमें प्रमुख है—

चढ़ी सूरति रघुबर चरन पैसा आया पास।
खींचि लिया तेहि पास तें तुरत दिया करि नास॥

कितना आकर्षण है पैसेमें कि प्रभुके चरणारविन्दमें लगे मनको बरबस खींच लेता है। क्षणमें सारी उपलब्धिका नाश कर देता है, वह भी मात्र पैसेके आने भरसे, कदाचित् पैसा आकर स्थिर हो जाय तो न जाने कौन-सी दुर्गति होगी!

पैसा किसी भी मानवके लिये दुर्भाग्य लेकर आता है। इसके आगमनमात्रसे सोयी हुई इन्द्रियाँ जाग जाती हैं, सम्पूर्ण प्रपञ्चोंको आमन्त्रण मिल जाता है। धनागमसे चित्तमें चञ्चलता आ जाती है और यह धन बुद्धिका तो नाश ही कर डालता है।

पैसेके प्रति आसक्तिका फल इतना भयावह होता है कि इसके प्राप्त होते ही एक ही साथ जीवनमें सभी दुर्गुण आ धमकते हैं। व्यक्ति घोर अहंकारी हो जाता है एवं लोभी बन जाता है, पैसेके कारण उसमें काम, मद, दम्भ—सब आ धमकते हैं। *'जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई'* की वृत्ति साकार हो उठती है और सबसे दयनीय अवस्था तो यह है कि हृदयका सम्पूर्ण बोध समाप्त हो जाता है। संत बनादासजीका कहना है कि धनसे सतत सावधान रहो, नहीं तो जीवन निरर्थक हो जायगा।

अहंकार पैसा बढ़ै, चढ़ै लोभ और क्रोध।
बढ़ै काम अरु दंभ मद, कढ़ै सकल उर बोध॥

पैसेके लिये अनेक वेषधारण तथा अनेक प्रदर्शन करना पड़ता है। एक पैसा कितना सामर्थ्यवान् है कि *'धरी न काहूँ धीर'* की दशा पैदा कर देता है।

कला अनेकन करत है, पैसा कारण भेष।
पैसा से निसि दिन बँधे, पैसा होयगा मेष॥

पैसेसे सम्बन्धित सामान्य नीति-कथनके उपरान्त पैसेके संदर्भमें साधुओंकी भी अच्छी खबर ली है दास बनादासजीने। कड़ी फटकार लगायी भेषधारी पैसेके लोभी साधुओंको। महात्माका कहना है कि वेष तो रामोपासकका बनाये हैं और लक्ष्य पैसा हासिल करना है। भला यह कैसी साधुता है। ऐसा लगता है कि पाखंडी साधुओंने दो कौड़ीके लिये श्रीरामभद्रको दो कौड़ीका बना दिया है।

पैसा निति मिथ्या कहै, पैसा-हिंसा होय।
पैसा नित चोरी करै, पैसा परघर खोय॥
पैसा खोवे जनम जग, पैसा भारी रोग।
पैसा हित गुरु ते कपट, पैसा राम बियोग॥

विषम परिस्थितियोंसे उबरनेके लिये बनादासजीने सर्वजनहितैषी नीतिका कथन किया है—

ज्ञान चिराग बारि उर अन्तर अतिहि करत उजेरा।
दास बना यक राम नाम है भवसागर का बेरा॥

यह बेरा लौकिक एवं पारलौकिक दोनोंके लिये है। धन्य है संतोंकी नीति पहले कड़वी दवा देकर पुनः अमृतका दान देते हैं।
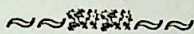
एक अप्रचारित नीतिग्रन्थ 'खूब तमाशा'

(पं० श्रीहरिविष्णुजी अवस्थी)

आजसे लगभग तीन सौ वर्षपूर्व वर्तमान छत्तीसगढ़ प्रदेशके भू-भागमें रतनपुर नामक एक रियासत विद्यमान थी। वहाँके तत्कालीन शासक हैहयवंशीय राजा राजसिंह महान् योद्धा एवं कुशल प्रशासक होनेसे अत्यन्त लोकप्रिय थे। संवत् १७४७ वि० (१६९० ई०)-में उन्होंने अपने राजकवि गोपालदास मिश्र (दुर्गनिवासी)-को एक समस्या देते हुए कहा—

तहाँ सुकवि गोपाल को दई समस्या एक।
सत चौबोला देहुँ करि 'खूब तमाशा' टेक॥
साँची सब बातें कहौ झूठी एक न होय।
राजनीति चाणक कथौं, धार्‌यौ यह मन सोय॥

राजाके उक्त निर्देशका पालन करते हुए पं० गोपालदास मिश्रने दोहा, छप्पय, कवित्त, सवैया, चौबोला आदि रुचिर छन्दोंमें 'खूब तमाशा' नामवाले एक ग्रन्थकी रचना की—

तब गोपाल बिचारि ग्रन्थ वर्णन कीन्हों।
राजनीति मत धर्म कर्म निर्णय कर दीन्हों॥

'खूब तमाशा' ग्रन्थमें नीतिशतक, मन्त्रशतक (मन्त्री), शिक्षाशतक, राज्यशतक, कलिशतक आदि तेरह शतकोंमें नीति-सम्बन्धी विषयवस्तुका अत्यन्त मनोहारी एवं लालित्यपूर्ण वर्णन किया गया है।

'खूब तमाशा' में वर्णित नीतिवचनामृतके रसास्वादनके लिये यहाँ सभी तेरह शतकोंसे एक-एक छन्द उदाहरणके रूपमें प्रस्तुत किया गया है—

(१) नीतिशतक

प्यार यार पर कोप शत्रु पर ज्यों तीतर पर जुर्रा।
शील शूर पर दया दीन पर गुनहगार पर कुर्रा॥
प्रीति राम पर नीति खलक पर जीत पैज पै रक्खै।
ऐसा मरहम होय भूप तौ खूब तमाशा चक्खै॥

(२) मन्त्रशतक

मंत्री सरस राम के कहिये महामंत्र जिन कीन्हे।
बांधे सिंधु सहित नल उपलै रहे पैज पन लीन्हे॥
लंक पंक करि दनुज दीह दरि कर कीरति अनलेखा।
श्री रघुनाथ साथ कर मंत्रिन खूब तमाशा देखा॥

(३) शिक्षाशतक

रहै नेकनामी बदना में रहै न काया माया।
रहै न एक समान आन कछु ज्यौं तरवर की छाया॥
केते गये जात अरु जैहैं राजा रंक सिपाहा।
दिना चार का खूब तमाशा लै खूबी का लाहा॥

(४) राज्यशतक

धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र क्षेत्रपति क्षिति मंडल अघहारी।
रामक्षेत्र भृगुक्षेत्र बखानें आदि कूर्म अवतारी॥
क्षेत्र बराह क्षेत्र पुरुषोतम पूरण पुण्य विलासा।
सकल क्षेत्र जिन कमलतीर है जिनके खूब तमाशा॥

(५) कलिशतक

सेवक हरू होत बहुतेरे साहिब हरू न चहिये।
जो साहिब गरुवो है सब तें हरू गरू निरवहिये॥

राजा सकल विश्व के ईश्वर सबके करै दिलासा।
राखै खलक खुशहाल धनी तो देखै खूब तमाशा॥

(६) पुण्यखण्ड

पुण्य जाहि जो होत दाहिने ताहि न तक्कै कोई।
तीन लोक पर अमर चलावें जो चाहे सो होई॥
दिन दिन बढ़ै घटे नहि कबहूँ जो दिन में कोई रक्खै।
खूबी करै खलक में अच्छी खूब तमाशा लक्खै॥

(७) कर्मखण्ड

करम करै सो करै न कोई कर्म बुद्धि अनुसारै।
पलटे नहीं कर्म की रेखा कौन कर्म को टारै॥
कर्म घटावे कुमति लगावै करम बढ़ावै छाजा।
करै करावै करम भोग सब कहा रंक का राजा॥

(८) वीरखण्ड

महावीर वीराधिवीर जे महिमंडल के भोगी।
कोप उग्र तपसा बल तपते जालिम जस्ती जोगी॥
करि रन जंग जोर रणि ता बल कीरति करत प्रकाशा।
मंडल मारतंड के बेधत ऐसा खूब तमाशा॥

(९) कीर्तिखण्ड

कीरति अजर अमर नारायण लोक लोक प्रति राजै।
बरने कवि गोपाल ज्योतिषन अमल अमल छवि छाजै॥
जस मय जगत विलास हेत रच आप निरंतर आशा।
सकल अंश परिपूरन भीतर जग ही खूब तमाशा॥

(१०) विभेदशतक

जुगल किशोर विनोद सरस रस बरनत विविध विहारै।
पूरण प्रेम प्रीति प्रतिवासर रचै सखी सुकुमारै॥
मान विरह संजोग सुरति ते सुंदर सदा विलासा।
बारह मास छरित नव कुंजनि उपजत खूब तमाशा॥

(११) योगभक्तिशतक

जोगी होय जोग कहुँ साधै घट में पवन विलावै।
जुग जुग जागै ताली लागै जोग अखंडित जोवै॥
जाप जपै अमृत रस चाखै नाद बिन्दु धर पेखै।
ब्रह्मशक्ति उर धरै दिया सो खूब तमाशा देखै॥

(१२) शृङ्गारशतक

बैठि अटा पर खोलि छटा लट लाल लखे छवि बाल वधू की।
मंजन ते तन ज्योति जगी उपमा सिगरी बरनी रतिजू की॥
बार किधों मखतूल की तार सिवार मिली जमुना जलऊ की।
मानो सुमिर के अंगन मध्य तें केलि चली निशि श्याम कुहू की॥

(१३) रामायणशतक

काल स्वरूप नृपान भये कलि लोभ बढ़े गजराज चढ़े हैं।
पातक छत्र धरें सिर ऊपर कूर कुसंगति सैन बढ़े हैं॥
बाजत दीह निशान सुकीरति ठीक सबै ठग पाठ पढ़े हैं।
क्यों तरिहैं भवसागर को कबहूँ मुख रामकथा न कहे हैं॥
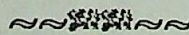
आचार्य श्रीनारायण कांकरके नीति-वचन

(श्रीगोपीनाथजी पारीक 'गोपेश')

वेद-पुराण एवं अन्य शास्त्रोंमें नीतिपर बहुत विवेचना की गयी है। विदुरनीति, शुक्रनीति, चाणक्यनीति आदि बहुतसे ग्रन्थोंने हमें बहुत कुछ सिखाया है। इसी शृंखलामें आचार्य श्रीनारायणजी शास्त्री 'कांकर' ने 'अभिनव-संस्कृत सुभाषित सप्तशती' नामक एक नीतिपरक ग्रन्थकी रचना की है। जिसमें विविध क्षेत्रोंकी नीतियोंका वर्णन किया गया है।

आप कहते हैं कि **'संजाते नैतिके ह्रासे स्वर्गोऽपि नरकायते'** अर्थात् नैतिकतामें कमी आनेसे स्वर्ग भी नरकतुल्य हो जाता है। धर्म, नीति और चरित्रमें जब जहाँ-जहाँ कहीं निष्ठाकी कमी होती है तो वहाँ अकाल, कलह और मृत्यु निश्चितरूपसे जन्म लेते हैं—

धर्मे नीतौ चरित्रे च निष्ठा चेद्ध्रसते क्वचित्।
दुर्भिक्षं कलहो मृत्युस्तर्हि तत्र भवेद् ध्रुवम्॥
(अ०सं०सु०स० २५९)

अमृत बरसानेवाली वाणी, स्नेहपूर्ण दृष्टि और शिष्ट मधुर हास्यको सदा धारण करनेवाले व्यक्ति जगत्में बिरले ही मिलते हैं—

पीयूषवर्षिणी वाणी दृष्टिस्नेहपरिप्लुता।
हास्यं च मधुरं शिष्टं प्राप्यं क्वाप्येव कष्टतः॥
(अ०सं०सु०स० ३०७)

आज पर्यावरणकी शुद्धताके लिये एवं मानव-

जीवनमें वृक्षोंकी महती उपयोगिताको समझते हुए वृक्षारोपणपर विशेष बल दिया जा रहा है। यह बहुत अच्छी बात है, परंतु अच्छी देखभालके अभावमें शीघ्र ही ये नष्ट हो जाते हैं। इसलिये इनकी सुरक्षा आवश्यक है। तात्पर्य यह है कि किसी भी वस्तुके निर्माणके साथ उसकी सुरक्षा करना अधिक आवश्यक है। यह बात कविराजजीने संरक्षककी सदा पूजा-अर्चनाके माध्यमसे कही है—

उत्पादने न काठिन्यं यथास्ति रक्षणे ननु।
विधातारं विहायातो विष्णुमर्चन्ति मानवाः॥

अर्थात् किसी चीजको पैदा करनेमें उतनी कठिनाई नहीं होती, जितनी उसकी रक्षा करनेमें होती है। इसीलिये लोग उत्पादक विधाताकी अपेक्षा संरक्षक विष्णुकी अर्चना अधिक किया करते हैं।

जीवनमें विघातकारी कर्म जो आचार्य महोदयने गिनाये हैं, उनपर सदा ध्यान देनेकी आवश्यकता है। वे कर्म ये हैं— आपसमें विश्वास नहीं करना, द्वेष रखना, दोष देखना, स्वार्थ साधनेमें आगे रहना और परार्थका विनाश करना—

परस्परमविश्वासो विद्वेषो दोषदर्शनम्।
स्वार्थः परार्थनाशश्च सर्वमेतद् विघातकम्॥

(अ०सं०सु०स० २९१)

'यः क्रियावान् स पण्डितः' के अनुसार केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करनेवालेको ही शिक्षित नहीं कहा जाता। वस्तुतः शिक्षित वह है जो उस शिक्षाको जीवनमें उतारे। दयावान्, उदार, दानशील और परदुःखमें कातर बन जानेवालेको ही नीतिकारने शिक्षित कहा है—

यो दयी दक्षिणी दानी परदुःखेषु कातरः।
स एव शिक्षितो बोध्यः तदन्यस्तु न शिक्षितः॥

(अ०सं०सु०स० ४५१)

'निन्दक नियरे राखिये' इस उक्तिको श्रीकांकर महोदय इस प्रकार व्यक्त करते हैं—

दोषवक्ता सदा पूज्यो हितकृद् वैद्यवद् मुदा।
दोषान् स हानिदान् मार्ष्टुं यतो वक्ति पुनः पुनः॥

(अ०सं०सु०स० २४७)

अर्थात् दोष बतानेवाले व्यक्तिकी पूजा हितकारक वैद्यकी तरह सदा प्रसन्नतापूर्वक करनी चाहिये; क्योंकि वह हानिकारक दोषोंको दूर करनेके लिये बार-बार कहता रहता है।

राजनीतिकी रीढ़ नैतिकता है। राजनेताके लिये जितेन्द्रिय और धार्मिक होना आवश्यक है। इस बातको बताते हुए वे कहते हैं—

जितेन्द्रियः सदाचारी धर्मज्ञो नयविन्नृपः।
प्रशास्ति सकलं राष्ट्रं शान्तशत्रुः समृद्धिमान्॥

अर्थात् जितेन्द्रिय, सदाचारी, धर्मका ज्ञाता तथा नीतिका ज्ञाता राजा सम्पूर्ण राष्ट्रपर प्रशासन करता है। उसके शत्रु शान्त हो जाते हैं और वह समृद्धिशाली बना रहता है।

आज राजनीतिमें नैतिकताका अभाव है। सर्वत्र लोभ एवं स्वार्थ व्याप्त है। राजनीतिके इस स्वरूपको भारतीय परम्पराकी राजनीति नहीं कह सकते हैं।

मनुष्य-जन्मको दुर्लभ कहा गया है। यह बड़े पुण्यसे प्राप्त होता है— **'महापुण्यैरवाप्यते।'** अतः इसे लोकहितके कार्योंमें ही लगाना चाहिये— **'लोकहितं सदा कृत्वा प्रशस्यो बुद्धिमान् भवेत्।'** कई अच्छे कार्योंमें यदि सफलता नहीं मिलती है तो निराश होनेकी आवश्यकता नहीं है। पुनः-पुनः यत्न करना चाहिये, सफलता अवश्य मिलेगी। क्योंकि—

साफल्यं चेत् सकृन्नाप्तं पुनर्यत्नो विधीयताम्।
पुनर्घृष्टचन्दनं किं न दत्ते सौरभं मधु॥

(अ०सं०सु०स० ५९७)

अर्थात् यदि किसी किये जानेवाले कार्यमें एक बार सफलता नहीं मिलती है तो फिर दुबारा सफलता प्राप्त करनेके लिये यत्न करो। क्या बार-बार घिसा हुआ चन्दन मीठी सुगन्ध नहीं देता?

जबतक मनुष्य अपने स्वरूपको नहीं जानता है, तबतक उसे दुःख प्राप्त होता रहता है, किंतु स्वरूपका ज्ञान हो जानेपर वह स्वयं सुखरूप हो जाता है। क्योंकि कहा गया है—

वेत्ति यावत् स्वरूपं न तावद् व्यक्तिर्विषीदति।
स्वरूपं हनुमान् स्मृत्वा ललङ्घेऽब्धिं सुदुस्तरम्॥

(अ०सं०सु०स० ४९४)

अर्थात् व्यक्ति जबतक अपने रूप—बलको नहीं पहचानता है, तबतक ही वह दुःख पाता है। स्वरूपका स्मरण करके तो हनुमान्जी दुस्तर सागरको लाँघ गये थे।

विविध नीतियोंका आधार—गोमाता

(श्रीसुधाकरजी ठाकुर)

नीतिका साक्षात् सम्बन्ध धर्मसे है। भगवन्नीतिके पथपर चलते हुए 'सर्वभूतहिते रताः'—इस भगवद्वाणीका अनुपालन तभी होगा, जब हम गौका महत्त्व समझें। गौकी प्रतिष्ठासे ही धर्मनीतिकी प्रतिष्ठा सुनिश्चित हो सकती है। धर्मशास्त्र एवं नीतिशास्त्रमें गौकी महिमा विशेषरूपसे वर्णित है। प्राचीन भारतीय शिक्षा-विधानके लुप्त होने तथा शास्त्र-पुराणोंकी अनभिज्ञताके कारण गौके प्रति धार्मिक बुद्धिका लोप हुआ है। गोधनका धार्मिक महत्त्व भाव-जगत्से सम्बन्ध रखता है, श्रद्धा-विश्वाससे परिपुष्ट होता है और ऋतम्भरा-प्रज्ञाद्वारा अनुभवगम्य है। हमारे शास्त्र इसके प्रमाण हैं—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥

(ऋग्वेद ८। १०१। १५)

गौ शत्रुओंको रुलानेवाले वीर मरुतोंकी माता, वसुओंकी कन्या, अदितिके पुत्रोंकी बहिन और अमृतका तो मानो केन्द्र ही है। इसलिये मैं विवेकी मनुष्योंसे घोषणापूर्वक कहता हूँ कि निरपराध तथा अवध्य गौका वध न करो।

गाय धर्म एवं संस्कृतिकी प्रतीक है। वेदोंने उसे श्रद्धा-भक्तिसे नमन किया है—

रूपायाघ्न्ये ते नमः। (अथर्ववेद १०। १०। १)

हे अवध्य गौ! तेरे स्वरूपको प्रणाम है। जिस स्थलपर गौ सुखपूर्वक निवास करती है, वहाँकी रज पवित्र हो जाती है। वह स्थान तीर्थ बन जाता है। जन्मसे मृत्युतक सभी संस्कारोंमें 'पञ्चगव्य' तथा 'पञ्चामृत' की आवश्यकता पड़ती है। गोदानके बिना धार्मिक कृत्य सम्पन्न न करनेकी सुदीर्घ परम्परा है। व्रत, जप तथा उपवासमें गोप्रदत्त पदार्थ परम पवित्र होते हैं। गौके दर्शन, पूजन और सेवाको हम पुण्य मानते रहे हैं। गोमूत्र गङ्गा-जलके समान पवित्र है और गोबरमें साक्षात् लक्ष्मीका निवास है। हमारे अङ्ग-प्रत्यङ्ग, मांस-मज्जा, चर्म और अस्थिमें स्थित पापोंका विनाश 'पञ्चगव्य' के पानसे होता है।

गाय सर्वदेवमयी है—

सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः।

महाभारतके अनुसार प्रजापतिने श्रीमहादेवजीको अनेक गायें और एक वृषभ दिया। उन्होंने प्रसन्न होकर वृषभको अपना वाहन बनाया। अपनी ध्वजाको उसी वृषभके चिह्नसे सुशोभित किया, इसीसे इनका नाम 'वृषभध्वज' पड़ा। देवताओंने महादेवजीको जीवोंका स्वामी बना दिया और गौओंके बीचमें उनका नाम 'वृषभाङ्क' रखा गया।

भारतीय संस्कृति यज्ञ-प्रधान है। वेद, रामायण, महाभारत सभीमें यज्ञका विधान है। यज्ञका आधार मन्त्र एवं हवि है। हवि गायके शरीरमें तथा मन्त्र ब्राह्मणके मुखमें निवास करते हैं। हविके अभावमें यज्ञकी कल्पना भी सम्भव नहीं। इसीलिये गाय भारतीय धर्म एवं संस्कृतिकी मूलाधार है। धर्म-संस्थापनके निमित्त गौओं एवं ब्राह्मणोंकी रक्षाको प्राथमिकता दी गयी है और इनकी प्रतिष्ठाके लिये भगवान् पृथ्वीपर अवतार लेते हैं—

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।

भगवान् श्रीरामके पूर्वज राजा दिलीपने गौकी रक्षाके लिये अपना शरीर ही सिंहको अर्पित करते हुए कहा—'मेरे देखते-देखते यदि नन्दिनी गौकी हत्या हुई तो सूर्यवंशकी कीर्तिमें कलंककी कालिमा लग जायगी।'

भगवान् श्रीकृष्ण तो गो-चारण और गो-पालनके आदर्श ही हैं। दूध, दही, मक्खन—ये उन्हें परम प्रिय हैं—

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, मुख दधि लेप किए॥

नीलमणि श्यामसुन्दरके हाथमें नवनीत है। उनके अरुण अधर धवल दधिसे ओतप्रोत हैं। वे चुपचाप धीरेसे घरसे बाहर निकलकर ग्वालोंसे गाय दुहना सिखानेका हठ कर बैठते हैं—

धेनु दुहत हरि देखत ग्वालनि।
आपनु बैठि गए तिन कैं सँग, सिखवहु मोहि कहत गोपालनि॥

× × ×

बड़ौ भयौ अब दुहत रहौंगो, अपनी धेनु निबेरि।
सूरदास प्रभु कहत सौंह दै, मोहिं लीजौ तुम टेरि॥

बालक कृष्ण अतिशय मनोयोगसे गायोंका दुहा जाना देखते हैं तथा माताका आँचल पकड़कर प्रार्थना करते हैं—

दै री मैया दोहनी, दुहिहौं मैं गैया।
माखन खाए बल भयौ, करौ नंद-दुहैया॥
कजरी धौरी सैंदुरी, धूमरि मेरी गैया।
दुहि ल्याऊँ मैं तुरत हीं, तू करि दै घैया॥
ग्वालिनि की सटि दुहत हौं, बूझहिं बल भैया।
सूर निरखि जननी हँसी, तब लेति बलैया॥

गोमाता मातृशक्तिकी साक्षात् प्रतिमा हैं। जिस दिन गौएँ विश्वमें नहीं रहेंगी, उस दिन विश्व मातृशक्तिसे वियुक्त हो जायगा और उस दशामें कोई भी प्राणी नहीं बचेगा।

तपोवन-संस्कृतिके जीवन्त-स्वरूप महर्षि श्रीवसिष्ठजी-की गोमातामें अनन्य भक्ति थी। वाल्मीकीय रामायणके अनुसार श्रीवसिष्ठजीने शबला (कामधेनु) गौके प्रभावसे विश्वामित्रका सेनासहित विशिष्ट आतिथ्य किया था। वे अपनी धर्मपत्नी अरुन्धतीके साथ नित्य गौकी पूजा करते थे। महर्षि वसिष्ठजी गो-तत्त्ववेत्ताओंके आचार्य थे।

भगवान् वेदव्यासने अपने समग्र साहित्यमें गो-सेवाको प्रमुख स्थान दिया है। स्कन्दपुराण, भविष्यपुराण, पद्मपुराण, अग्निपुराण तथा महाभारतके अधिकांश भाग गो-महिमासे भरे पड़े हैं। धर्मको वृषभ (बैल)-रूप माना गया है—'**वृषो हि भगवान् धर्मः**'।

गौएँ समस्त प्राणियोंको खिलाने-पिलानेवाली एवं प्राणदायिनी हैं। भगवान् आदि शंकराचार्यजीने अपने सभी ग्रन्थोंमें गो-महिमाका गान किया है। उन्होंने ब्रह्मोपलब्धिमें गो-सेवाको सर्वोपरि साधन माना है—

गावः पवित्रं परमं गावो माङ्गल्यमुत्तमम्।
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावो धन्याः सनातनाः॥

पुराणोंकी 'गोमती-विद्या' और 'गो-सावित्री-स्तोत्र'के अनुसार गायोंसे सात्त्विक वातावरणका निर्माण होता है। गायें अत्यन्त पवित्र हैं, जहाँ गायें रहती हैं वहाँ दूषित तत्त्व नहीं रहते। उनके शरीरसे दिव्य गन्धयुक्त वायु प्रवाहित होती रहती है। गायोंसे कल्याण-ही-कल्याण होता है।

महर्षि च्यवनकी गो-निष्ठा प्रसिद्ध है। महर्षि च्यवनने राजा नहुषको उपदेश देते हुए कहा था—

गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।
अन्नमेव सदा गावो देवानां परमं हविः॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किञ्चित् परं स्मृतम्॥

जाबालपुत्र सत्यकामको गो-सेवासे ब्रह्मज्ञान प्राप्त हुआ था। संत नामदेवजीकी गो-भक्ति विश्रुत ही है। एक बार मुगल बादशाहने दिल्लीमें गायको कटवाकर उसे पुनः जीवित करनेके लिये नामदेवजीकी परीक्षा ली थी। संत नामदेवजीकी पुकारपर भगवान् विट्ठलने मृत गायको जीवित कर दिया। जीवित होकर गौ नामदेवजीको चाटने लगी। यह घटना 'गुरु ग्रन्थसाहिब' में वर्णित है। संत नामदेवजीने अपने हाथोंसे विट्ठल भगवान्को अपनी पोषित गायका दूध पिलाया था। नामदेवजीने कहा था—हरिको पानेकी मेरी व्याकुलता वैसी ही है, जैसी बछड़ेकी व्याकुलता गायसे बिछुड़कर होती है। विट्ठलकी भक्तिके साथ गो-सेवाका संदेश नामदेवजीने प्रदान किया था। उनके भक्तिमय जीवन-पथमें गौका विशिष्ट स्थान था।

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीने अपने सम्पूर्ण साहित्यमें गौकी निरन्तर चर्चा की है। वे काशीको गौका रूप मानते हुए पद-रचना करते हैं—लिखते हैं—

सेइअ सहित सनेह देह भरि, कामधेनु कलि कासी।
समनि सोक-संताप-पाप-रुज, सकल-सुमंगल-रासी॥

(विनय-पत्रिका २२)

इस प्रकार सात्त्विक श्रद्धाकी प्रतीक गोमाताके आध्यात्मिक स्वरूपसे दिव्य ज्ञान और उसकी चर्यासे व्यावहारिक जीवनका ज्ञान प्राप्त होता है।

आख्यान—

गो-सेवाकी आदर्श-नीतिके पालक महाराज विक्रमादित्य

परदु:खकातर, परमोदार, शकारि विक्रमादित्य प्रजाके कष्टका पता लगानेके लिये प्राय: घूमते ही रहते थे। इसी प्रकार अकेले घोड़ेपर बैठे वे एक बार जा रहे थे। मार्ग वनमेंसे जाता था। संध्या हो चुकी थी। शीघ्र वनसे निकल जानेके विचारसे उन्होंने घोड़ेको एड़ लगायी। इतनेमें एक गायके डकरानेकी ध्वनि सुनायी पड़ी। सम्राट्ने घोड़ेको शब्दकी दिशाकी ओर मोड़ा।

वर्षा ऋतु थी। नदीमें बाढ़ आयी तो नालोंमें भी जल चढ़ आया। बाढ़ उतर चुकी थी; किंतु नालोंमें एकत्र पंकने दलदल बना दिया था। ऐसे ही एक नालेके दलदलमें एक गाय फँस गयी थी। उसकी चारों टाँगें पेटतक कीचड़में डूब चुकी थीं। हिलनेमें भी असमर्थ होकर वह डकरा रही थी।

महाराज विक्रमादित्यने घोड़ेको खुला ही छोड़ दिया, वस्त्र उतार दिया। दलदलमें उतरकर गायको निकालनेका प्रयत्न करने लगे। स्वयं कीचड़में लथपथ हो गये। किंतु अकेले गायको निकाल लेना सम्भव नहीं था। अन्धकारने इस कार्यको और भी कठिन कर दिया।

गायकी डकार सुनकर एक सिंह उसे खाने आ पहुँचा। घोड़ा खुला था, अत: सिंहकी गन्ध मिलते ही भाग गया। अब विक्रमादित्यने तलवार उठायी। गायकी सुबहतक रक्षा करना आवश्यक था। उस अन्धकारमें सिंहसे युद्ध करना भी कठिन था। सिंह आक्रमण कर रहा था और वे उसे रोक रहे थे।

समीप ही एक बड़ा वटका वृक्ष था। उसपरसे एक शुकका शब्द सुनायी पड़ा—'राजन्! गायकी तो मृत्यु आ गयी है। वह अभी नहीं मरेगी तो कलतक दलदलमें डूबकर मर जायगी। आप उसके लिये व्यर्थ क्यों प्राण दे रहे हैं? अभी यह सिंह अकेला है। थोड़ी देरमें सिंहनी तथा दूसरे वनपशु आ सकते हैं। अत: आप यहाँसे शीघ्र कहीं सुरक्षित स्थानपर चले जाइये। इस वटवृक्षपर चढ़ जानेसे भी आप सुरक्षित हो सकते हैं।'

महाराजने कहा—'शुक! मेरे प्रति तुम्हारी जो कृपा है, उसके लिये आभार; किंतु मुझे तुम अनीतिका मार्ग मत दिखलाओ।' अपने प्राणोंकी रक्षाका प्रयत्न तो कीट-पतंग भी करते हैं। दूसरोंकी रक्षामें जो प्राण दे सके, उसीका जीवन धन्य है। जिसमें दया नहीं है, उसके सब पुण्य कर्म व्यर्थ हैं। मेरे प्रयत्नका कुछ लाभ होगा या नहीं, यह देखना मेरा काम नहीं है। मुझे तो अपनी शक्तिके अनुसार प्रयत्न करते ही रहना चाहिये। नीति बताती है कि इस गौकी रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। मैं प्राण देकर भी इसे बचानेका प्रयत्न करूँगा।

पूरी रात सम्राट् विक्रमादित्य गायकी रक्षामें लगे रहे; किंतु सूर्योदयसे पूर्व ही जब झुटपुटा हुआ, उनके सामने सिंह देवराज इन्द्रके रूपमें खड़ा हो गया। शुक बनकर बोलनेवाले धर्म भी अपने रूपमें आ गये और साक्षात् भूदेवी जो गाय बनकर राजाकी परीक्षा लेनेमें सम्मिलित थीं, उन्होंने भी अपने दिव्य रूपके दर्शन दे दिये।

अहिंसा-नीतिके आदर्श—महर्षि वसिष्ठ

कुशिक-वंशमें उत्पन्न राजा विश्वामित्र सेनाके साथ आखेट करने निकले थे। वे अपने राज्यसे दूर महर्षि वसिष्ठके आश्रमके समीप पहुँच गये। वसिष्ठजीने एक ब्रह्मचारीद्वारा समाचार भेजा—'आप आश्रमके समीप आ गये हैं, अत: मेरा आतिथ्य स्वीकार करें।'

अरण्यवासी तपस्वीके लिये राजा असुविधा न उत्पन्न करे, यह नियम है। परंतु विश्वामित्रने महर्षि वसिष्ठकी प्रशंसा सुनी थी। उनके तप्र:प्रभावपर विश्वास था। अत: आतिथ्यका आमन्त्रण स्वीकार कर लिया। उन्हें आश्चर्य तब हुआ जब सेनाके साथ उनको राजोचित सामग्री प्रचुर मात्रामें भोजनके लिये दी गयी और वह भी तपोबल नहीं, वसिष्ठकी होमधेनु नन्दिनीके प्रभावसे।

'आप यह गौ मुझे दे दें। बदलेमें जो चाहें मुझसे माँग लें।' विश्वामित्र उस गौके लिये लालायित हो गये थे। चलते समय उन्होंने अपनी इच्छा प्रकट की।

'ब्राह्मण गौ-विक्रय नहीं करता। मैं इस गौको नहीं दे सकता।' ऋषिने अस्वीकार कर दिया। उग्र स्वभावापन्न राजा विश्वामित्र उत्तेजित हो गये। उन्होंने बलपूर्वक गौको ले चलनेकी आज्ञा सैनिकोंको दी। किंतु होमधेनु नन्दिनी साधारण गौ तो थी नहीं। उसकी हुंकारमात्रसे तत्काल शत-शत योद्धा उत्पन्न हुए। उन्होंने विश्वामित्रके सैनिकोंको मार भगाया।
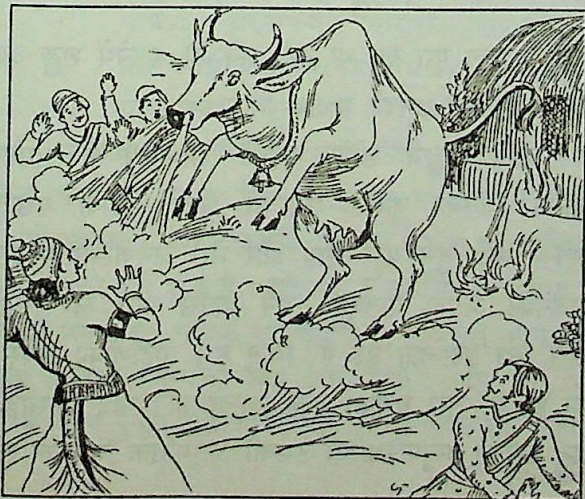
राजा विश्वामित्रने वसिष्ठपर आक्रमण कर दिया। कुशका ब्रह्मदण्ड हाथमें लिये महर्षि वसिष्ठ स्थिर, शान्त बैठे रहे। विश्वामित्रके साधारण तथा दिव्य अस्त्र सब उस ब्रह्मदण्डसे टकराकर विनष्ट हो गये। दु:सह तप करनेके बाद विश्वामित्रने वे दिव्यास्त्र पाये थे; किंतु महर्षि वसिष्ठके ब्रह्मदण्डद्वारा वे सभी नष्ट हो गये।

'ब्रह्मबल ही श्रेष्ठ है। क्षत्रियकी शक्ति तपस्वी ब्राह्मणका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। अत: मैं इसी जन्ममें ब्राह्मणत्व प्राप्त करूँगा।' विश्वामित्रने यह निश्चय किया और वे अत्यन्त कठोर तपमें लग गये।

सैकड़ों वर्षके कठिन तपके पश्चात् प्रसन्न होकर ब्रह्माजी प्रकट हो गये। उन्होंने यह वरदान दिया—'वसिष्ठके स्वीकार करते ही तुम ब्रह्मर्षि हो जाओगे।' विश्वामित्रके लिये महर्षि वसिष्ठसे प्रार्थना करना बहुत अपमानजनक था। संयोगवश जब वसिष्ठजी मिलते थे तो इन्हें 'राजर्षि' कहते थे। अत: राजा विश्वामित्र वसिष्ठके घोर शत्रु हो गये। एक राक्षसको प्रेरित करके उन्होंने वसिष्ठके सौ पुत्र मरवा दिये। स्वयं वसिष्ठको अपमानित करने, नीचा दिखानेका अवसर ढूँढ़ते रहने लगे। उनका हृदय वैर तथा हिंसाकी प्रबल भावनासे पूर्ण था।

विश्वामित्रने अपनी ओरसे कुछ उठा नहीं रखा। बड़ा दृढ़ निश्चय, प्रबल संकल्प था उनका। दूसरी सृष्टि तक करनेमें लग गये। अनेक प्राणी तथा अन्नादि बना डाले। ब्रह्माजीने ही उन्हें रोका। अन्तमें स्वयं शस्त्र-सज्ज होकर रात्रिमें छिपकर महर्षि वसिष्ठको मारने निकले। दिनमें प्रत्यक्ष आक्रमण करके तो अनेक बार पराजित हो चुके ही थे।

चाँदनी रात्रि थी। कुटियाके बाहर वेदीपर एकान्तमें पत्नीके साथ महर्षि बैठे थे। अरुन्धतीजीने कहा—'कैसी निर्मल ज्योत्स्ना है?'

वसिष्ठजी बोले—'ऐसा ही निर्मल तेज आजकल विश्वामित्रके तपका है।' वसिष्ठका निर्मल मन अहिंसा तथा क्षमासे परिपूर्ण था।

विश्वामित्र छिपे खड़े थे। उन्होंने सुना और उनका ही हृदय उन्हें धिक्कार उठा—'एकान्तमें पत्नीके साथ बैठा जो अपने सौ पुत्रोंके हत्यारेकी प्रशंसा करता है, उस महापुरुषको मारने आया है तू?' शस्त्र नोच फेंके विश्वामित्रने। दौड़कर महर्षिके चरणोंमें गिर पड़े।

'अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्संनिधौ वैरत्यागः।'

विश्वामित्रके ब्राह्मण होनेमें उनका दर्प, उनका द्वेष, उनकी असहिष्णुता ही तो बाधक थी। वह आज दूर हुई। महर्षि वसिष्ठने उनको झुककर उठाते हुए कहा—'उठिये ब्रह्मर्षि।'

अहिंसा-नीति तथा मैत्रीधर्मके प्रतिष्ठाता महर्षि वसिष्ठजीकी महिमाकी कोई इयत्ता नहीं। वैराग्य—शम, दम, तितिक्षा, अपरिग्रह, शौच, तप, स्वाध्याय, संतोष और क्षमाकी प्रतिमूर्ति महर्षि वसिष्ठ वैदिक मन्त्रद्रष्टा ऋषि हैं। सप्तर्षियोंमें इनका परिगणन है। इनके उदात्त मङ्गलमय चरित्रका वेद-पुराणोंमें विस्तारसे वर्णन हैं। ये सूर्यवंशी राजाओंके कुलगुरु रहे हैं। वास्तवमें सूर्यवंशीय रघु, दिलीप, श्रीराम आदि राजाओंकी जो प्रतिष्ठा हुई, उसमें महर्षि वसिष्ठकी धर्ममय नीति ही मूल कारण रही है। ये महान् परोपकारी थे। प्राणिमात्रके हित-चिन्तनको इन्होंने अपना उद्देश्य बना रखा था। यूँ तो महर्षिकी जीवनचर्या ही धर्मनीतिका आदर्श रही है तथापि इन्होंने मनुष्योंको अपने आचारधर्मका परिपालन करनेके लिये उत्तम सीख दी है, उसके लिये वसिष्ठधर्मशास्त्र नामक एक ग्रन्थ ही बना डाला। वे धर्मनीतिका पालन करनेके लिये विशेष रूपसे प्रेरित करते हुए कहते हैं—

धर्मं चरत माऽधर्मं सत्यं वदत नानृतम्।
दीर्घं पश्यत मा ह्रस्वं परं पश्यत माऽपरम्॥

(वसिष्ठस्मृति ३०। १)

भाव यह है कि धर्मका ही आचरण करो, अधर्मका नहीं। सदा सत्य ही बोलो, असत्य कभी मत बोलो। दूरदर्शी बनो, उदार बनो, संकीर्ण मत बनो; जो पर—परात्पर (दीर्घ) तत्त्व है, उसीपर सदा दृष्टि रखो। तदतिरिक्त अर्थात् परमात्मासे भिन्न मायामय किसी भी वस्तुपर दृष्टि मत रखो।
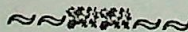
अस्तेय-नीतिके आदर्श उदाहरण—ऋषि शङ्ख और लिखित

ऋषि शङ्ख और लिखित दोनों सगे भाई थे। दोनों धर्मशास्त्रके परम मर्मज्ञ थे। दोनोंकी स्मृतियाँ अब भी उपलब्ध हैं। विद्याध्ययन समाप्त करके दोनोंने विवाह किया और अपने-अपने आश्रम पृथक्-पृथक् बनाकर रहने लगे।

एक बार ऋषि लिखित अपने बड़े भाई शङ्खके आश्रमपर उनसे मिलने गये। आश्रमपर उस समय न शङ्ख थे और न उनकी पत्नी ही। लिखितको भूख लगी थी। उन्होंने बड़े भाईके उपवनसे एक फल तोड़ा और खाने लगे। वे फल पूरा खा भी नहीं सके थे, इतनेमें शङ्ख आ गये। लिखितने उनको प्रणाम किया।

ऋषि शङ्खने छोटे भाईको सत्कारपूर्वक समीप बुलाया। उनका कुशल-समाचार पूछा। इसके पश्चात् बोले—'भाई, तुम यहाँ आये और मेरी अनुपस्थितिमें इस उपवनको अपना मानकर तुमने यहाँसे फल ले लिया, इससे मुझे प्रसन्नता हुई है; किंतु हम ब्राह्मणोंका सर्वस्व धर्म ही है, तुम धर्मका तत्त्व जानते हो। यदि किसीकी वस्तु उसकी अनुपस्थितिमें उसकी अनुमतिके बिना ले ली
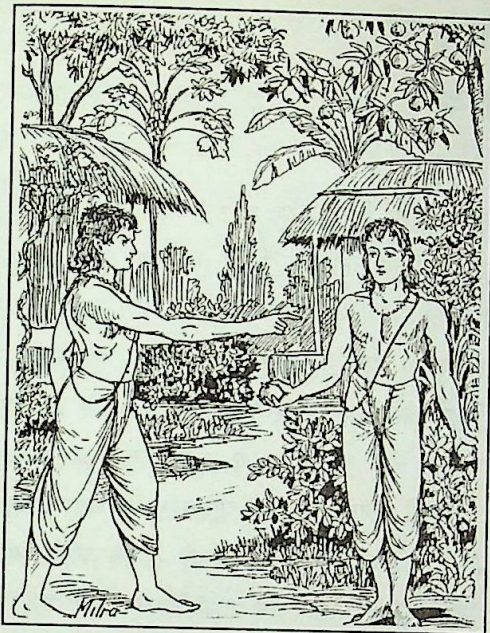
जाय तो इस कर्मकी क्या संज्ञा होगी?'

'चोरी!' लिखितने बिना हिचकके उत्तर दिया। 'मुझसे प्रमादवश यह अपकर्म हो गया है। अब क्या करना उचित है?'

'राजासे इसका दण्ड ले आओ। इससे इस दोषका निवारण हो जायगा।' शङ्खने कहा।

ऋषि लिखित राजधानी गये। राजाने उनको प्रणाम करके अर्घ्य देना चाहा तो ऋषिने उन्हें रोकते हुए कहा—

'राजन्! इस समय मैं आपका पूजनीय नहीं हूँ। मैंने अपराध किया है, आपके लिये मैं दण्डनीय हूँ।'

अपराधका वर्णन सुनकर राजाने कहा—'नरेशको जैसे दण्ड देनेका अधिकार है, वैसे ही क्षमा करनेका भी अधिकार है।'

लिखितने रोका—'आपका काम अपराधके दण्डका निर्णय करना नहीं है, विधान निश्चित करना तो ब्राह्मणका काम है। आप विधानको केवल क्रियान्वित कर सकते हैं। आपको मुझे दण्ड देना है, आप दण्डविधानका पालन करें।'

उस समय दण्ड-विधानके अनुसार चोरीका दण्ड था—चोरके दोनों हाथ काट देना। राजाने लिखितके दोनों हाथ कलाईतक कटवा दिये। कटे हाथ लिखित प्रसन्न हो बड़े भाईके यहाँ लौटे और बोले—'भैया! मैं दण्ड ले आया।'

शङ्खने कहा—'मध्याह्न-स्नान-संध्याका समय हो गया है। चलो, स्नान-संध्या कर आयें।'

लिखितने भाईके साथ सरितामें स्नान किया। अभ्यासवश तर्पण करनेके लिये उनके हाथ जैसे ही उठे तो अकस्मात् वे पूर्ण हो गये। उन्होंने बड़े भाईकी ओर देखकर कहा—'भैया! जब यही करना था तो आपने मुझे राजधानीतक क्यों दौड़ाया?'

शङ्ख बोले—'अपराधका दण्ड तो शासक ही दे सकता है; किंतु ब्राह्मणको कृपा करनेका अधिकार है।'

महर्षि शङ्ख-लिखितके धर्मोपदेश

माता पिता गुरुश्चैव पूजनीयाः सदा नृणाम्। क्रियास्तस्याफलाः सर्वा यस्यैतेऽनादृतास्त्रयः॥
सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्या या पतिव्रता। सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या या प्रजावती॥
यथोक्तफलदं तीर्थं भवेच्छुद्धात्मनां नृणाम्॥
गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी। गायत्र्याः परमं नास्ति दिवि चेह च पावनम्॥
प्रजां पुष्टिं यशः स्वर्गमारोग्यं च धनं तथा। नृणां श्राद्धैः सदा प्रीताः प्रयच्छन्ति पितामहाः॥
यावदस्थि मनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति। तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते॥

महर्षि शङ्ख बताते हैं कि माता-पिता और गुरु—ये मनुष्योंके लिये सदैव पूजनीय होते हैं। जो इन तीनोंकी सेवा नहीं करता, पूजा नहीं करता, उन्हें आदर-मान नहीं देता, उसकी सारी क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं। वस्तुतः भार्या वही कहलाती है, जो गृहस्थीके सभी कार्योंमें अत्यन्त कुशल हो, पतिव्रता हो, जिसके प्राण अपने पतिमें बसते हों और जो संतानयुक्त हो। जिसका मन शुद्ध है, वही मनुष्य तीर्थसेवनका जैसा फल बताया गया है, उसका पूर्ण भागी होता है। गायत्री समस्त वेदोंकी जननी है, गायत्री पापनाशिनी है, गायत्रीसे बढ़कर इस लोक तथा परलोकमें पवित्र और कोई दूसरा नहीं है। श्राद्धद्वारा प्रसन्न पितृगण मनुष्योंको सदा उत्तम संतान, पुष्टि, यश, स्वर्ग, आरोग्य तथा श्रेष्ठ धन प्रदान करते हैं। जबतक व्यक्तिकी अस्थि परम पुनीत गङ्गाजीमें रहती है, उतने हजार वर्षोंतक वह व्यक्ति स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित रहता है।

निर्लोभ नीतिके आदर्श

(१) श्रीसनातन गोस्वामी

'तुम वृन्दावनमें श्रीसनातन गोस्वामीके पास जाओ! उनके समीप पारस है और वे तुम्हें दे देंगे।' स्वप्नमें भगवान् शङ्करने दर्शन देकर यह आदेश किया।

गौड़ देशीय बर्दवानका वह ब्राह्मण निर्धन था, दरिद्रताने दुखी कर दिया था उसे। जहाँ हाथ फैलाये, वहीं तिरस्कार मिले। शास्त्रज्ञ, स्वाभिमानी ब्राह्मण— उसने संकल्प किया कि जिस थोड़ेसे स्वर्णपर संसारके धनी फूले फिरते हैं, उस स्वर्णको वह मूल्यहीन करके धर देगा। ढेरियाँ लगा देगा स्वर्णकी। पारस प्राप्त करेगा वह।

पारस कहाँ मिलेगा? ढूँढ़नेसे तो वह मिलनेसे रहा। देगा उसे कौन? लक्ष्मीके किंकर देवता क्या पारस दे सकेंगे? ब्राह्मणने भगवान् आशुतोषकी शरण ग्रहण की, जो विश्वको विभूति देकर स्वयं भस्माङ्गराग लगाते हैं। वे कपाली ही कृपा करें तो पारस प्राप्त हो। कठिन व्रत, निरन्तर पञ्चाक्षर-जप, दृढ़ रुद्रार्चन-निष्ठा— भगवान् त्रिलोचन कबतक संतुष्ट नहीं होते! ब्राह्मणकी बारह वर्षोंकी उत्कट तपस्या सफल हुई। भगवान् शिवने स्वप्नमें दर्शन दिया।

'सनातन गोस्वामीके पास पारस है? वे दे देंगे उस महान् रत्नको?' ब्राह्मणको मार्गका कष्ट प्रतीत ही नहीं हो रहा था। 'भगवान्ने कहा है तो अवश्य दे देंगे।' यही विश्वास उसे लिये जा रहा था।

'आपके पास पारस है?' वृन्दावनमें पूछनेपर वृक्षके नीचे रहनेवाले कृशकाय करवा-कौपीनधारी, गुदड़ी रखनेवाले एक साधुके पास जानेको लोगोंने कहा तो वह बहुत निराश हुआ। 'ये कंगाल सनातन गोस्वामी!' ऐसे व्यक्तिके पास पारस होनेकी किसे आशा होगी? परंतु यहाँतक आया था तो पूछ लेना उचित लगा।

'मेरे पास तो नहीं है। मैं उसका क्या करता!' सनातनजीने कह दिया। 'एक दिन श्रीयमुना-स्नानको जा रहा था तो पैरोंसे टकरा गया। मैंने उसे वहीं रेतसे ढक दिया, जिससे किसी दिन स्नान करके लौटते छू न जाय। उसे छूकर तो फिर स्नान करना पड़ता। तुम्हें चाहिये तो वहाँसे निकाल लो।'

स्थान बता दिया गया था। रेत हटानेपर पारस मिल भी गया। परीक्षा करनेके लिये ब्राह्मण लोहेका टुकड़ा पहलेसे साथ लाया था, वह पारससे स्पर्श करानेपर स्वर्ण हो गया। पारस ठीक मिल गया। ब्राह्मण लौट पड़ा; किंतु शीघ्र चित्तने कहा—'उन संतको तो यह प्राप्त ही था। वे कहते हैं कि यह छू जाय तो उन्हें स्नान करना पड़े।'

'आपको अवश्य इस पारससे अधिक मूल्यवान् वस्तु प्राप्त है!' ब्राह्मण लौट आया सनातनजीके पास।

'प्राप्त तो है!' सनातन अस्वीकार कैसे कर देते।'

'मुझे वही प्रदान करनेकी कृपा करें!' ब्राह्मणने प्रार्थना की।

'उसकी प्राप्तिसे पूर्व पारसको यमुनामें फेंकना पड़ेगा।' सनातनजीने कहा।

'यह गया पारस!' ब्राह्मणने पूरी शक्तिसे उसे यमुनाके प्रवाहमें फेंक दिया। भगवान् शिवकी दीर्घकालीन उपासनासे उसका चित्त शुद्ध हो चुका था। संतके दर्शनने हृदयको निर्मल कर दिया, अधिकारी बन गया था वह। सनातन गोस्वामीने उसको श्रीकृष्ण-नामकी दीक्षा दी— वह श्रीकृष्ण-नाम, जिसकी कृपाका कण कोटि-कोटि पारसका सृजन करता है।

(२) श्रावस्ती-नरेश और ब्राह्मणकुमार

'कौशाम्बीके राजपुरोहितका पुत्र था अभिरूप कपिल। आचार्य इन्द्रदत्तके पास अध्ययन करने श्रावस्ती आया था। आचार्यने उसके भोजन करनेकी व्यवस्था नगरसेठके यहाँ कर दी थी। परंतु वहाँ वह भोजन परोसनेवाली सेविकाके रूपपर मुग्ध हो गया। दोनोंमें परिचय हुआ। वसन्तोत्सव आनेपर सेविकाने उससे उत्तम वस्त्र तथा आभूषण माँगे।

अभिरूप कपिलके पास तो वहाँ कुछ था नहीं। सेविकाने ही बतलाया—'यहाँके नरेशका नियम है कि प्रात:काल उन्हें जो सर्वप्रथम अभिवादन करता है, वे उसे दो माशा स्वर्ण प्रदान करते हैं।'

महाराजको सर्वप्रथम प्रात:कालीन अभिवादन तो राजसदनमें रहनेवाले सेवक ही कर सकते हैं। अभिरूप कपिलने एक युक्ति सोची। वह राजसदनमें रात्रिमें ही प्रविष्ट हो गया, किंतु नरेशके शयनकक्षमें प्रविष्ट होनेकी चेष्टा करते समय प्रहरियोंने उसे पकड़ लिया। चोर समझा गया वह। प्रात:काल राजसभामें महाराजके सम्मुख उपस्थित किया गया।

महाराजके पूछनेपर सब बातें उसने सच-सच कह दीं। उस ब्राह्मणकुमारके सत्य तथा भोलेपनपर संतुष्ट होकर राजाने कहा—'तुम जो चाहो सो माँगो। जो माँगोगे, तुम्हें मिलेगा।'

'मैं सोचकर कल माँगूँगा।' अभिरूप कपिलने कह दिया। उसे एक दिनका समय मिल गया। घर लौटकर वह सोचने लगा—'दो माशा स्वर्ण तो बहुत कम है—सौ स्वर्णमुद्राएँ! परंतु वे भी कितने दिन चलेंगी? सहस्र मुद्राएँ! नहीं, लक्ष मुद्राएँ!'

वह सोचता रहा, किंतु तृष्णा कहीं संतुष्ट होना जानती है! उसे आधा राज्य भी अपर्याप्त जान पड़ा। दूसरे दिन महाराजके सम्मुख उपस्थित होनेपर उसने कहा—'आप अपना पूरा राज्य मुझे दे दें।'

श्रावस्तीनरेश नि:संतान थे। किसी योग्य व्यक्तिको राज्य सौंप वे वनमें जाकर तप करनेका विचार पिछले कई महीनोंसे कर रहे थे। यह विप्रकुमार उन्हें योग्य प्रतीत हुआ। अत: उसकी माँग सुनकर वे प्रसन्न हो गये और बोले—'द्विजपुत्र! तुमने मेरा उद्धार कर दिया। तृष्णारूपी सर्पिणीके पाशसे मैं सहज छूट गया। कामनाओंका अथाह कूप भरते-भरते मेरा तो जीवन ही समाप्त हो चला था। विषयोंके तृष्णारूपी दलदलसे प्राणी निकल सके, यही उसका सौभाग्य है। तुमने मुझे ऐसा अवसर दिया, इसका मैं आभार मानता हूँ। यह सिंहासन तुम स्वीकार करो।'
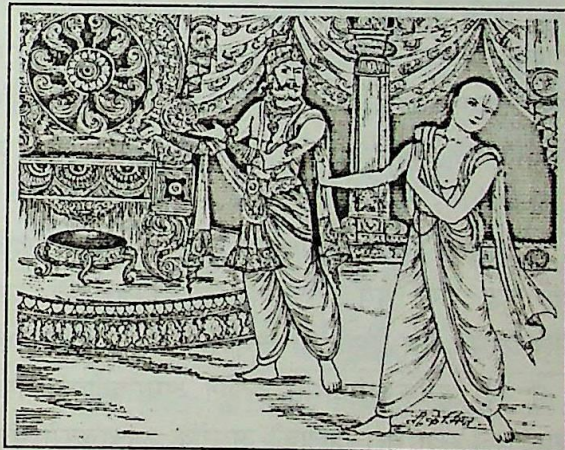
अभिरूप कपिल चौंक गया। उसने उसी समय निश्चय करके कहा—'महाराज! कृपा तो आपने मुझपर की। तृष्णा-सर्पिणीने तो मुझे बाँध ही लिया था। विषय-तृष्णाके दलदलमें अब मैं नहीं पड़ूँगा। मुझे न राज्य चाहिये, न दो माशा स्वर्ण और न ही स्त्री।'

वह वहाँसे चला तो बहुत प्रसन्न एवं निर्द्वन्द्व था।

(३) राँका-बाँका

बड़े विरक्त, अत्यन्त अपरिग्रही, भगवान्‌पर दृढ़ विश्वास करनेवाले भक्त थे राँकाजी। जैसे वे, वैसी उनकी पत्नी बाँका। दोनों प्रतिदिन जंगलमें जाकर सूखी लकड़ियाँ काटकर ले आते थे। उन्हें बेचनेपर जो कुछ मिलता, उसके द्वारा अतिथि-सत्कार करते और अपना जीवन-निर्वाह भी। लीलामय प्रभु कभी-कभी अपने लाडले भक्तोंकी परीक्षा उनकी कीर्तिका विस्तार करनेके लिये कराया करते हैं। उन सर्वसमर्थने स्वर्ण-मुहरोंसे भरी थैली वनके उस मार्गमें डाल दी, जिधर ये भक्त-दम्पति लकड़ी काटने जा रहे थे।

राँकाजी पत्नीसे कुछ आगे चल रहे थे। मन भगवान्‌के चिन्तनमें लगा था। पैरको ठोकर लगी तो देखा कि एक थैली स्वर्ण-मुहरोंसे भरी खुली पड़ी है। जल्दी-जल्दी उसे धूलिसे ढकने लगे। इतनेमें बाँकाजी पास आ गयीं। उन्होंने

पूछा—'आप यह क्या कर रहे हैं?'

राँकाजीने उत्तर टाल देना चाहा, किंतु पत्नीके आग्रह करनेपर बोले—'मुहरोंसे भरी थैली पड़ी है। स्वर्ण देखकर तुम्हारा मन इन्हें लेनेको न करे, इसलिये इन्हें ढक रहा था।'

बाँकाजी हँस पड़ीं—'वाह, धूलिपर धूलि डालनेसे क्या लाभ? स्वर्ण और धूलिमें भेद ही क्या है? आप अकारण यह भ्रम मत कीजिये।'

परोपकार-नीतिके आदर्श

(१) महर्षि दधीचि

'वृत्रासुरके निधनका एक ही उपाय है।' देवताओंकी प्रार्थनापर भगवान् नारायण प्रकट हुए भी तो उन्होंने एक अटपटा मार्ग बतलाया—'महर्षि दधीचिकी अस्थियोंसे विश्वकर्मा वज्र बनायें तो उस वज्रसे वह असुर मारा जा सकता है।'

वृत्रासुरने स्वर्गपर अधिकार कर लिया था। इन्द्रादि देवता युद्ध करने गये तो उनके सब अस्त्र-शस्त्र उसने निगल लिये। अब देवता तो निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहे थे और वृत्रके संरक्षणमें दैत्योंने अमरावतीको अपना निवास बना रखा था। त्रिलोकी असुरोंके अत्याचारसे संतप्त थी। देवता ब्रह्मलोक गये ब्रह्माजीके समीप और सृष्टिकर्ताको साथ लेकर भगवान् नारायणकी स्तुति करने लगे।

'दधीचिकी अस्थि!' देवताओंका मुख लटक गया।

'वे परम धर्मात्मा हैं। याचना करनेपर वे अपनी देह प्रसन्नतापूर्वक दे देंगे!' भगवान् नारायणने देवताओंका नैराश्य देखकर उन्हें समझाया और अदृश्य हो गये।

'तात! हम सब विपत्तिमें पड़ गये हैं। आपके समीप याचना करने आये हैं। हमको आपके शरीरकी अस्थियाँ चाहिये।' देवता गये महर्षि दधीचिके आश्रममें और उन्होंने महर्षिसे प्रार्थना की।

वे ही इन्द्र, वे ही देवता, जिन्होंने दधीचिकी तपस्या भंग करनेका कोई उद्योग ऐसा नहीं, जो अपने वशभर न किया हो और आज महर्षिसे उनकी अस्थि माँगने आये थे; किंतु ऋषिके ललाटपर एक सूक्ष्म संकुचन भी नहीं आया! उनके अन्तरने कहा—'सृष्टिमें सात्त्विकताकी विजय होनी चाहिये। संसारके प्राणियोंको असुरोंके उत्पीड़नसे परित्राण मिलना चाहिये। इसका जो निमित्त बन सके—वही धन्य है।'

'यह शरीर तो नश्वर है। एक दिन जब यह मुझे छोड़ देगा, तब मैं इसे क्यों पकड़े रहनेका आग्रह करूँ!' महर्षिने कहा। 'इससे आप सबकी सेवा हो सके तो इसकी सार्थकता स्वत:सिद्ध है। मेरे प्रभुकी कृपा कि उन्होंने मुझे यह सुअवसर दिया।'

महर्षि समाधि लगाकर बैठ गये। योगके द्वारा उन्होंने प्राणोत्सर्ग कर दिया। जंगली गायोंने उनके शरीरका मेद-मांस चाट लिया। अस्थियोंसे विश्वकर्माने वज्र बनाया और उस वज्रसे इन्द्रने वृत्रासुरको मारा।

(२) देवी कुन्ती

लाक्षाभवनमें पाण्डवोंको जला देनेका षड्यन्त्र दुर्योधनने किया था; किंतु महात्मा विदुरकी सहानुभूति तथा पूर्वसावधानीके कारण पाण्डव बच गये। माता कुन्तीके साथ वे एक सुरंगद्वारा चुपचाप वनमें निकल गये। जब राजा धृतराष्ट्र अपने पुत्रोंके पक्षमें थे और उनके पुत्र कौरव पाण्डवोंको नष्ट करनेपर तुले थे, पाण्डवोंके लिये बिना विशेष सहायक प्राप्त किये प्रकट होना उचित नहीं था। वे वनके मार्गसे एकचक्रा नगरीमें पहुँचे और वहाँ अपना नाम-काम आदि छिपाकर रहने लगे।

एकचक्रा नगरीके समीप वनमें बक नामका एक अत्यन्त बलवान् राक्षस रहता था। उसके भय तथा अत्याचारसे घबराकर नगरवासियोंने उससे संधि कर ली थी। संधिके नियमानुसार नगरके प्रत्येक घरसे बारी-बारी एक-एक मनुष्य उस राक्षसके लिये भोजन लेकर प्रतिदिन जाता था। दुष्ट राक्षस भोजन-सामग्रीके साथ लानेवालेको भी खा जाता था। यही एकचक्रा नगरी थी, जहाँ पाण्डव एक ब्राह्मणके घरमें टिके थे।

नगरके प्रत्येक घरकी जब बारी आती थी राक्षसको भोजन भेजनेकी तो इस ब्राह्मण-परिवारकी भी बारी आनी ही थी। जब इस घरकी बारी आयी तो घरमें रोना-पीटना मच गया। परिवारमें ब्राह्मण, उसकी पत्नी, पुत्र तथा कन्या थी। उनमेंसे प्रत्येक अपनेको राक्षसका भोजन बनाकर दूसरोंके प्राण बचाना चाहता था। रुदनके साथ यह विवाद चल रहा था। प्रत्येक चाहता था कि उसे राक्षसके पास जाने दिया जाय।

युधिष्ठिर भाइयोंके साथ भिक्षा माँगने बाहर गये थे। केवल भीमसेन तथा कुन्तीदेवी घरपर थीं। ब्राह्मण-परिवारकी बातें सुनकर उनका हृदय भर आया। उन्होंने जाकर ब्राह्मणसे कहा—'आप सब क्यों रोते हैं? हम सब आपके आश्रयमें रहते हैं, आपकी विपत्तिमें सहायता करना हमारा कर्तव्य है। आप चिन्ता न करें। मैं अपने एक पुत्रको राक्षसका भोजन लेकर भेज दूँगी।'

'ऐसा कैसे हो सकता है? आप सब हमारे अतिथि हैं। अपने प्राण बचानेके लिये अतिथिका प्राण लेने-जैसा अधर्म हम नहीं करेंगे।' ब्राह्मणने प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया।

कुन्तीदेवीने समझाया कि उनके अत्यन्त बलवान् पुत्र भीमसेन राक्षसको मार देंगे। ब्राह्मण किसी प्रकार भी मानते न थे। अन्तमें कुन्तीने कहा—'आप मेरी बात नहीं मानेंगे, तो भी मेरी आज्ञासे मेरा पुत्र आज राक्षसके पास जायेगा ही। आप उसे रोक नहीं सकते।'
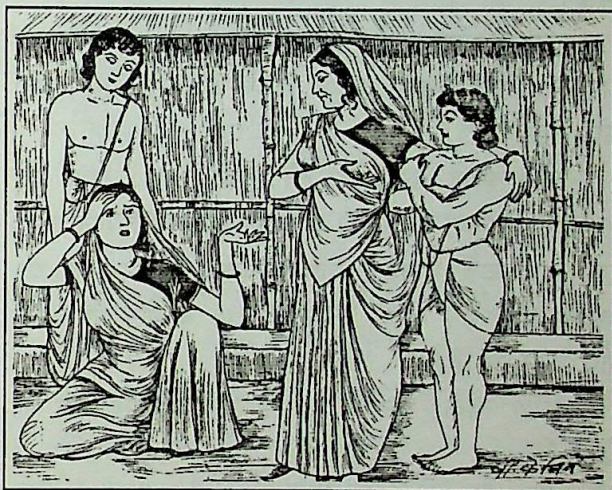
ब्राह्मण विवश हो गया। माताकी आज्ञासे भीमसेन वनमें जानेको उद्यत हो गये। युधिष्ठिर भाइयोंके साथ लौटे तो अन्तमें उन्होंने भी माताकी बातका समर्थन किया। बैलगाड़ीमें भोजन-सामग्री भरकर भीम निश्चित स्थानपर गये। वहाँ उन्होंने बैल खोल दिये और स्वयं भोजनकी पूरी सामग्री खा ली। फिर युद्धमें उन्होंने उस राक्षसको मारकर एकचक्रा नगरीको सदाके लिये निर्भय कर दिया।

भीमसेनको भेजते समय कुन्तीदेवीने कहा था—'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—किसीपर भी विपत्ति आये तो अपने प्राणोंको संकटमें डालकर उसकी रक्षा करना बलवान् क्षत्रियका धर्म है। ये लोग ब्राह्मण हैं, निर्बल हैं और हमारे आश्रयदाता हैं। इनकी रक्षामें कदाचित् प्राण भी चले जायँ तो भी तुम्हारा क्षत्रिय-कुलमें जन्म लेना सार्थक ही होगा। क्षत्राणी ऐसे ही अवसरके लिये पुत्रको जन्म देती है।'

(३) कोसलराज

काशी-नरेशने कोसलपर आक्रमण कर दिया था। कोसलके राजाकी चारों ओर फैली कीर्ति उन्हें असह्य हो गयी थी। युद्धमें उनकी विजय हुई। पराजित नरेश वनमें भाग गये; किंतु प्रजा उनके वियोगमें व्याकुल थी और विजयीको अपना सहयोग नहीं दे रही थी। विजयके गर्वसे मत्त काशी-नरेश प्रजाके असहयोगसे क्रुद्ध हो गये। शत्रुको सर्वथा समाप्त करनेके लिये उन्होंने घोषणा करा दी—'जो कोसलराजको ढूँढ़ लायेगा, उसे सौ स्वर्ण-मुद्राएँ पुरस्कारमें मिलेंगी।'

इस घोषणाका कोई प्रभाव नहीं हुआ। धनके लोभमें अपने धार्मिक राजाको शत्रुके हाथमें देनेवाला अधम वहाँ कोई नहीं था।

कोसलराज वनमें भटकते घूमने लगे। जटाएँ बढ़ गयीं। शरीर कृश हो गया। वे एक वनवासी दीखने लगे। एक दिन उन्हें देखकर एक पथिकने पूछा—'यह वन कितना बड़ा है? वनसे निकलने तथा कोसल पहुँचनेका मार्ग कौन-सा है?'

नरेश चौंके! उन्होंने पूछा—'आप कोसल क्यों जा रहे हैं?'

पथिकने कहा—'विपत्तिमें पड़ा व्यापारी हूँ। मालसे लदी नौका नदीमें डूब चुकी है। अब द्वार-द्वार कहाँ भिक्षा माँगता भटकता फिरूँगा। सुना है कि कोसलके राजा बहुत उदार हैं। अतएव उनके पास जा रहा हूँ।'

'तुम दूरसे आये हो। वनका मार्ग बीहड़ है। चलो, तुम्हें वहाँतक पहुँचा आऊँ।' कुछ देर सोचकर पथिकसे राजाने कहा।

पथिकके साथ वे काशिराजकी सभामें आये। अब उन जटाधारीको कोई पहचानता न था। काशिराजने पूछा—'आप कैसे पधारे?'

उन महत्तमने कहा—'मैं कोसलका राजा हूँ। मुझे पकड़नेके लिये तुमने पुरस्कार घोषित किया है। अब पुरस्कारकी वे सौ स्वर्णमुद्राएँ इस पथिकको दे दो!'

सभामें संनाटा छा गया। सब बातें सुनकर काशिराज अपने सिंहासनसे उठे और बोले—'महाराज! आप-जैसे धर्मात्मा, परोपकारनिष्ठको पराजित करनेकी अपेक्षा उसके चरणाश्रित होनेका गौरव कहीं अधिक है। यह सिंहासन अब आपका है। मुझे अपना अनुचर स्वीकार करनेकी कृपा कीजिये!'

व्यापारीको मुँहमाँगा धन प्राप्त हुआ। कोसल और काशी उसी दिन मित्र राज्य बन गये।
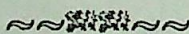
अक्रोध-नीतिके आदर्श

(१) एकनाथजी

पैठणमें एकनाथ महाराजके स्थान एवं गोदावरीके बीच एक धर्मशाला पड़ती थी। वहाँ एक यवन रहता था। वह स्नानार्थी हिंदुओंको बहुत तंग करता था। वे स्नान करके आते और वह उनपर थूक देता। लोगोंको बार-बार स्नान करना पड़ता था। इससे कभी-कभी कोई सज्जन चिढ़ जाते थे—चिढ़ना भी स्वाभाविक था, पर वह अपने स्वभावसे लाचार था।

खासकर एकनाथ महाराज जब-जब स्नान करके लौटते, वह ऊपरसे थूककी पिचकारी उनपर छोड़ता। कभी-कभी उन्हें चार-पाँच बारतक स्नान करना पड़ता था और वह उन्मत्तकी तरह थूकता रहता। पर एकनाथ महाराजकी शान्ति ऐसी विलक्षण थी कि वे परम प्रसन्न होकर माँ गङ्गामें बार-बार स्नान करते और अपना अहोभाग्य मानते कि आज अधिक बार पुण्यसलिला श्रीगोदावरीके अङ्कमें स्थान मिला।

एक दिन वे स्नान करके लौट रहे थे, संयोगसे वह यवन उस दिन वहाँ उपस्थित नहीं था। उसका नियम भङ्ग न हो, अतः एकनाथजी उसकी प्रतीक्षामें वहाँ ठहर गये। कुछ देर रुके भी रहे; फिर उसके आगमनका कोई लक्षण न देखकर ही वहाँसे आगे बढ़े। इस प्रकार प्रायः वह उन्हें प्रतिदिन परेशान किया करता। एक बार वह यवन पेड़पर चढ़कर ऊपरसे बार-बार उनपर थूकता ही गया। एकनाथजी

भी विलक्षण क्षमाशील थे—एक बार भी उनके मनमें न तो किंचित् क्षोभ हुआ और न मुखपर तनिक भी क्रोधका कोई चिह्न ही आया और न ही उनके हृदयमें अणुमात्र प्रतिरोधका भाव ही पैदा हुआ। हर बार वे उसी सहज भावसे स्नान करते और उन्मत्त यवनके थूकको हँसते हुए शिरोधार्य करते। एक सौ आठ बार इस प्रकार हुआ—वे बार-बार स्नान करते गये और मूढ़ यवन क्रोधसे भरकर थूकता गया। पर एकनाथजीकी शान्ति भङ्ग न हो सकी—उनकी सौम्यतामें तनिक भी शिथिलता न आ सकी। इस उन्मत्त क्रोधभरी मूर्खता और परम विवेकयुक्त अनुपम सहिष्णुताका बेजोड़ द्वन्द्व देखनेको वहाँ बहुत-से नर-नारी एकत्रित हो गये। आखिर यवन थक गया। वह लज्जित होकर एकनाथजी महाराजके चरणोंमें लोट गया और फिर महाराजके विलक्षण महात्मापनकी स्तुति करने लगा।

अक्रोधका ऐसा उदाहरण बहुत कम देखनेको मिलता है। एक सौ आठ बार उस यवनने तंग किया और एकनाथजी एक सौ आठ बार स्नान करते गये। उनकी इस अक्रोध-नीतिने उस मलिन यवनका हृदय ही पलट दिया—वह स्वयं ही अपनेको अपराधी मानकर उनसे क्षमा-याचना करने लगा। एकनाथजीने कहा—

'भैया! तू अपने स्वभावके वश था, पर तेरे कारण मुझे बार-बार गोदावरी-स्नानका पुण्य प्राप्त हो रहा था।'

सचमुच उपदेशसे जो पाठ हमलोग नहीं पढ़ा सकते, हमारे जीवनका थोड़ा-सा आचरण उसकी एक गहरी अमिट छाप छोड़ जाता है, जिससे स्वतः मन प्रभावित हो जाता है। फिर अक्रोध तो जीवनका बड़ा ही ऊँचा सद्गुण है और क्रोध बड़ा ही नीच दुर्गुण है। जो क्रोधको जीत लेता है, वह स्वार्थ और परमार्थ दोनोंमें ही परम लाभ प्राप्त करता है। एकनाथजीका अक्रोध इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

(२) अक्रोधकी परीक्षा

एक जिज्ञासु एक बार किसी संतके पास गया और बोला—'महाराज! कोई ऐसा उपाय बताइये, जिससे मुझे प्रभुका साक्षात्कार हो जाय।' संतने उसे एक वर्षतक एकान्तमें भजन करनेकी आज्ञा दी। जिज्ञासु भजन करने लगा। संतकी कुटियामें एक भंगी सफाई करने आया करता था। वर्ष पूरा होनेके दिन संतने उससे कहा—'आज जब वह जिज्ञासु स्नान करके मेरे पास आने लगे, तब तुम अपनी झाड़ूसे थोड़ी गर्द उसपर उड़ा देना।' ऐसा ही हुआ। जिज्ञासु जब स्नान करके संतके पास चला, रास्तेमें भंगीने उसके ऊपर धूल उड़ा दी। अब तो क्रोधित होकर वह उसे मारने दौड़ा, भंगी भाग निकला। जिज्ञासु फिरसे स्नान करके पवित्र वस्त्रोंको धारणकर संतके पास पहुँचा और बोला—'महाराज! मैं एक वर्षतक एकान्तमें भजन करके आया हूँ।' संतने कहा—'अभी तो तुम साँपकी तरह काटने दौड़ते हो—तुम्हें भगवत्प्राप्ति कहाँ होगी? जाओ, एक वर्ष फिर भजन करो।' जिज्ञासु फिर भजनमें लीन हुआ। दूसरा वर्ष पूरा होनेपर फिर वह ज्यों ही स्नान करके संतके पास जाने लगा, संतकी आज्ञासे भंगीने आज उससे झाड़ू छुला दी। इस बार उसने भंगीको दो-चार कड़ी बात कहकर छोड़ दिया। दुबारा स्नान करके वह जब संतके पास पहुँचा, तब उन्होंने कहा—'अभी तो तुम्हारा मन सर्पकी तरह फुफकारता है—अभी और समय लगेगा। फिर जाओ और एक वर्षतक भजन करो।' जिज्ञासु लौट गया और फिर एक वर्षतक उसने भजनमें

मन लगाया। वर्ष पूरा होनेपर जब वह संत-चरणोंके दर्शनार्थ चला, तब सिखाये हुए भंगीने इस बार कूड़ेसे भरी टोकरी ही उठाकर उसके सिरपर उड़ेल दी। परंतु आज क्रुद्ध होनेके स्थानपर उसका हृदय सच्ची दीनतासे भरा हुआ था, वह विनयपूर्वक भंगीसे बोला—'भाई! तूने मेरा
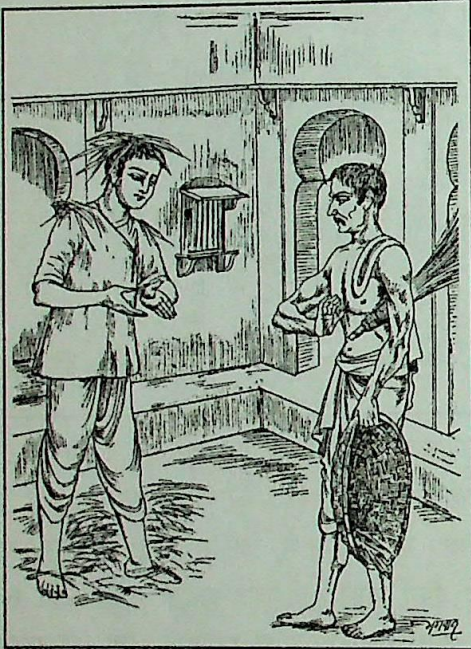
बड़ा उपकार किया है। तू नहीं होता तो मैं क्रोधको किस प्रकार जीत सकता, कैसे उसके चंगुलसे छूटता? मैं तेरा अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। तुझे धन्य है।'

इसीलिये महाप्रभु श्रीचैतन्यने बताया है—

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥

क्षमा और निरहंकारके द्वारा ही इस क्रोधरूपी भयानक शत्रुपर विजय पायी जा सकती है। क्रोधके आगमनमात्रसे ही मनुष्यका कर्तव्याकर्तव्यज्ञान लुप्त हो जाता है और वह जो चाहे सो कर बैठता है। भगवान् श्रीकृष्णने भी गीता (१६। २१)-में कहा है—

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्॥

सचमुच क्रोध बहुत-से पापोंका मूल है। यह जितना दूसरोंके लिये दुःखदायी होता है, उससे कहीं अधिक अपनेको कष्ट देता है।

फिर परमार्थके मार्गमें तो क्रोध एक भयानक प्रबल शत्रु है। जबतक क्रोध है, तबतक परमार्थमें उन्नति होना बड़ा कठिन है। जहाँ जरा-सी प्रतिकूलता सहन करना सम्भव नहीं, वहाँ प्रभु-प्रेममें सब कुछ फूँककर मस्त होनेकी आशा कैसे की जा सकती है? यह तो एक ऐसी आग है, जो सारे शरीरमें ज्वाला फूँक देती है और जिसका तन-मन इसमें धधक उठता है, उससे भजन कहाँ सम्भव है? अतः जगत् और परमार्थ दोनोंके लिये ही क्रोधका नाश परमावश्यक है।
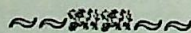
क्षमा-नीतिके आदर्श

(१) महारानी द्रौपदी

बड़ा दारुण दृश्य था। अश्वत्थामाने रात्रिमें पाण्डव-सेना-शिविरमें आग लगा दी और सोते हुए सैनिकोंमेंसे उन सबको मार दिया था जिन्होंने भागनेकी चेष्टा की। महाभारतकी युद्धावशिष्ट सेना उस रात्रिमें ही समाप्त हो गयी। कौरवोंके पक्षमें कृपाचार्य, कृतवर्मा, अश्वत्थामा और विदुर बचे थे। दूसरे पक्षमें पाण्डव, श्रीकृष्ण तथा सात्यकि बचे और वे इसलिये बच गये कि उस दिन युद्धमें विजय प्राप्त करनेके पश्चात् श्रीकृष्ण पाण्डवों और सात्यकिको लेकर अन्यत्र चले गये थे। प्रातःकाल वे लौटे तो देखा, जली-अधजली लाशोंसे सम्पूर्ण शिविरभूमि पटी है।

महारानी द्रौपदीके पाँचों पुत्रोंके शरीर तथा मस्तक पृथक्-पृथक् पड़े थे झुलसे हुए। नारियोंके आर्त-क्रन्दनसे आकाश जैसे रो उठा था। द्रौपदीकी व्यथाका पार नहीं था। एक साथ मृत पड़ी पाँचों पुत्रोंकी देह देखकर वे मूर्च्छित हो गयी थीं। अर्जुनने उन्हें धैर्य दिलाते हुए कहा—'इनके हत्यारे अश्वत्थामाका कटा मस्तक देखकर तुम आजका स्नान करना।'

श्रीकृष्णके साथ गाण्डीवधन्वा अपने रथमें बैठे।

अश्वत्थामा भागा, किंतु उसका अश्व अर्जुनके दिव्य रथसे कैसे दूर जा सकता था? ब्रह्मास्त्रका प्रयोग भी द्रोणपुत्रको बचा नहीं सका। अर्जुनने उसे पकड़कर बाँध लिया और उसी बंदी-दशामें लाकर द्रौपदीके सम्मुख खड़ा कर दिया। भीमसेनने उसे देखते ही दाँत पीसकर कहा—'इस दुष्टको तत्काल मार डालना चाहिये।'

देवी द्रौपदीने सबको रोककर कहा—'अरे, यह क्या किया आपने? छोड़िये, इन्हें अभी छोड़ दीजिये। मेरे पुत्र मारे गये हैं, इसलिये पुत्रकी मृत्युका कितना दुःख माताको होता है—मैं अनुभव कर रही हूँ। इनकी माता कृपी हमारी गुरुपत्नी हैं, उनको भी मेरी ही तरह पुत्र-वियोगका दुःख नहीं होना चाहिये। जिनसे आपने अस्त्र-शस्त्र-संचालन सीखा, उन द्रोणाचार्यजीको ही इस पुत्ररूपमें उपस्थित देखकर हम निष्ठुर कैसे हो सकते हैं? इन्हें अभी छोड़ दीजिये।

जिनके पाँच पुत्र मारे गये, पुत्रोंके शव जिनके सामने पड़े थे और उन पुत्रोंके हत्यारेके प्रति इतनी कृपा, इतनी दया कि अपना पुत्रशोक भूलकर उस हत्यारेके लज्जावनत मुखको देख जिनका हृदय द्रवित हो गया, वे देवी द्रौपदी धन्य हैं!

द्रौपदीकी क्षमाकी विजय हुई। माताने ही पुत्रघातीको क्षमा कर दिया तो दूसरा कौन दण्ड दे सकता था। श्रीकृष्णकी सम्मतिसे अश्वत्थामाके मस्तककी मणि लेकर अर्जुनने उसे छोड़ दिया।

(२) महाकवि जयदेव

गीतगोविन्दके रचयिता महाकवि जयदेव तीर्थयात्रा कर रहे थे। मार्गमें किसी राजाने उनका सम्मान किया और बहुत-सा धन दिया। धनके लोभसे डाकुओंने यात्री बनकर उनका साथ पकड़ा। वनमें पहुँचनेपर उन्होंने जयदेवजीके हाथ-पैर काटकर उन्हें एक कुएँमें फेंक दिया और धन लेकर चलते बने।

कुआँ सूखा था। चेतना लौटनेपर महाकवि उस कुएँमें ही भगवान्‌के नाम और यशका कीर्तन करने लगे। गौड़ेश्वर राजा लक्ष्मणसेनकी सवारी उसी दिन उधरसे निकली। कुएँमेंसे मनुष्यका स्वर आता सुनकर राजाने अपने सेवकोंको आज्ञा दी कि वे उस मनुष्यको बाहर निकालें। जयदेवजीको राजा अपने साथ राजधानी ले गये।

महाभागवत तथा सरस्वतीके वरद पुत्र जयदेवजीकी विद्वत्ता, भगवद्भक्ति एवं संतस्वभावका राजापर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने जयदेवजीको अपनी पञ्चरत्न-सभाका प्रधान बना दिया।

बहुत पूछनेपर भी जयदेवजीने अपने हाथ-पैर काटनेवालोंके सम्बन्धमें कुछ नहीं बताया। इस घटनाको वे भगवान्‌का मङ्गल-विधान ही समझते थे।

राजभवनमें एक बार कोई उत्सव पड़ा। साधु, ब्राह्मण, भिक्षुक बहुत बड़ी संख्यामें भोजन करने आये। उनमें वेश बदले वे डाकू भी आये, जिन्होंने जयदेवजीके हाथ-पैर काटे थे। लूले-पङ्गु जयदेवको पहचानकर और उन्हींको सर्वाध्यक्ष देखकर उनके तो प्राण ही सूख गये। जयदेवजीने भी उन्हें पहचान लिया। वे राजासे बोले—'मेरे कुछ पुराने मित्र आये हैं। आप चाहें तो उन्हें कुछ धन दे सकते हैं।'

नरेशने डाकुओंको समीप बुलाया, उनका खूब सत्कार किया और उन्हें बहुत-सा धन दिया। डाकू तो शीघ्र ही चले जाना चाहते थे वहाँसे। महाकवि जयदेवका मित्र समझकर राजाने उन्हें इतना अधिक धन दिया कि उनको घरतक सुरक्षित भेजना आवश्यक जान पड़ा। अतः कुछ सेवक उनके साथ भेज दिये।

राजसेवकोंने मार्गमें कुतूहलवश पूछा—'हमारे सर्वाध्यक्षसे

आपलोगोंका क्या सम्बध है?'

डाकू बोले—'तुम्हारा सर्वाध्यक्ष हमलोगोंके साथ एक राज्यका कर्मचारी था। इसने वहाँ ऐसा कुकर्म किया कि राजाने इसे प्राणदण्ड दिया; किंतु हमलोगोंने दया करके हाथ-पैर कटवाकर इसे जीवित छुड़वा दिया। हम भेद न खोल दें, इस भयसे उसने हमारा इतना सम्मान कराया है।'

सृष्टिके नियामकके लिये अब इन भक्तापराधियोंका यह पाप असह्य हो गया। पृथ्वी फट गयी। डाकू उसमें समा गये। राजसेवक धन लेकर लौट आये। समाचार पाकर जयदेवजी अत्यन्त दुःखी होकर बोले—'मैंने तो सोचा था कि ये दरिद्र हैं, धनके लोभसे पाप करते हैं, धन मिल जायगा तो पापसे बचेंगे; किंतु मुझ भाग्यहीनके कारण उन्हें प्राण खो देने पड़े। प्रभु उन्हें क्षमा करें! उनकी सद्‌गति हो।'

इसी समय जयदेवजीके हाथ-पैर पहलेके समान हो गये।
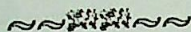
परदुःखकातरता नीतिके परम आदर्श— राजा रन्तिदेव

रन्तिदेव राजा थे—संसारने ऐसा राजा कभी-कदाचित् ही पाया हो। एक राजा और वह अन्नके बिना भूखों मर रहा था। वह अकेला नहीं था, उसकी स्त्री और बच्चे थे—कहना चाहिये कि राजाके साथ रानी और राजकुमार भी थे, सब भूखों मर रहे थे। अन्नका एक दाना भी उनके मुखमें पूरे अड़तालीस दिनोंसे नहीं गया था। अन्न तो दूर—जलके दर्शन भी नहीं हुए थे उन्हें।

राजा रन्तिदेवको न शत्रुओंने हराया था, न डाकुओंने लूटा था और न उनकी प्रजाने विद्रोह ही किया था। उनके राज्यमें अकाल पड़ गया था। अवर्षण जब लगातार वर्षों चलता रहे—इन्द्र जब अपना उत्तरदायित्व भूल जायँ—असहाय मानव कैसे जीवन-निर्वाह करे! महाराज रन्तिदेव उन लोगोंमें नहीं थे, जो प्रजाके धनपर गुलछर्रे उड़ाया करते हैं। प्रजा भूखी रहे तो राजाको पहले उपवास करना चाहिये, यह मान्यता थी रन्तिदेवकी। राज्यमें अकाल पड़ा, अन्नके अभावसे प्रजा पीडित हुई—राज्यकोष और अन्नागारमें जो कुछ था, पूरे-का-पूरा वितरित कर दिया गया।

जब राज्यकोष और अन्नागार रिक्त हो गये—राजाको भी रानी तथा पुत्रके साथ राजधानी छोड़नी पड़ी। पेटके कभी न भरनेवाले गड्ढेमें उन्हें भी तो डालनेके लिये कुछ चाहिये था। राजमहलकी दीवारोंको देखकर पेट कैसे भरता। लेकिन पूरे देशमें अवर्षण चल रहा था। कूप और सरोवरतक सूख गये थे। पूरे अड़तालीस दिन बीत गये, अन्न-जलके दर्शन नहीं हुए।

उनचासवाँ दिन आया। किसीने महाराज रन्तिदेवको पहचान लिया था। सबेरे ही उसने उनके पास थोड़ा-सा घी, खीर, हलवा और जल पहुँचा दिया। भूख-प्याससे व्याकुल, मरणासन्न उस परिवारको भोजन क्या मिला, जैसे जीवन-दान मिला। लेकिन भोजन मिलकर भी वह मिलना नहीं था। महाराज रन्तिदेव प्रसन्न ही हुए जब उन्होंने एक ब्राह्मण अतिथिको आया देखा। इस विपत्तिमें भी अतिथिको भोजन कराये बिना भोजन करनेके दोषसे बच जानेकी प्रसन्नता हुई उन्हें।

ब्राह्मण अतिथि भोजन करके गया ही था कि एक भूखा शूद्र आ पहुँचा। महाराजने उसे भी आदरसे भोजन कराया। लेकिन शूद्रके जाते ही एक दूसरा अतिथि आ गया।
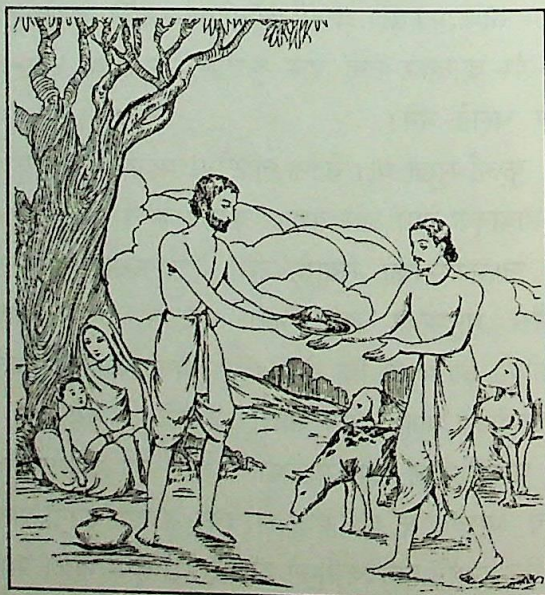
यह नया अतिथि अन्त्यज था और उसके साथ जीभ निकाले, हाँफते कई कुत्ते थे। वह दूरसे ही पुकार रहा था—

'मैं और मेरे कुत्ते बहुत भूखे हैं। मुझे कृपा करके कुछ भोजन दीजिये।'

समस्त प्राणियोंमें जो अपने आराध्यको देखता है, वह माँगनेपर किसीको अस्वीकार कैसे कर दे—अपने प्रभु ही जब भूखे बनकर भोजन माँगते हों। रन्तिदेवने बड़े आदरसे पूरा भोजन इस नये अतिथिको दे दिया। वह और उसके कुत्ते तृप्त होकर चले गये। अब बचा था थोड़ा-सा जल। उस जलसे ही रन्तिदेव अपना कण्ठ सींचने जा रहे थे।

'महाराज! मैं बहुत प्यासा हूँ। मुझे पानी पिला दीजिये।' एक चाण्डालकी पुकार सुनायी पड़ी। वह सचमुच इतना प्यासा था कि बड़े कष्टसे बोल रहा है—यह स्पष्ट प्रतीत होता था।

महाराज रन्तिदेवने पानीका पात्र उठाया, उनके नेत्र भर आये। उन्होंने सर्वव्यापक सर्वेश्वरसे प्रार्थना की—'प्रभो! मैं ऋद्धि, सिद्धि आदि ऐश्वर्य या मोक्ष नहीं चाहता। मैं तो चाहता हूँ कि समस्त प्राणियोंके हृदयमें मेरा निवास हो। उनके सब दुःख मैं भोग लिया करूँ और वे सुखी रहें। यह जल इस समय मेरा जीवन है—मैं इसे जीवित रहनेकी इच्छावाले इस चाण्डालको दे रहा हूँ। इस कर्मका कुछ पुण्य-फल हो तो उसके प्रभावसे संसारके प्राणियोंकी भूख, प्यास, श्रान्ति, दीनता, शोक-विषाद और मोह नष्ट हो जायँ। संसारके सारे प्राणी सुखी हों।'

राजा रन्तिदेवने उस चाण्डालको जल पिला दिया। लेकिन वे स्वयं—उन्हें अब जलकी आवश्यकता कहाँ थी। विभिन्न वेष बनाकर उनके अतिथि होनेवाले त्रिभुवनाधीश ब्रह्मा, भगवान् विष्णु, भगवान् शिव और धर्मराज अपने रूपोंमें प्रत्यक्ष खड़े थे उनके सम्मुख।
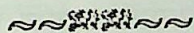
राजधर्मके आदर्श महाराज रघु

सूर्यवंशमें जैसे इक्ष्वाकु, अजमीढ आदि राजा बहुत प्रसिद्ध हुए हैं, उसी प्रकार महाराज रघु भी बड़े प्रसिद्ध, पराक्रमी, नीतिमान्, धर्मात्मा, भगवद्भक्त और पवित्रजीवन हो गये हैं। इन्हींके नामसे 'रघुवंश' प्रसिद्ध हुआ। इसीलिये सच्चिदानन्दघन परमात्मा भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके रघुवर, राघव, रघुपति, रघुवंशविभूषण, रघुनाथ आदि नाम हुए। ये बड़े धर्मात्मा थे। इन्होंने अपने पराक्रमसे समस्त पृथ्वीको अपने अधीन कर लिया था। चारों दिशाओंमें दिग्विजय करके ये समस्त भूमिखण्डके एकच्छत्र सम्राट् हुए। ये प्रजाको बिलकुल कष्ट नहीं देना चाहते थे, 'राज्यकर' भी बहुत ही कम लेते थे और विजित राजाओंको भी केवल अधीन बनाकर छोड़ देते थे, उनसे किसी प्रकारका कर वसूल नहीं करते थे।

एक बार ये दरबारमें बैठे थे कि इनके पास कौत्स नामके एक स्नातक ऋषिकुमार आये। अपने यहाँ स्नातकको देखकर महाराजने उनका विधिवत् स्वागत-सत्कार किया तथा पाद्य-अर्घ्यसे उनकी पूजा की। ऋषिकुमारने विधिवत् उनकी पूजा ग्रहण की और कुशल-प्रश्न पूछा। थोड़ी देरके अनन्तर ऋषिकुमार चलने लगे, तब महाराजने कहा—'ब्रह्मन्! आप कैसे पधारे और बिना कुछ अपना अभिप्राय बताये लौटे क्यों जा रहे हैं?'

ऋषिकुमारने कहा—'राजन्! मैंने आपके दानकी ख्याति सुनी है, आप अद्वितीय दानी हैं। मैं एक प्रयोजनसे आपके पास आया था; किंतु मैंने सुना है कि आपने यज्ञमें अपना समस्त वैभव दान कर दिया है। यहाँ आकर मैंने प्रत्यक्ष देखा कि आपके पास अर्घ्य देनेके लिये भी कोई धातुका पात्र नहीं है और आपने मुझे मिट्टीके पात्रसे अर्घ्य दिया है, अतः अब मैं आपसे कुछ नहीं कह सकता।'

राजाने कहा—'नहीं ब्रह्मन्! आप मुझे अपना अभिप्राय बताइये; मैं यथासाध्य उसे पूरा करनेकी चेष्टा करूँगा।'

स्नातकने कहा—'राजन्! मैंने अपने गुरुके यहाँ रहकर वेदोंका साङ्गोपाङ्ग अध्ययन किया है। अध्ययनके अनन्तर मैंने गुरुजीसे गुरुदक्षिणाके लिये प्रार्थना की। उन्होंने कहा—'हम तुम्हारी सेवासे ही संतुष्ट हैं, मुझे और कुछ भी नहीं चाहिये।' गुरुजीके ऐसा कहनेपर भी मैं बार-बार उनसे गुरुदक्षिणाके लिये आग्रह करता ही रहा। तब अन्तमें उन्होंने झल्लाकर कहा—'अच्छा तो दक्षिणास्वरूप चौदह लाख स्वर्णमुद्रा लाकर हमें दो।' मैं इसीलिये आपके पास आया था।'

महाराजने कहा—'ब्रह्मन्! मेरे हाथोंमें धनुष-बाणके

रहते हुए कोई विद्वान् ब्रह्मचारी ब्राह्मण मेरे यहाँसे विमुख हो जाय तो मेरे राज-पाट, धन-वैभवको धिक्कार है। आप बैठिये, मैं कुबेर-लोकपर चढ़ाई करके उनके यहाँसे धन लाकर आपको अवश्य दूँगा।'

महाराजने सेनाको सुसज्जित होनेकी आज्ञा दी। बात-की-बातमें सेना सुसज्जित हो गयी। निश्चय हुआ कि कल प्रस्थान होगा। प्रातःकाल कोषाध्यक्षने आकर महाराजसे निवेदन किया कि राजन्! रात्रिमें स्वर्णकी वृष्टि हुई और समस्त कोष स्वर्णमुद्राओंसे भर गया है। महाराजने जाकर देखा कि सर्वत्र स्वर्णमुद्राएँ भरी हैं। वहाँ जितनी स्वर्णमुद्राएँ थीं, उन सबको महाराजने ऊँटोंपर लदवाकर ऋषिकुमारके साथ भेजना चाहा। ऋषिकुमारने देखा— ये मुद्राएँ तो नियत संख्यासे बहुत ही अधिक हैं, तब उन्होंने राजासे निवेदन किया 'महाराज! मुझे तो केवल चौदह लाख ही चाहिये। इतनी मुद्राओंको मैं क्या करूँगा, मुझे तो केवल कामभरके लिये चाहिये।' इस त्यागको धन्य है!

महाराजने कहा—'ब्रह्मन्! ये सब आपके ही निमित्त आयी हैं, आप ही इन सबके अधिकारी हैं, आपको ये सब मुद्राएँ लेनी ही होंगी। आपके निमित्त आये हुए द्रव्यको भला, मैं कैसे रख सकता हूँ?'

ऋषिकुमारने बहुत मना किया, किंतु महाराज मानते ही नहीं थे, अन्तमें कौत्सको जितनी आवश्यकता थी, वे उतना ही द्रव्य लेकर अपने गुरुके यहाँ चले गये। शेष जो धन बचा, वह सब ब्राह्मणोंको दे दिया गया। ऐसा दाता पृथ्वीपर कौन होगा, जो इस प्रकार याचकोंका मनोरथ पूर्ण करे? अन्तमें महाराज अपने पुत्र अजको राज्य देकर तपस्या करने वनमें चले गये। अजके पुत्र महाराज दशरथ हुए, जिन्हें साक्षात् परब्रह्म परमात्मा श्रीरामचन्द्रके पिता होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। राजधर्मके आदर्शके रूपमें महाराज रघुका नाम सदाके लिये स्मरणीय हो गया।
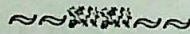
महाराज परीक्षित् और उनकी राज्यनीति

यत्प्रातः संस्कृतं चान्नं सायं तच्च विनश्यति।
तदीयरससम्पुष्टे काये का नाम नित्यता॥

'जो भोजन प्रातःकाल बनाया गया है, सायंकाल वह नष्ट हो जायगा—सड़ने लगेगा। ऐसे अन्नके रससे ही वह शरीर पुष्ट हुआ है, फिर उसमें नित्यता या टिकाऊपन कैसा?'

सुभद्राकुमार अभिमन्युकी पत्नी महाराज विराटकी पुत्री उत्तरा गर्भवती थी। उसके उदरमें कौरव एवं पाण्डवोंका वंशधर था। अश्वत्थामाने उस गर्भस्थ बालकका विनाश करनेके लिये ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया। भयविह्वल उत्तरा भगवान् श्रीकृष्णकी शरणमें गयी। भगवान्ने उसे अभयदान दिया और बालककी रक्षाके लिये वे सूक्ष्मरूपसे उत्तराके गर्भमें स्वयं पहुँच गये। गर्भस्थ शिशुने देखा कि एक प्रचण्ड तेज चारों ओरसे समुद्रकी भाँति उमड़ता हुआ उसे भस्म करने आ रहा है। इसी समय बालकने अँगूठेके बराबर ज्योतिर्मय भगवान्को अपने पासमें देखा। भगवान् अपने कमलनेत्रोंसे बालकको स्नेहपूर्वक देख रहे थे। उनके सुन्दर श्याम-वर्णपर पीताम्बरकी अद्भुत शोभा थी। मुकुट, कुण्डल, अङ्गद, किङ्किणी प्रभृति मणिमय आभरण उन्होंने धारण कर रखे थे। उनकी चार भुजाएँ थीं और उनमें शङ्ख, चक्र, गदा तथा पद्म सुशोभित थे। अपनी गदाको उल्काके समान चारों ओर शीघ्रतासे घुमाकर भगवान् उस उमड़ते हुए आते अस्त्र-तेजको बराबर नष्ट करते जा रहे थे। बालक दस महीनेतक भगवान्को पासमें देखता रहा। वह सोचता ही रहा—'ये कौन हैं?' जन्मका समय आनेपर भगवान् वहाँसे अदृश्य हो गये। बालक मृत उत्पन्न हुआ; क्योंकि जन्मके समय उसपर ब्रह्मास्त्रका प्रभाव पड़ गया था। तुरंत श्रीकृष्णचन्द्र प्रसूतिकागृहमें आये और उन्होंने उस शिशुको जीवित कर दिया। यही बालक परीक्षित्के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

जब परीक्षित् बड़े हुए, पाण्डवोंने इन्हें राज्य सौंप दिया और स्वयं हिमालयपर चले गये। प्रतापी, नीतिज्ञ एवं धर्मात्मा परीक्षित्ने राज्यमें पूरी सुव्यवस्था स्थापित की। एक दिन जब ये दिग्विजय करने निकले तो इन्होंने एक उज्ज्वल साँड़ देखा। जिसके तीन पैर टूट गये थे, मात्र एक

ही पैर शेष था। पास ही एक गाय रोती हुई उदास खड़ी थी। एक काले रंगका शूद्र राजाओंकी भाँति मुकुट पहने, हाथमें डंडा लिये गाय और बैलको पीट रहा था। यह जाननेपर कि गौ पृथ्वीदेवी हैं और वृषभ साक्षात् धर्म है तथा यह कलियुग शूद्र बनकर उन्हें ताड़ना दे रहा है—परीक्षित्ने उस शूद्रको मारनेके लिये तलवार खींच ली। शूद्रने अपना मुकुट उतार दिया और वह परीक्षित्के पैरोंपर गिर पड़ा। महाराजने कहा—'कलि! तुम मेरे राज्यमें मत रहो। तुम जहाँ रहते हो, वहाँ असत्य, दम्भ, छल-कपट आदि अधर्म ही रहते हैं।' कलिने प्रार्थना की—'आप तो चक्रवर्ती सम्राट् हैं; अतः मैं कहाँ रहूँ, यह आप ही मुझे बता दें। मैं आपकी आज्ञा कभी नहीं तोड़ूँगा।' परीक्षित्ने कलिको रहनेके लिये जुआ, शराब, स्त्री, हिंसा और स्वर्ण—ये पाँच स्थान बता दिये। ये ही पाँचों अधर्मरूप कलिके निवास हैं। नीति बताती है कि प्रत्येक कल्याणकामीको इनसे बचना चाहिये।

एक दिन आखेट करते हुए महाराज परीक्षित् वनमें भटक गये। भूख और प्याससे व्याकुल वे एक ऋषिके आश्रममें पहुँचे। ऋषि उस समय ध्यानस्थ थे। राजाने उनसे जल माँगा, पुकारा; पर ऋषिको कुछ पता नहीं लगा। इसी समय कलिने राजापर अपना प्रभाव जनाया। उन्हें लगा कि
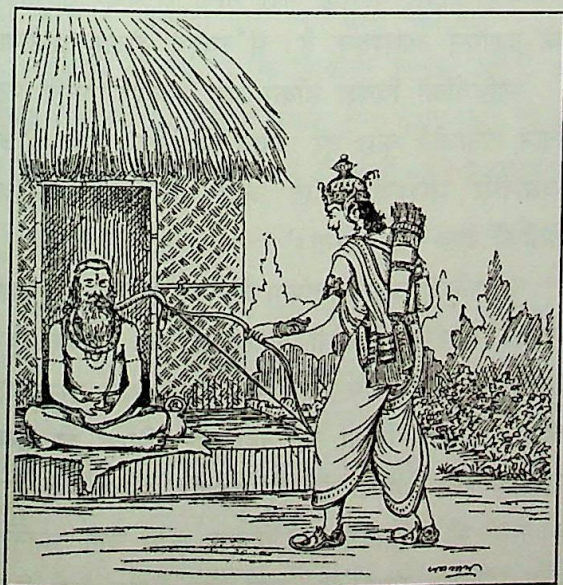
जान-बूझकर ये मुनि मेरा अपमान करते हैं। पासमें ही एक मृत सर्प पड़ा था। उन्होंने उसे धनुषसे उठाकर ऋषिके गलेमें डाल दिया—यह परीक्षा करनेके लिये कि ऋषि ध्यानस्थ हैं या नहीं और फिर वे अपनी राजधानी लौट गये। बालकोंके साथ खेलते हुए उन ऋषिके तेजस्वी पुत्रने जब यह समाचार पाया, तब शाप दे दिया—'इस दुष्ट राजाको आजके सातवें दिन तक्षक काट लेगा।'

घर पहुँचनेपर परीक्षित्ने स्मरण किया—'मुझसे आज बहुत बड़ा अपराध हो गया।' वे पश्चात्ताप कर ही रहे थे, इतनेमें शापकी बातका उन्हें पता लगा। इससे राजाको तनिक भी दुःख नहीं हुआ। अपने पुत्र जनमेजयको राज्य देकर वे गङ्गातटपर जा बैठे। सात दिनोंतक उन्होंने निर्जलव्रतका निश्चय किया। उनके पास उस समय बहुत-से ऋषि-मुनि आये। परीक्षित्ने कहा—ऋषिगण! मुझे शाप मिला, यह तो मुझपर भगवान्‌की कृपा ही हुई। मैं विषयोपभोगोंमें आसक्त हो रहा था, दयामय भगवान्ने शापके बहाने मुझे उनसे अलग कर दिया। अब आप मुझे भगवान्‌का पावन चरित सुनाइये। उसी समय वहाँ घूमते हुए श्रीशुकदेवजी पहुँच गये। परीक्षित्ने उनका पूजन किया। उनके पूछनेपर शुकदेवजीने सात दिनोंमें उन्हें पूरा श्रीमद्भागवतका उपदेश दिया। अन्तमें परीक्षित्ने अपना चित्त भगवान्‌में लगा दिया। तक्षकने आकर उन्हें काटा और उसके विषसे उनका देह भस्म हो गया; पर वे तो पहले ही शरीरसे ऊपर उठ चुके थे। उनको इन सबका पतातक नहीं चला।

महाराज परीक्षित्‌की राज्यनीति—महाभारतने बताया है कि महाराज परीक्षित्ने काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य—इन छहों शत्रुओंपर विजय प्राप्त कर ली थी, उनकी बुद्धि विशाल थी और वे नीतिके विद्वानोंमें सर्वश्रेष्ठ थे—

'षड्वर्गजिन्महाबुद्धिर्नीतिशास्त्रविदुत्तमः ॥'

(महा०, आदि० ४९ । १६)

वे न केवल धर्मके ज्ञाता थे, अपितु धर्मके साक्षात् स्वरूप थे—

धर्मतो धर्मविद् राजा धर्मो विग्रहवानिव ॥

(महा०, आदि० ४९ । ८)

उनके पराक्रमकी कहीं तुलना न थी। वे सभी प्राणियोंके

प्रति समभाव रखते थे। उनके शासनकालमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र सभी अपने-अपने वर्णाश्रमोचित कर्मोंमें संलग्न और प्रसन्नचित्त रहते थे। उनके राज्यमें सब लोग हृष्ट-पुष्ट थे। राजा परीक्षित् चारों वर्णोंको अपने-अपने धर्ममें स्थापित करके उन सबकी धर्मपूर्वक रक्षा करते थे—

चातुर्वर्ण्यं स्वधर्मस्थं स कृत्वा पर्यरक्षत।

(महा०, आदि० ४९। ८)

महाराज परीक्षित् राजधर्म और अर्थनीतिमें अत्यन्त निपुण थे। समस्त सद्गुणोंने स्वयं उनका वरण किया था—

राजधर्मार्थकुशलो युक्तः सर्वगुणैर्वृतः।

(महा०, आदि० ४९। १५)
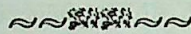
धर्मनीतिके रक्षक राजपुरुषोंकी नीतिमत्ता

(१) छत्रपति शिवाजी

'यदि मेरी माता इतनी सुन्दर होतीं तो मैं भी सुन्दर हुआ होता!' महाराष्ट्र-सेनानायक विजयके पश्चात् परम सुन्दरी नवाब-कन्याको ले आये थे और उन्होंने उसे छत्रपतिके सम्मुख उपस्थित किया। धर्म-रक्षाके व्रती शिवाजी—उन्होंने देखा उस अद्भुत लावण्यको; किंतु उनके उद्गार उन्हींके ही अनुरूप थे। उनके आदेशसे वह यवन-बाला ससम्मान अपने पिताके पास भेजी गयी।

औरंगजेबके धर्मान्धतापूर्ण अत्याचारोंका विपुल विस्तार था। महाराष्ट्र स्वयं भी यवन-राज्योंसे आच्छन्न था। मन्दिर टूटते थे, बलात् धर्मपरिवर्तन कराया जाता था और सतियोंका सतीत्व विलासियोंकी वासनाका भोग बन गया था। उस समय महाराष्ट्र-भूमिने हिंदू-धर्मको एक प्रोज्ज्वल प्रबल प्राण दिया—शिवाजी। शिवाजीका शौर्य, छत्रपतिकी प्रतिभा—दिल्लीतक काँप उठी। दब गये दक्षिणके अत्याचारी हाथ! ऊँची फहराई धर्मकी गैरिक ध्वजा—छत्रपति शिवाजीका राज्य तो अर्पित था समर्थ स्वामी रामदासके चरणोंमें। उनकी करवाल तो उठी थी धर्म-रक्षाके लिये और वह शौर्य जो महाराष्ट्रमें शिवाजीने संचार किया—यवन-सत्ता उससे टकराकर छिन्न-भिन्न ही हो गयी।

शिवाजी और ब्राह्मण

बादशाह औरंगजेबने भेंट करनेके लिये शिवाजीको दिल्ली बुलवाया और वहाँ पहुँचनेपर उसने उन्हें बंदी बना लिया। ऐसे विश्वासघाती शत्रुके साथ नीति अपनाये बिना निस्तार सम्भव नहीं था। शिवाजीने बीमारीका बहाना किया। ब्राह्मणोंको मिठाईके टोकरे दान करने लगे। एक दिन स्वयं तथा उनके पुत्र सम्भाजी मिठाईके टोकरोंमें छिपकर बैठे और औरंगजेबके जालसे निकल गये।

मार्गमें शिवाजी बीमार हो गये। उनके साथ उनके दो विश्वस्त सेवक थे—तानाजी और येसाजी। तीव्र ज्वरमें यात्रा करना निरापद नहीं था। मुर्शिदाबादमें बहुत प्रयत्न करनेपर इन गुप्तवेश-धारियोंको विनायकदेव नामक एक ब्राह्मणने अपने यहाँ आश्रय देना स्वीकार किया। शिवाजीको लगा कि स्वस्थ होकर यात्रा करने योग्य होनेमें पर्याप्त समय लगेगा, अतः उन्होंने साथियोंसे आग्रह किया—'आप दोनों सम्भाजीको लेकर महाराष्ट्र चले जायँ, राज्यकी सुरक्षा एवं ठीक प्रशासन आवश्यक है। मैं स्वस्थ होकर आऊँगा।'

साथियोंको विवश होकर यह आदेश मानना पड़ा। लेकिन तानाजीने कुछ दूर जाकर येसाजीसे कहा—'आप सावधानीसे सम्भाजीको ले जायँ। मैं यहीं गुप्तरूपसे स्वामीकी देख-रेख रखूँगा।'

छत्रपति शिवाजीने अपना वेश बदल रखा था। ब्राह्मण विनायकदेव उन्हें गोस्वामी जानता था। वह अत्यन्त विरक्त स्वभावका था और माताके साथ रहता था। उस विद्वान् ब्राह्मणने विवाह किया ही नहीं था। भिक्षा ही उसकी आजीविकाका साधन थी। परिग्रहकी प्रवृत्ति उसे छूतक नहीं गयी थी। जितनेसे एक दिनका काम चले, उतनी ही भिक्षा प्रतिदिन लाता था। एक दिन भिक्षा कम मिली। ब्राह्मणने भोजन बनाकर माता तथा शिवाजीको खिला दिया और स्वयं भूखा रह गया।

छत्रपति शिवाजीके लिये अपने आश्रयदाताकी यह दरिद्रता असह्य हो गयी। उन्होंने सोचा—'दक्षिण जाकर धन भेजूँगा; किंतु इसका क्या विश्वास कि वह यहाँतक सुरक्षित पहुँच ही जायगा। फिर यह बात प्रकट होनेपर यवन बादशाह बेचारे ब्राह्मणको क्या जीवित रहने देगा?'
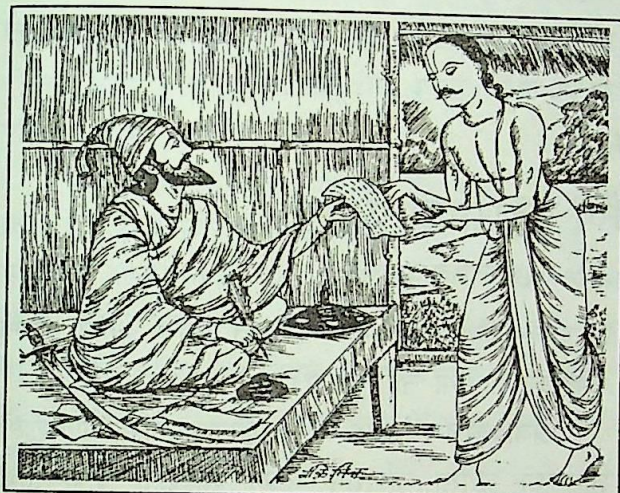
अन्तमें छत्रपतिने ब्राह्मणसे कलम-दावात और कागज लेकर एक पत्र लिखा और उसे वहाँके सूबेदारको दे आनेको दिया। पत्रमें लिखा था—'शिवाजी इस ब्राह्मणके घर टिका है। इसके साथ आकर पकड़ लें। लेकिन इस सूचनाके लिये ब्राह्मणको दो हजार अशर्फियाँ दे दें। ऐसा नहीं करनेपर शिवाजी हाथ आनेवाला नहीं है।'

सूबेदार जानता था कि शिवाजी बातके धनी हैं और उनकी इच्छाके विरुद्ध उन्हें पकड़ लेना हँसी-खेल भी नहीं है। शिवाजीको दिल्ली-दरबारमें उपस्थित करनेपर बादशाहसे पुरस्कारमें एक सूबातक मिल सकना सम्भव था। इसलिये दो सहस्र अशर्फियाँ लेकर वह ब्राह्मणके घर गया और थैली वहाँ देकर शिवाजीको अपने साथ ले चला।

ब्राह्मणको अबतक कुछ पता नहीं था। जब सूबेदार उसके अतिथि गोस्वामीको अपने साथ लेकर चला तो ब्राह्मण बहुत दुःखी हुआ। अचानक उसे गोस्वामीके साथी तानाजी दिखे। वह उनके पास गया और उनसे गोस्वामीके सूबेदारद्वारा पकड़कर ले जानेकी बात सुनायी। तानाजीने बताया—'वे गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक छत्रपति शिवाजी थे। मैं उनका सेवक हूँ।'

ब्राह्मण तो यह सुनते ही मूर्च्छित हो गया। चेतना लौटनेपर सिर पीट-पीटकर रोने लगा—'वे मेरे अतिथि थे। मुझ अधमकी दरिद्रता दूर करनेके लिये उन्होंने अपने-आपको मृत्युके मुखमें दे दिया। मुझ पापीके द्वारा ही वे शत्रुके हाथों दिये गये।'

ब्राह्मण बार-बार हठ करने लगा कि दो सहस्र अशर्फियाँ तानाजी ले लें और किसी प्रकार सूबेदार छत्रपतिको छुड़ायें। तानाजी पहले ही पता लगाकर आये थे कि सूबेदार कल किस समय, किस मार्गसे शिवाजीको दिल्ली ले जायगा। ब्राह्मणको उन्होंने आश्वासन दिया। सूबेदार जब छत्रपतिको लेकर सिपाहियोंके साथ रात्रिमें चला, वनमें पहुँचते ही तानाजीने अचानक आक्रमण कर दिया। उनके साथ पचास सैनिक थे। शिवाजीको उन्होंने सूबेदारके हाथसे मुक्त कर लिया।

(२) गुरु तेगबहादुर

'इस्लाम कबूल कर लो तो पूरा सूबा तुम्हारा हो जायगा!' व्यर्थ था दिल्लीपतिका प्रलोभन!

'लोभ और भय तेगबहादुरके हृदयको नहीं छूते।' गुरुका गम्भीर स्वर गूँजा—'सम्पत्ति चञ्चला है और शरीर नाशवान्। मात्र धर्म ही शाश्वत है।'

पंजाबमें दिल्लीपतिका अत्याचार बढ़ गया तो स्वयं गुरुने लोगोंको कहकर संदेश भिजवाया था कि 'तेगबहादुर इस्लाम कबूल कर लें तो यहाँ सभी कबूल कर लेंगे।' दिल्लीपतिका छलपूर्ण आमन्त्रण, किंतु धर्मके लिये आत्मदान करनेका निश्चय तो स्वयं गुरुने ही किया था।

'सत् श्रीअकाल!' अग्निसे उत्तप्त लाल-लाल सींखचोंसे गुरु तेगबहादुरके शरीरकी बोटी-बोटी अत्याचारी नोच सकता था—उसने अपनी पैशाचिकता पूरी की; किंतु गुरुके हृदयके प्रकाशको एवं उनकी अकाल पुरुषकी जयघोषणाको बंद करना उसके वशकी बात कहाँ थी?

(३) गुरु गोविन्दसिंह

मृत्यु कापुरुषोंको कम्पित करती है। पिताके बलिदानने पुत्रको प्रचण्ड बना दिया। गुरु गोविन्दसिंहने नवीन शङ्खनाद किया पाञ्चालमें। मालाके स्थानपर सिखोंके बलशाली करोंने कृपाण उठा लिये। गुरुके आह्वान 'धर्म तुम्हें पुकार रहा है। धर्मके सैनिको! धर्मरक्षाके लिये शस्त्र धारण करो! जीवन-धर्मपर बलि होनेके लिये।'

'जीवन धर्मपर बलि होनेके लिये!' गुरुकी वाणी गूँजी और साधन—प्राण, शान्त, सरल साधुओंका समुदाय सिंहोंका समाज बन गया। औरंगजेबी अत्याचारके दुर्गपर प्रचण्डतम आघात पड़ने लगे। पाञ्चालसे यवन-सत्ताको समाप्त होनेमें समय नहीं लगा।
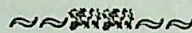
नीतिविद् वीरशिरोमणि महाराणा प्रताप

(श्रीप्रभुदासजी वैरागी, एम्० ए०, बी० एड्०, साहित्यालङ्कार)

मेवाड़की धरतीने अनेक वीर सपूतोंको जन्म दिया है। यहाँके नीतिमान्, धर्मपालक तथा राष्ट्र-प्रेमी नरेशोंका एक गौरवशाली इतिहास रहा है। ये राजा न तो स्वयं कभी अनीतिपर उतरे और न ही उन्होंने अपनी प्रजाको अनीतिपर उतरने दिया। वे सदैव हिन्दू-गौ-ब्राह्मणोंके प्रतिपालक रहे और अपने पराक्रमसे उन्होंने ऐसे कार्य किये, जिन्हें आज भी इतिहास दोहरा रहा है। ऐसे ही क्षत्रिय राजाओंमें मेवाड़के परम प्रतापी महाराणा प्रताप भी एक हैं। जिनका नाम सुनते ही हृदयमें वीर-रसका प्रादुर्भाव होने लगता है।

स्वतन्त्रताप्रिय, आत्माभिमानी तथा अपने कुलगौरवके रक्षक वीरशिरोमणि महाराणा प्रतापका जन्म वि० सं० १५९७ ज्येष्ठ सुदी ३ रविवारको हुआ। युवा होनेपर महाराणा प्रताप मेवाड़की राजगद्दीपर विराजे। उस समयकी शोभा देखते ही बनती थी। लंबा कद, विशाल नेत्र, भरा हुआ चेहरा, ललाटपर तिलक, शौर्यसूचक तेज, फिर मूँछें बड़ी-बड़ी और खड़ी, उन्नत वक्षःस्थल, दीर्घ बाहु एवं सुहावना गेहुआँ रंग—ऐसा था उनका शारीरिक सौन्दर्य। उनके एक हाथमें भाला सुशोभित होता था। दुधारी तलवार सदा कमरमें लटकी रहती थी। धनुष-बाण और कटार भी यथावसर वे धारण करते थे। जब मेवाड़के सूर्यगोखड़ेमें कलात्मक स्वर्ण-रत्नजटित सिंहासनपर वे विराजते थे तो दूसरे विवस्वान्-से प्रतीत होते थे।

उन्होंने एकलिङ्गनाथ भगवान्को मेवाड़का अधिपति मानकर उनके दीवानकी भाँति अपने राज्यका सदैव संचालन किया। कोई भी न्याय देते समय उन्होंने अपनी धर्मनीतिको कभी नहीं छोड़ा।

प्रजावत्सल एवं नीति-निपुण महाराणा प्रतापके गौरवशाली शासनकी प्रशंसा आगरामें मुगल शाहंशाह अकबरतक पहुँची। वह मन-ही-मन चिढ़ने लगा। उस समय अकबरके प्रभावके सम्मुख राजस्थानके कई राजा नतमस्तक हो चुके थे। यही नहीं, उससे उन्होंने अपने सम्बन्ध भी बना लिये थे। परंतु आन-बान और शानके धनी महाराणा प्रताप अपनी नीतिपर अटल थे। उन्हें अपनी मान-मर्यादाका पूरा ध्यान था। अतः उन्होंने निर्भीक होकर मेवाड़का शासन सँभाला। शाहंशाह अकबरकी उन्होंने कोई परवा नहीं की।

अकबरको महाराणा प्रतापकी यह स्वतन्त्रता फूटी आँखों नहीं देखी गयी और उसने उसी समय आमेरके राजा भगवानदास कछवाहाके भतीजे कुँवर मानसिंहको विशाल सेनाके साथ डूँगरपुर और उदयपुरके राजाओंसे शाही अधीनता स्वीकार कराने-हेतु भेजा। महाराणा प्रतापको समझाने स्वयं मानसिंह उदयपुर आया, परंतु स्वाभिमानी महाराणा प्रतापने उसकी एक न सुनी। उसके उदयपुरसे बिदा होते समय महाराणाने उसे एक प्रीतिभोज अवश्य दिया, परंतु पेटदर्दका बहाना बनाकर उस भोजमें वे स्वयं सम्मिलित नहीं हुए; क्योंकि मुगलोंके साथ अपना व्यवहार रखनेवालेको महाराणा प्रताप हीन-दृष्टिसे देखते थे और उसके साथ भोजन तो क्या पंक्तिमें बैठना भी वे अपमान समझते थे। इसी बातपर सरदारों तथा मानसिंहमें कुछ

कहा-सुनी भी हो गयी। महाराणा प्रतापने स्पष्ट कहला दिया कि 'यदि तुम अपने बलपर चढ़ाई करोगे तो हम तुम्हारा स्वागत मालपुरेमें करेंगे और यदि अपने फूफा अर्थात् अकबरके बलपर आओगे तो जहाँ अवसर मिलेगा वहीं सँभाल लेंगे।' मानसिंह अपमानित होकर उलटे पाँव लौट गया। धर्मनीतिके अनुसार महाराणाने भोजनकी पूरी सामग्री तालाबमें फिंकवा दी, जमीन खुदवा दी और उसपर गङ्गाजलका छिड़काव कराकर उस भूमिको पवित्र कराया।

जब अकबरको इस घटनाका पता चला तो उसने विशाल शाही सेनाके साथ मानसिंहको वि० सं० १६३२ में मेवाड़पर आक्रमण-हेतु भेजा। यहाँ आकर बनास नदीके किनारे उसने अपनी छावनी डाली। युद्धके कुछ दिन-पूर्व वह अपने साथियोंको लेकर मेवाड़के जंगलमें शिकार खेलने निकला। गुप्तचरोंने तत्काल वीरवर प्रतापको सूचना दी कि मानसिंह अकेला है और अच्छा अवसर है, उसे शीघ्र मार देना चाहिये। किंतु उन नरपुङ्गवने कहा—'छल-कपटसे शत्रुको मारना क्षत्रियोचित नीतिके अनुकूल नहीं है।' ऐसा कहकर उन्होंने मानसिंहपर आक्रमण करनेसे मना कर दिया।

वि० सं० १६३३ ज्येष्ठ सुदी २ बुधवारको प्रात:काल हल्दीघाटीके रणाङ्गणमें दोनों सेनाओंके मध्य युद्ध छिड़ गया। यह स्वतन्त्रताका संग्राम था। अकबरकी सेनासे लड़नेके लिये महाराणा प्रतापने विशेष युद्ध-नीति बनायी और अपने सामन्त-सरदारों तथा भील-वीरोंको हल्दीघाटीकी विहंगम उपत्यकामें भेज दिया। कुछ सैनिकोंको पहाड़की चोटियोंपर चढ़ा दिया एवं कुछको गिरि-शिखरोंके पीछे छिपा दिया। ज्यों ही मुगल-सेनाने इस घाटीमें प्रवेश किया, उसपर महाराणा एवं उनके वीर सैनिकोंने हमला कर दिया। मैदानमें लड़नेवाले मुगल-सैनिकोंको घाटीमें लड़नेका अनुभव नहीं था। कहाँ ये साठ हजार मुगल सैनिक और कहाँ केवल आठ हजार मेवाड़के रणबाँकुरे! घाटीमें ऐसा तुमुल युद्ध हुआ कि हजारों मुगल मारे गये। रणबाँकुरे महाराणा प्रतापने संकेत करके अपने प्यारे घोड़े चेतकको ऐसा उछाला कि उसके दोनों पैर प्रतिपक्षी गजराजके गण्डस्थलपर जा टिके। अपने भालेके एक ही वारसे उन्होंने महावतको मार डाला तथा हाथीके लौह-निर्मित हौदेको भी तोड़ डाला। उसपर बैठा मानसिंह बाल-बाल बच गया अन्यथा युद्धका निर्णय उसी समय हो जाता। नीति-निपुण महाराणाकी इस युद्धनीतिसे शाही सेना आकुल-व्याकुल हो उठी तथा येन-केन-प्रकारेण अपने प्राणोंकी रक्षा करती हुई वापस लौट गयी।

महाराणा प्रताप अत्यन्त पराक्रमी थे। अपने शरीरपर भारी वजनदार लौह-कवच पहनकर वे युद्धभूमिमें आसानीसे इधर-उधर घूम लेते और तलवार चला लेते। रणाङ्गणमें महाराणा प्रतापके सबल हाथोंद्वारा प्रहार करते समय तलवार चक्र बनाती हुई ऐसी घूमती कि जिधर देखो उधर बड़े-बड़े समर्थ योद्धाओंके रुण्ड-मुण्ड कटते हुए दिखायी देते और कायर तो तत्क्षण भाग छूटते। वे अपना बहुत भारी लोहेका भाला कमलनालकी भाँति सहज ढंगसे चलाकर शत्रुकी छातीमें घोंप देते। रणभूमिमें महाराणा प्रतापके दर्शनमात्रसे मेवाड़ी वीरोंमें युद्धोन्मेष बना रहता तथा थके हुए शरीरमें भी नवीन प्राणोंका संचार हो जाता। दिवेरके युद्धमें बहलोल खाँ अपनी अकड़ दिखाता हुआ महाराणा प्रतापके समक्ष आ गया। सम्भवत: वह महाराणाके अतुल पराक्रमको नहीं जानता था। कुछ बोलकर वह वार करे इसके पूर्व ही शक्तिपुञ्ज महाराणा प्रतापने अपनी तलवारसे घोड़ेसहित बहलोल खाँको दो फाड़ोंमें चीर डाला। दूसरी ओर महाराणा प्रतापके पुत्र युवराज अमरसिंहने अपना भाला सुल्तान खाँकी छातीमें इतने जोरसे मारा कि वह उसके साथ-साथ घोड़ेके भी आर-पार निकलकर जमीनमें जा घुसा। इस प्रकार अकबरद्वारा किये गये दूसरे हमलेमें भी उसे सफलता नहीं मिली—वह मुँहकी खा गया।

महाराणा प्रताप युद्ध करते समय भी अपना व्यवहार धर्मानुकूल रखते थे। एक बार युद्ध-कालमें महाराणाके शूरवीर सरदारोंके हाथ शाही सेनापति मिर्जा खाँकी औरतें आ गयीं। भारतीय संस्कृतिके परम उदात्त संरक्षक वीर-शिरोमणि महाराणा प्रतापने उनको अपनी बहिन-बेटीकी भाँति सम्मानित किया और आदरसहित मिर्जा खाँके पास पहुँचा दिया।

वि०सं० १६३५ में शाहबाज खाँके नेतृत्वमें एक और विशाल सेना महाराणा प्रतापपर आक्रमण करनेके लिये भेजी गयी। इस सेनाने घोर युद्ध करके कुंभलगढ़ और केलवाड़ापर अपना आधिपत्य कर लिया, गोगुन्दा एवं

उदयपुरको खूब लूटा तथा महाराणाको मारने-हेतु बहुविध प्रयास किया; परंतु इसमें उसे सफलता नहीं मिली। महाराणा प्रताप इस समय दुर्दम्य पहाड़ी क्षेत्र मचीन्द नामक स्थानपर आ गये और अपने परिवारसहित संकटके दिन व्यतीत करने लगे। मेवाड़में यत्र-तत्र मुगलसेना बिखरी पड़ी थी। महाराणा अर्थाभावसे बहुत दुःखी थे। यहाँ उन्होंने घासकी रोटियाँ खायीं। ऐसी ही एक घासकी रोटी युवराज कुमार अमरसिंहके हाथसे जंगली बिलाव झपटकर ले गया तब उस दृश्यको देखकर महाराणा प्रतापका हृदय क्षुब्ध तो हुआ परंतु उन्होंने अपनी नैतिकतामें कमी नहीं आने दी तथा मान-मर्यादाकी रक्षाके लिये नगाधिराज हिमालयके समान वे अडिग बने रहे। इस घोर विपत्तिके समयमें उन्होंने बड़ी कठिन प्रतिज्ञा की—

'जबतक मैं शत्रुओंसे अपनी पावन मातृभूमिको मुक्त नहीं करा लेता तबतक न तो महलोंमें रहूँगा, न शय्यापर सोऊँगा और न सोने-चाँदी अथवा किसी धातुके पात्रमें भोजन करूँगा। वृक्षोंकी छावँ ही मेरा महल, घास ही मेरा बिछौना और पत्ते ही मेरे भोजनके पात्र होंगे।'

इसी बीच महाराणा प्रतापको ढूँढ़ते हुए उनके प्रधानमन्त्री भामाशाह उनके पास आये और २० लाख अशर्फियाँ तथा २५ लाख रुपये भेंट करके उनसे पुनः सैन्य संगठनकर मेवाड़को मुक्त करानेका निवेदन किया। इस अधिसंख्य राशिको प्राप्तकर महाराणा प्रतापने फिरसे नूतन उत्साहके साथ क्षत्रिय-वीरों तथा भील-समुदायको एकत्रित किया। उन्हें पुनः युद्ध-संचालनकी दीक्षा देकर अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित किया। पुनः अपना पराक्रम बढ़ाया और श्रीएकलिङ्गनाथके जयघोषके साथ मुगल-सेनापर सभी दिशाओंसे दुर्धर्ष आक्रमण किया। महाराणाने इस युद्धमें फिरसे कुंभलगढ़को जीत लिया और मेवाड़का पूरा प्रदेश उनके आधिपत्यमें आ गया, परंतु चित्तौड़गढ़ और माण्डलगढ़ वे अपने अधीन नहीं कर पाये। उधर शाहंशाह अकबर पंजाब तथा दक्षिणमें उठे बवंडरमें उलझ गया और मेवाड़पर बार-बार आक्रमणकी असफलतासे निराश होकर उसने महाराणा प्रतापसे युद्ध करना छोड़ दिया। इस प्रकार महाराणा प्रतापने दो वर्षतक मेवाड़में पुनः धर्म-राज्य किया।

एक बार शिकार खेलते समय मृगराजसिंह दूरसे उनकी ओर लपककर आता दीखा। महाराणा प्रतापने सजग होकर अपने धनुषपर शर संधान करके साक्रोश उसे इतनी जोरसे छोड़ा कि बाणके लगते ही सिंह तो धराशायी हो गया। परंतु मेवाड़के इन नरसिंह महाराणा प्रतापके पेटमें भी बड़ी आँतपर चोट आ गयी। वे रुग्ण हो गये। जब वे मृत्यु-शय्यापर लेटे हुए थे तब सरदारोंने उन्हें हताश देखकर उनकी हताशाका कारण पूछा। उस समय महाराणाने कहा—'मेरे चले जानेपर मेवाड़का क्या होगा?' तभी सभी सरदारोंने सौगन्ध खाकर महाराणा प्रतापको विश्वस्त किया कि वे उनके उद्देश्योंको पूरा करेंगे तथा सिसोदिया राजवंशकी प्रतिष्ठा अक्षुण्ण बनाये रखेंगे। इससे महाराणा प्रतापको बड़ा संतोष हुआ। जीवनपर्यन्त अपने महिमामय व्यक्तित्वसे मेवाड़की रक्षा करते हुए महाराणा प्रतापका वि० सं० १६५३ माघ शुक्ल प्रतिपदाके दिन प्राणोत्सर्ग हो गया।

बीकानेरके रावराजा, अकबरके दरबारके नवरत्न श्रीकृष्णचरणानुरागी भक्ति-शृङ्गारके रचयिता सिद्धहस्त कवि श्रीपृथ्वीराज राठौरने निम्न पंक्ति लिखकर महाराणा प्रतापकी अभ्यर्थना की—

'माई एहड़ा पूत जण, जेहड़ा राण प्रताप'

इसके बाद महाराणा प्रतापके यशस्वी वंशजोंने अपने शासनमें राजनीतिके साथ-साथ मान-मर्यादाका भी पूरा-पूरा पालन किया तथा धर्मानुसार मेवाड़का शासन चलाया, मेवाड़के महाराणाओंमें भक्ति एवं शक्तिका अद्भुत समन्वय एक साथ देखनेको मिलता है। वे श्रीएकलिङ्गनाथकी सेवामें पहुँचकर भगवान्के अभिषेकहेतु जलका घड़ा स्वयं बावड़ीसे भरकर अपने कंधोंपर उठा लाते। रथयात्रापर श्रीजगन्नाथप्रभुके रथकी डोर स्वयं खींचते, जलझूलनी एकादशीपर श्रीचारभुजानाथकी राम-रेवाड़ीको अपने कंधेपर उठाते एवं प्रत्येक गोवर्धनपूजा तथा अन्नकूटोत्सवपर प्रभु श्रीनाथजीके दर्शन और सेवार्थ सम्मिलित होते।

आज भी यह वीरवंश मेवाड़की वसुधापर प्रणम्य बना हुआ है।

नीति-निपुण नरेश बुन्देलकेसरी महाराज छत्रसाल बुन्देला

(पं० श्रीहरिविष्णुजी अवस्थी)

भारतीय इतिहासमें 'बुन्देलकेसरी' विशेषणसे विभूषित महाराज छत्रसाल बुन्देला (सन् १७०७—१७३२ ई०) एक ऐसे कुशल शासक हुए, जिन्होंने अपने प्रचण्ड बाहुबलसे मुगल साम्राज्यके विस्तृत भू-भागपर अधिकार कर पन्ना नामक राज्यकी स्थापना की। एक कविने छत्रसालके राज्यकी सीमाओंका उल्लेख करते हुए लिखा है—

इत जमुना उत नर्मदा, इत चंबल उत टौंस।
छत्रसाल सों लरन की, रही न काहू हौंस॥

प्रचण्ड बाहुबलसे विशाल राज्य तो स्थापित किया जा सकता है, किंतु राज्य-संचालनहेतु चाहिये दूरदर्शी, बुद्धिमान् एवं नीतिमान् नरेश। मानव-इतिहासके सबसे विलक्षण राजनीतिज्ञ चाणक्यने कहा है—'राज्यमूलमिन्द्रियजयः' अर्थात् सत्ताका मूल है इन्द्रियोंको वशमें रखना। नैतिकता तो राजनीतिकी रीढ़ होती है।

महाराज छत्रसालको एक वीर योद्धाके साथ-ही-साथ एक नीति-निपुण नरेशके रूपमें भी स्मरण किया जाता है। उन्होंने बहुत अंशोंतक रामराज्य स्थापित कर दिया था। वे प्रजाका पुत्रवत् पालन करते थे। मदोद्धतको यथेष्ट दण्ड देना और शरणागत, दीन तथा गौ-ब्राह्मणोंकी रक्षा करना उनका एकमात्र ध्येय था। उन्होंने स्त्रियोंके प्रति दुर्व्यवहार करनेवालोंके लिये कठिन दण्डकी व्यवस्था की। वे उदार और प्रजापालनमें तत्पर शासक थे।'

महाराज छत्रसालका कलम और करवालपर समान अधिकार था। एक ओर जहाँ वे वीर योद्धा थे वहीं दूसरी ओर एक सफल कवि भी। उनकी भक्तिविषयक रचनाएँ श्रीराधाकृष्ण, भगवान् श्रीराम एवं बजरंगबली श्रीहनुमान्से मुख्यतः सम्बन्धित हैं। भक्ति-सम्बन्धी रचनाओंके साथ-ही-साथ उन्होंने नीतिविषयक छन्दोंका भी सृजन किया है। उनके द्वारा रचित नीतिमञ्जरीका राजनीति-सम्बन्धी एक छन्द द्रष्टव्य है—

चाहो धन धाम भूमि भूषन भलाई भूरि
सुजस सहूरजुत रैयत कों लालियौ।
तोड़ादार घोड़ादार बीरन सों प्रीति करि
साहस सों जीत जंग खेल तें न चालियौ॥
सालियो उदंडनि को दंडनि को दीजौ दंड
करिकै घमंड घाव दीन पै न घालियौ।
विनती छत्रसाल करै, होय जो नरेश देश
रहै न कलेस लेस मेरो कह्यौ पालियौ॥

उपर्युक्त छन्दका अति संक्षिप्त रूप भी द्रष्टव्य है—

राजी सब रैयत रहै, ताजी रहै सिपाहि।
छत्रसाल, ता राज कौ, बार न बाँको जाहि॥

राजनीतिमें शत्रुपर दया दिखानेपर एक प्रचण्ड योद्धा पृथ्वीराज चौहानको क्या दुष्परिणाम भोगना पड़ा, उसकी ओर संकेत करते हुए महाराज छत्रसाल लिखते हैं—

अपुनो मन-भायौ कियौ गहि गोरी सुलतान।
सात बार छाँड्यौ नृपति, कुमति करी चहुवान॥
कुमति करी चहुवान, ताहि निंदत सब कोऊ।
असुर बैरि इक बार पकरि काढ़े दृग दोऊ॥
दोउ दीन की बैर आदि अंतहि चलि आयौ।
कहि नृप छता बिचारि कियौ अपुनों मन-भायौ॥

स्वार्थ और परमार्थको परिभाषित करते हुए वे लिखते हैं—

निज स्वारथ सो पाप नहि, परमारथ सो पुन्न।
दिये इकाई सुन्न ज्यों, होतु छता दस गुन्न॥

अपनी वृद्धावस्थामें मुहम्मद खाँ बंगस जफर जंगद्वारा राज्यपर किये गये आक्रमणका सामना करनेमें अपनेको असमर्थ समझते हुए उन्होंने इस नाजुक अवसरपर बाजीराव पेशवासे सहायता लेनेमें कोई संकोच नहीं किया और बाजीरावको आमन्त्रित करते हुए लिखा—

जो बीती गजराय पर, सो बीती अब आय।
बाजी जाति बुंदेल की, राखौ बाजीराय॥

छत्रसालका पत्र पाते ही बाजीराव पेशवा एक लक्ष घुड़-सवारोंकी विशाल सेना लेकर उनकी सहायताहेतु आ पहुँचे और उन्होंने पन्ना राज्यको बंगसके हाथोंमें जानेसे बचा लिया। महाराजने इस उपकारके बदले बाजीरावको अपना तीसरा पुत्र मानकर पन्ना राज्यका तीसरा भाग उन्हें प्रदान कर अपने वचनका पालन किया। अन्ततक अपनी राजनीतिक सूझ-बूझसे उन्होंने पन्ना राज्यकी रक्षा की।

महाराज छत्रसालका बुन्देलखण्डमें वही स्थान है, जो महाराणा प्रतापका राजस्थानमें, छत्रपति शिवाजीका महाराष्ट्रमें या गुरु गोविन्दसिंहका पंजाबमें। चारों एक ही पन्थके पथिक थे।

धर्म, राज्य और नीति

(राधेश्याम खेमका)

आजकल देशमें एक विवाद चल पड़ा है कि धर्मको राजनीतिसे अलग रखा जाय।

वास्तवमें मनुष्यका एक स्वभाव है कि वह निरन्तर सुख चाहता है—इस लोकमें भी और परलोकमें भी। इसके लिये वह विविध उपाय भी करता है, पर यह एक अत्यन्त विचारणीय प्रश्न है कि व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सुखी कैसे बनें? इस लोकमें अर्थात् जीवनकालमें शरीर-निर्वाहके साधन सुगमतासे प्राप्त हो जायँ और विभिन्न चिन्ताओंसे जीव मुक्त हो जाय तथा मृत्युके बाद जन्म-मरणके बन्धनसे छूट जाय एवं अनन्त शान्ति तथा आनन्दमें निमग्न हो जाय, यही वास्तविक सुख है। इस सुखकी प्राप्ति कैसे हो? इस सम्बन्धमें हमारे ऋषि-महर्षि और शास्त्रोंने पूर्णरूपसे विचार किया है और वे इस निष्कर्षपर पहुँचे कि मानव-योनि प्राप्त होनेपर ही जीव अपना कल्याण कर पाता है अर्थात् अपनी उन्नतिका मार्ग प्रशस्त करता है। अपने शास्त्रोंके अनुसार संसारमें चौरासी लाख योनियाँ हैं, परंतु मनुष्य-योनिसे अतिरिक्त पशु-पक्षी, कीट-पतंगादि सभी योनियाँ निकृष्ट योनिके अन्तर्गत मानी जाती हैं। इन निकृष्ट योनियोंमें जीवकी उन्नतिके लिये कोई साधन नहीं होता। जन्म लेना और प्रारब्धके अनुसार सुख-दुःख भोगकर मर जाना—इतना मात्र ही प्रकृतिका नियम है। एकमात्र मनुष्य-योनि ही ऐसी योनि है, जिसे पाकर जीव श्रुति-स्मृत्यादि शास्त्रोंके अनुसार अपने विवेक और बुद्धिके द्वारा धर्माधर्मका विचार करता है तथा अपने कल्याणका साधन ढूँढ़ता है। अपने शास्त्रोंमें यह कहा गया है कि जिसके आचरणसे अभ्युदय तथा निःश्रेयसकी प्राप्ति होती है, उसका नाम धर्म है—

'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः'।

यहाँ अभ्युदयका तात्पर्य है—लौकिक जीवनमें उन्नति करना। निःश्रेयस्का अर्थ इस प्रकार समझना चाहिये—श्रेयस्का अर्थ है कल्याण। जिस कल्याणसे बढ़कर दूसरा कोई बड़ा या अधिक महत्त्वका कल्याण न हो, उस सर्वश्रेष्ठ या सर्वोपरि कल्याणको निःश्रेयस कहते हैं। सर्वश्रेष्ठ कल्याण है—'मोक्ष' अर्थात् जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्ति। इसीलिये भारतीय संस्कृतिमें मानव-जीवनकी सफलताके चार प्रकारके पुरुषार्थ कहे गये हैं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें अन्तिम लक्ष्य मोक्ष ही है। यदि प्राणी मानव-जन्म लेकर भी मोक्ष प्राप्त नहीं कर सका तो उसने जीवन व्यर्थ ही गँवाया। वह **'पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम्'** के चक्करमें पड़ा रहेगा। भारतकी यही विशेषता है कि यहाँ धर्मको प्रधानता दी गयी है। कारण, धर्मका सीधा सम्बन्ध मोक्षसे है। धर्मसे अविरुद्ध काम और अर्थका सेवन करता हुआ मानव यहाँ मोक्ष प्राप्त कर लेता है। इसलिये सर्वतोभावेन सबको धर्मका पालन करना चाहिये।

आजकल कुछ लोग कहते हैं कि 'धर्मको राजनीतिसे अलग रखा जाय', यह बात वैसी ही है जैसे शरीरसे आत्माको निकालकर कोई खाने-पीने, चलने-फिरनेकी पूर्ण आशा रखता है। यह उसकी मूढ़ता या विक्षिप्तता ही कही जायगी। वस्तुतः व्यक्ति, समाज और देश, सब मिलकर जो एक राज्य है, वह शरीर है तथा धर्म उसकी आत्मा है। आत्माके बिना शरीर शव है, निश्चेष्ट है और शरीरके बिना आत्माका कोई ज्ञान और परिचय नहीं।

धर्म मानवमात्रका एक ऐसा उचित कर्तव्य है, जिसका पालन करनेसे व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा सम्पूर्ण लोककी स्थिति, सत्ता अक्षुण्ण बनी रहती है एवं जिससे

मानव इस लोकमें अभ्युदय और परलोकमें परमात्माके प्राप्तिरूप नि:श्रेयसको प्राप्त करते हैं। अत: राजा या राज्य-व्यवस्थाकी आवश्यकता ही इसलिये है कि वह प्रजाके धर्म-पालनमें किसी प्रकारकी अड़चन या व्यवधान न आने दे। यदि राजा या राज्य-व्यवस्थाके रहते प्रजा अपने धर्मका पालन नहीं कर सकती तो राजा या राज्य-व्यवस्थाकी क्या आवश्यकता है? राज्य-व्यवस्थाके रहते यदि प्रजामें अनाचार, अत्याचार और धर्महीनताका नग्न ताण्डव होता है तो फिर राज्य-व्यवस्थाकी सार्थकता ही क्या है?

वास्तवमें इस जगत्के दो रूप हैं—एक सूक्ष्म तथा दूसरा स्थूल। इसीको अन्तर्जगत् तथा बाह्यजगत् भी कह सकते हैं। अन्तर्जगत्को नियन्त्रणमें रखनेके लिये धर्मकी आवश्यकता होती है तथा बाह्यजगत्को नियन्त्रणमें रखनेके लिये राज्यकी स्थापना की जाती है। राज्यका अनुशासन जहाँ शरीरमय स्थूल जगत्पर नियन्त्रण लगाता है, धर्मका अनुशासन वहाँ मनोमय जगत्पर सूक्ष्म नियन्त्रण लगाता है अर्थात् मन-बुद्धिपर इसका प्रभाव पड़ता है। धर्महीनताके कारण यदि सूक्ष्म मानसिक जगत्में अशान्ति एवं उपद्रव आ गया तो स्थूल शारीरिक जगत्में अशान्ति एवं उपद्रवका होना निश्चित ही है। मानसिक सूक्ष्म जगत्को नियन्त्रणमें रखनेके लिये धर्मानुशासन ही समर्थ है। राज्यके प्रभाव तथा अनुशासनकी अपेक्षा धर्मका अनुशासन कहीं अधिक बलवान् होता है। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा सम्पूर्ण लोक केवल राजकीय अनुशासनपर ही अवलम्बित नहीं हैं, इसमें धर्मकी भी आवश्यकता है। लोकयात्राका निर्वाह धर्म तथा राज्य दोनोंसे चलता है। धर्मकी रक्षाके लिये ही राज्यकी स्थापना होती है तथा राज्यकी रक्षाके लिये धर्मकी आवश्यकता होती है। राज्य न रहे तो धर्म नहीं रह सकता और धर्म न रहे तो राज्य उजड़ते देर नहीं लगती। राज्यके द्वारा यदि धर्मकी स्थापना न की जाय तो सारी प्रजा धर्मसे शून्य होकर निरंकुश हो जायगी और राजकीय अनुशासनका उल्लंघन करने लगेगी। धर्मसे विहीन राज्यमें दुष्टोंका दल-बल बढ़ने लग जाता है और फिर राज्यमें मनुष्यके द्वारा ही मनुष्यपर घोर अन्याय, अत्याचार होने लग जाता है। धर्मकी भावनाओंसे शून्य होनेके कारण उच्छृंखल, उद्दण्ड, अन्यायियोंकी संख्या इतनी अधिक मात्रामें बढ़ जाती है कि कोई भी प्रभावशाली शासक या राजकीय कर्मचारी उनपर नियन्त्रण लगानेमें सफल नहीं हो सकता और कुछ ही वर्षोंमें सारा राज्य तथा राष्ट्र उजड़ जाता है एवं अपने किसी बलवान् शत्रुके वशमें होकर सदाके लिये परतन्त्र हो जाता है। धर्मका अनुशासन तथा राज्यका अनुशासन दोनों मिलकर ही व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा विश्वकी स्थिति,सत्ताको सुरक्षित रखे रहते हैं। शारीरिक स्थूल जगत्को राजकीय अनुशासन तथा मानसिक सूक्ष्म जगत्को धार्मिक अनुशासन अपने नियन्त्रणमें रखता है और दोनोंके नियन्त्रणमें रहनेसे ही स्थिति, सत्ताका अस्तित्व रह सकता है। अन्यथा अतिशीघ्र ही राज्य तथा राष्ट्र—दोनों ही नष्ट हो जाते हैं।

किसी भी देशको अधिक दिनोंतक गुलाम बनाकर रखनेके लिये वहाँके धर्म तथा संस्कृतिको मिटाना आवश्यक होता है, यही कारण है कि कुछ वर्षों-पूर्वतक जब भारत परतन्त्रताकी बेड़ीमें कसा था और यहाँके शासक अंग्रेज थे तो इन अंग्रेजोंने भी यहाँकी संस्कृतिको मिटानेका भरपूर प्रयास किया। भारतीय संस्कृतिके आधारभूत ग्रन्थ 'वेद' जिन्हें हम अनादि, अपौरुषेय और साक्षात् भगवद्वाणीके रूपमें स्वीकारते हैं, मैक्समूलर, मेकडानल-जैसे पाश्चात्त्य विद्वानोंने अपना सम्पूर्ण जीवन यह सिद्ध करनेमें ही बिताया कि वे मनुष्यद्वारा निर्मित हैं और अमुक समयमें बनाये गये हैं। उनका लक्ष्य था 'वेदोंमें जो हमारी अटूट श्रद्धा है, हम इसे परमेश्वरकी

वाणी मानते हैं, उसे क्षति पहुँचे', पर यह कार्य इतना सरल नहीं था।

आज देशके कुछ कर्णधार भारतीय संस्कृतिकी दुहाई तो देते हैं, पर उनकी शिक्षा-दीक्षा विदेशी परिवेशमें होनेके कारण वे यहाँकी संस्कृतिसे पूर्ण अपरिचित-जैसे हैं। इनमेंसे कुछ तो यहाँतक कहते हैं कि पाश्चात्त्य देशोंमें राजनीतिक दर्शन है, परंतु भारतमें कोई राजनीतिक दर्शन नहीं है। उनकी दृष्टिमें प्राचीन भारतमें राजनीतिज्ञ दार्शनिक नहीं थे, परंतु उनका यह कथन कितना निराधार है? हमारे आर्षग्रन्थ वेद, जिसमें वेदान्त भी है और राजनीति भी है। मनु, याज्ञवल्क्य आदिके धर्मशास्त्रोंमें दर्शन भी है और राजनीति भी है। वेदान्तदर्शनके रचयिता वेदव्यास ही महाभारतके भी रचयिता हैं, जो इस देशके सबसे बड़े दार्शनिक और सबसे बड़े राजनीतिज्ञ हैं। बृहस्पति, शुक्र, कणिक, कौटिल्य, कामन्दक आदि सभी राजनीतिक दार्शनिक हुए हैं। योगवासिष्ठके वसिष्ठ जो सूर्यवंशकी राजनीतिके कर्णधार थे, महान् दार्शनिक और महान् राजनीतिज्ञ भी थे। हमारे विभिन्न पुराण और रामायण तथा महाभारत आदि ग्रन्थ भारतीय दर्शनके साथ-साथ राजनीतिक शास्त्र भी हैं। महाभारतका मोक्षधर्म, गीताका दर्शन और शान्तिपर्वका राजधर्म तो इसके उदाहरण ही हैं। पर भारतीय राजनीतिकी यह विशेषता रही है कि वह 'सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय' है।

न वै राज्यं न राजाऽऽसीन्न च दण्डो न दाण्डिकः।
धर्मेणैव प्रजाः सर्वा रक्षन्ति स्म परस्परम्॥

(महा०, शान्ति० ५९।१४)

जहाँ राजा धार्मिक होता है और प्रजा भी धार्मिक होती है, वहाँ कोई किसीका शोषक नहीं होता, सब एक-दूसरेके पोषक, रक्षक और हितचिन्तक होते हैं।

महान् दार्शनिक एवं राजनीतिज्ञ महात्मा चाणक्यने अपने अर्थशास्त्रमें प्रजाको सुख देनेवाली राजनीतिका धर्मसे अटूट सम्बन्ध बताते हुए कहा है— '**सुखस्य मूलं धर्मः।**' अपनी कूटनीतिके कारण ही जिसका नाम कौटिल्य पड़ा, वह भी राजनीतिमें धर्मकी सत्ता स्वीकार करता है। 'अग्निपुराण'में तो यहाँ तक कहा गया है कि 'आधि-व्याधिसे ग्रस्त तथा आज या कल ही नष्ट होनेवाले इस शरीरके लिये कौन राजा या शासक धर्मविरुद्ध आचरण करेगा।'

रामायण और महाभारत इस देशके गौरवशाली इतिहास हैं, जो हमारे मार्गदर्शक भी हैं। महाभारतके युद्धमें धर्म-समन्वित जीवन होनेके कारण ही युधिष्ठिर आदि पाण्डव संख्यामें पाँच होते हुए भी विजयश्री प्राप्त करते हैं। अधर्मका आश्रय लेनेके कारण दुर्योधन आदि कौरव संख्यामें एक सौ होते हुए भी पराजयका मुख देखते हैं।

'**यतो धर्मस्ततो जयः**'—इस वाक्यसे धर्मके प्रति कितनी अटूट श्रद्धा प्रकट होती है, कहते हैं—'जहाँ-जहाँ धर्म वहीं-वहीं विजय'। यह मूल वचन दुर्योधन प्रभृति सौ पुत्रोंकी पुत्रवती माता गान्धारीके मुखसे निकला हुआ है। गान्धारीकी सामर्थ्य सर्वविदित है। वह यह जानती थी कि मेरे बालक दुष्टबुद्धि हैं, अधर्माचरण करते हैं, फिर भी वह एक सिद्धान्तकी और धर्मके प्रति इतनी निष्ठा रखनेवाली थी कि धर्मराजके आनेपर यही आशीर्वाद देती— '**यतो धर्मस्ततो जयः।**' और दुर्योधन भी आता तो यही कहती— '**यतो धर्मस्ततो जयः।**' इसका तात्पर्य यही था कि 'धर्मानुसार आचरण करनेपर ही तुम लोगोंका कल्याण होगा। तुम अधर्मसे चलते हो, इसमें तुम्हारा कल्याण नहीं।' कितनी महान् है धर्मके प्रति यह श्रद्धा, यह निष्ठा! ऐसी निष्ठा रहनेपर पराजय कैसे होगी? वहाँ विजय सुनिश्चित है। 'गीता' भी यही कहती है—

'**स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥**'

स्वधर्मका पालन अर्थात् अपने कर्तव्योंका पालन करते हुए यदि निधन भी हो जाय तो उसकी परवा नहीं करनी चाहिये।

जहाँका राजा और जहाँकी प्रजा—ये दोनों धार्मिक होंगे, वहाँ लोगोंमें परस्पर सौहार्द तथा सर्वत्र सुख-शान्तिका साम्राज्य होगा, एक-दूसरेके प्रति लोगोंमें आत्मीयता, स्नेह तथा अपनत्वकी भावना रहेगी। आजकी तरह वैमनस्य, अशान्ति, कलह, राग-द्वेष आदिका बोलबाला नहीं होगा। आज तो घर-घरमें, कुटुम्ब-कुटुम्बमें अशान्ति, वैमनस्य और राग-द्वेषका आधिपत्य हो चुका है। शास्त्रोंके वचनानुसार जब-जब धर्मकी हानि होती है, तब-तब इन्हीं आसुरी प्रवृत्तियोंका बोलबाला होता है। 'श्रीरामचरितमानस'में गोस्वामीजीने ठीक ही कहा है—

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥

× × ×

तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा।

राम-रावण-युद्धमें रावणने अधर्मका आश्रय ग्रहण किया, जिसके कारण धर्मरक्षार्थ भगवान् रामने अवतार ग्रहणकर रावण-जैसे असुरोंका संहार किया तथा धर्मकी मर्यादा स्थापित की।

महात्मा गाँधीने ईश्वर और धर्मका अवलम्बन लेकर ही स्वतन्त्रताका राजनीतिक आन्दोलन सन् १९२०ई०—सन् १९४२ ई० तक चलाया। उनके जितने व्याख्यान राजनीतिक मञ्चसे होते थे, वे ईश्वर-श्रद्धा और धर्माचरणपर आधारित होते थे। उनकी 'श्रीमद्भगवद्गीता'पर पूर्ण श्रद्धा थी और उसीके उपदेशोंके आधारपर असहयोग और सत्याग्रह-आन्दोलन सफल हुए और भारत स्वतन्त्र हुआ। रामराज्यकी पुकार गाँधीजीने ही सर्वप्रथम लगायी थी। धर्म-नियन्त्रित शासन ही रामराज्य है, इसमें प्रजाकी रुचि तथा सम्मतिका पूरा ध्यान रखा जाता है, बहुमतके आधारपर शास्त्र एवं धर्मविरुद्ध कोई अनर्थ नहीं किया जाता।

अब अपना देश स्वतन्त्र है। स्वतन्त्रताके बाद अपनी सभ्यता और संस्कृतिकी रक्षाकी आवश्यकता पड़नी स्वाभाविक है। हर देशकी अपनी-अपनी विशेषताएँ होती हैं। जैसे जर्मनीकी विशेषता उसकी शिल्पविद्या और आविष्कार है, अमेरिकाकी विशेषता उसकी अपार सम्पत्ति है, फ्रांसकी विशेषता उसका सौन्दर्य है, इंग्लैण्डकी विशेषता उसकी कूटनीति है, उसी प्रकार भारतकी विशेषता उसकी आध्यात्मिकता, धार्मिकता और नैतिकता है। इसी विशेषताके कारण भारत जगद्गुरु रहा है। जब स्वराज्यके पूर्व हमारी आध्यात्मिकता, नैतिकता और धार्मिकता सुरक्षित रह सकती थी, तब कोई कारण नहीं कि इस स्वराज्यके बाद वे सुरक्षित न रह सकें। भगवान्की कृपासे भारत स्वतन्त्र हुआ। इसलिये भगवान्के नामपर इसकी आध्यात्मिकताकी रक्षा भी की जानी चाहिये।

स्वतन्त्रता-संग्राममें कितने बलिदान हुए, कितने होनहार नौनिहालोंने अपनी माताओंकी गोद और पत्नियोंकी सेज सूनी कर दी और कितने गाँव वीरान हो गये तब कहीं भगवान्की कृपासे हमें स्वराज्य मिला। इसमें यदि हम अपनी विशेषता—आध्यात्मिकता, धार्मिकताकी रक्षा न कर सके तो यह स्वराज्य हमारे लिये किस कामका? आज न रोटी सस्ती है, न औषधि सस्ती है और न कपड़ा सस्ता है। धर्मविमुख होनेसे न शान्ति मिलती है न सुख ही। विश्वशान्तिके लिये आज संयुक्त-राष्ट्र-संघ स्थापित है फिर भी इसके सदस्य राष्ट्र एक-दूसरेपर शंका करते हैं। इसका कारण यह है कि वे धर्मसे विमुख हैं, धर्मके बिना सच्ची मैत्री असम्भव है।

धर्मसम्राट् अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी महाराजने एक जगह लिखा है—'यदि रामराज्यके आदर्शानुसार भारतीय जनता और सरकारमें परस्पर पिता-पुत्र-जैसा सहयोग और सद्भावना हो, सभीके रहन-सहन, खान-पानमें सादगी हो, शिक्षा और स्वास्थ्यका पूर्ण सुधार हो, खाद्य-पदार्थोंकी शुद्ध व्यवस्था हो, व्यायाम-शालाओंद्वारा भौतिक बल बढ़ानेके साथ धार्मिक संस्थाओंके सहयोगसे जीवनमें नैतिक बल बढ़ानेका

भी प्रयत्न हो तो जगद्गुरु भारतवर्ष ही विश्वशान्तिका पथप्रदर्शक हो सकता है, इसके लिये यह आवश्यक है कि हमारा देश बाह्य चाकचिक्यके प्रलोभनों तथा कृत्रिम आवश्यकताओंका शिकार न बने। सादगी और संतोषके साथ अपने कृषि, वाणिज्य एवं पशुओंके पालन-परिवर्धन आदि कार्योंमें तत्पर हो जाय। इससे घृत, दुग्ध, खाद्यान्न, वस्त्र, आरोग्य, स्वास्थ्य तथा सुबुद्धि—इन सबकी वृद्धि होगी।'

आज जितने 'वाद' प्रचलित हैं, उन सभी वादोंके गुण रामराज्यमें मौजूद थे। रामराज्यमें समाजवाद, साम्यवाद, लोकतन्त्रवाद आदि वादोंके गुण सम्मिलित थे। जहाँ राम-जैसा धर्मनिष्ठ राजा शासक न हो, वहाँ मनमें रामराज्यकी कल्पना कर लेनेसे रामराज्य, धर्मराज्य और वास्तविक स्वराज्यकी स्थापना नहीं हो सकती। स्वराज्य मिल जानेपर भी यदि आज हमारी सभ्यता, संस्कृति और धर्मपर खतरा है ही, उनका संरक्षण सम्भव नहीं तो ऐसा स्वराज्य सार्थक नहीं निरर्थक है। किसी देशमें किसी ढंगकी शासन-प्रणाली क्यों न हो, पर सभी जगह धर्मनिष्ठा और सत्यनिष्ठाकी आवश्यकता है। ईश्वर और धर्मभावनाके अभावमें कोई शासन चल ही नहीं सकता। आप जानते ही हैं कि जब नये मन्त्रि-मण्डलका गठन होता है, तब अपना उत्तरदायित्व ग्रहण करनेके पूर्व मन्त्रियोंको शपथ लेनी होती है। इसलिये उत्तरदायित्व-निर्वहनके लिये भी ईश्वर और धर्म-भावनाकी सदा अपेक्षा है। आज लोग रामराज्यकी रट लगाते हैं और भारतमें रामराज्यकी भावनाकी कल्पना करते हैं, किंतु वास्तवमें रामराज्यमें जो गुण थे, उन गुणोंके पालनसे ही रामराज्य-जैसा राज्य स्थापित हो सकता है। वास्तवमें यही राजधर्म है।

वस्तुतः समस्त जीवलोक राजधर्मके द्वारा ही संचालित और प्रतिपादित होता है। इसीसे मानव-समाजका आदर बढ़ता है। धर्मरक्षाके लिये राजधर्म और राजनीति-रक्षाके लिये सामान्य धर्म आवश्यक है। महाभारतके अनुसार परमात्मप्रभुसे सर्वप्रथम राजधर्मका ही आविर्भाव हुआ, इसके बाद ही राजधर्मके अङ्गभूत अन्य धर्मोंका प्रादुर्भाव हुआ—

क्षात्रो धर्मो ह्यादिदेवात् प्रवृत्तः
पश्चादन्ये शेषभूताश्च धर्माः ॥

(महा०, शान्ति० ६४।२१)

व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा विश्वके लौकिक और पारलौकिक अभ्युदय और निःश्रेयसकी प्राप्तिमें होनेवाली सभी विघ्न-बाधाओंको दूरकर इसे प्राप्त करनेकी सम्पूर्ण सुविधाओंको उपलब्ध करना ही भारतीय राजधर्म और राजनीतिका मूल-मन्त्र है। इस प्रकारके राजधर्मका पालन श्रुताध्ययन-सम्पन्न, धर्मज्ञ, सत्यवादी, राग-द्वेषविहीन तथा नीतिमान् शासक ही कर सकता है, इसीलिये राज्य-व्यवस्थाको भी चलानेके लिये यह आवश्यक है कि ऐसे ही विद्वानोंको सभासद् बनाया जाय—

श्रुताध्ययनसम्पन्ना धर्मज्ञाः सत्यवादिनः।
राज्ञा सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः ॥

(याज्ञ०, व्यवहाराध्याय २)

इसीलिये अपने प्राचीन इतिहास-पुराणोंके अनुसार देवराज इन्द्रकी राजनीति देवगुरु बृहस्पतिके हाथमें थी, दैत्यराज बलिकी राजनीति महर्षि शुक्राचार्यके हाथमें थी तथा रामचन्द्रकी राजनीति वसिष्ठके हाथमें थी। धर्मराज युधिष्ठिरकी राजनीति धौम्य, व्यास, कृष्ण, विदुर आदिके हाथमें थी तथा शिवाकी राजनीति भी समर्थगुरु रामदासके हाथमें थी। वस्तुतः जैसे बिना अंकुशके हाथी, बिना लगामके घोड़ा आदि हानिकारक होते हैं, उसी प्रकार धर्म-नियन्त्रणके बिना शासन भी हानिकारक होता है। 'बृहदारण्यक'के **'क्षत्रस्य क्षत्रम्'** (१।४।१४) इस वचनके अनुसार धर्मनियन्त्रित शासक ही सम्पूर्ण जगत्‌के लिये कल्याणका साधन है तथा राष्ट्र और संस्कृतिकी रक्षा भी इसीसे सम्भव है।

नम्र निवेदन और क्षमा-प्रार्थना

भगवत्कृपासे इस वर्ष 'कल्याण'का विशेषाङ्क **'नीतिसार-अङ्क'**पाठकोंकी सेवामें प्रस्तुत किया जा रहा है। 'कल्याण' की परम्परामें प्रतिवर्ष प्रकाशित विशेषाङ्कोंमें यद्यपि नीति-सम्बन्धी चर्चा किसी-न-किसी रूपमें अवश्य होती रही है, परंतु भारतीय वाङ्मयमें उपलब्ध सम्पूर्ण नीतियोंका दिग्दर्शन और उनके स्वरूपका परिचय तथा उनका एकत्र संकलन अबतक नहीं हो सका। नीति मानव-जीवनकी सफलताका आधारबिन्दु है। किसी भी देश, समाज और व्यक्तिका विकास, उसका उत्थान और पतन यह उसकी नीतिपर ही निर्भर करता है। नीतिके उल्लंघन तथा नैतिक आचारसंहिताकी अवहेलनासे यह जीव-जगत् तथा सम्पूर्ण विश्व अशान्तिके महासमुद्रमें गोते खा रहा है। नैतिक धर्मके विपरीत विषयासक्ति तथा भोगवादको ही सर्वोपरि साधन एवं साध्य मान लेनेसे वर्तमानमें संसारकी जो स्थिति दीखती है, वह किसीसे छिपी नहीं है। पापाचार, अनाचार एवं दुराचारने अपनी जड़ जमा रखी है। राजधर्म प्राय: लुप्त-सा ही हो गया है। प्रशासनकी बागडोर सँभालनेवाले प्राय: धर्म-नीतिकी अवहेलनाके लिये उतारू हैं। वर्तमान समयमें सारा विश्व राजनीतिक उथल-पुथलमें उलझा हुआ है। अत: सर्वत्र अशान्ति और विद्वेषका वातावरण है। फलत: प्रकृति भी विपरीत हो गयी है। कभी भूकम्प आते हैं, कभी अतिवृष्टि होती है तो कभी अनावृष्टिसे अकाल पड़ते हैं। आतंकवादका आतंक सम्पूर्ण विश्वमें छाया हुआ है। धर्म, कर्तव्य एवं नीतिकी मर्यादाएँ टूट-सी रही हैं, ऐसे विषम समयमें व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्राध्यक्षोंका क्या कर्तव्य है तथा नीतिके पालनसे किस प्रकार विश्वशान्ति और सम्पूर्ण जगत्की रक्षा की जा सकती है—यह एक महत्त्वपूर्ण विचारणीय विषय है। भारतीय मनीषियोंने इसपर गहरा विचार भी किया है। इसीलिये अपने शास्त्रोंमें सत्-नीति, धर्म-नीति, राज-नीति, लोक-नीति, कूट-नीति तथा साम, दान, दण्ड और भेद आदि विभिन्न नीतियोंका दर्शन प्राप्त है।

शास्त्रोंके आज्ञानुसार कर्मका अनुष्ठान करना ही 'नीति' है। सत्प्रवृत्ति, सदाचरण, सारासारविवेक, अहिंसा, सत्य, अस्तेय आदि गुण एवं 'अन्तिम सत्य' के प्रति ले जानेवाले मार्ग—इत्यादि अर्थ 'नीति' शब्दद्वारा दर्शित हैं। अर्थशास्त्र, राज्यशास्त्र, समाजशास्त्र, धर्मशास्त्र, जीवन-शास्त्र, अध्यात्मशास्त्र आदिके साथ नीतिका घनिष्ठ सम्बन्ध है। अत: नीतिका विचार ही व्यापक है, ऐसे व्यापक नीति-विचारको ही 'नीति-शास्त्र' कहते हैं।

वास्तवमें नीतिका साक्षात् सम्बन्ध धर्मसे है, इसीलिये भगवान्ने गीता (१०।३८)-में नीतिको अपनी विभूति बताया है— **'नीतिरस्मि जिगीषताम्'**। तात्पर्य यह है कि जिसे संसारको जीतनेकी अभिलाषा है, आसक्तिको जीतनेकी इच्छा है, वह भगवन्नीतिके पथपर चले, **'सर्वभूतहिते रता:'**(गीता ५।२५, १२।४)-की नीतिको अपना ले; अर्थात् सभी प्राणियोंके हितमें संलग्न रहे, भगवद्वाणीका अनुपालन करे, आसुरी सम्पत्तिका परित्याग कर नीतिपूर्ण दैवीसम्पत्तिका अवलम्बन ग्रहण कर ले तो फिर उसके परम कल्याणमें क्या संदेह रह जाता है। ऐसा होनेपर निश्चय ही सम्पूर्ण विश्वमें सुख-शान्तिकी—रामराज्यकी स्थापना हो सकती है।

इन सब दृष्टियोंसे इस वर्ष यह विचार आया कि भारतीय मनीषाकी नीतियोंका संकलन **'नीतिसार-विशेषाङ्क'**-के रूपमें प्रकाशित किया जाय। इस 'विशेषाङ्क'में नीतितत्त्वमीमांसा, नीतिका वास्तविक अर्थ, विविध नीतियोंका स्वरूप, वेदादि शास्त्रोंमें वर्णित नीतिके सिद्धान्त, नीति, सदाचार और धर्म, चरित्रनिर्माणमें नीतिपालनकी आवश्यकता, नैतिक शिक्षाका स्वरूप, भगवान् श्रीराम तथा भगवान् श्रीकृष्णद्वारा प्रतिपादित कल्याणकारी नीतिपथ, नीति-शास्त्रकी आचार्य-परम्परा, संत-महात्माओं और भक्तोंकी रीति-नीति, भारतीय इतिहासके नीतिमान् राजर्षियोंका चरित्रावलोकन तथा उनके द्वारा प्रतिपादित नीतिमार्ग, भोगवादी नीतिके दुष्परिणाम, विविध नीतियोंके आख्यान, अनुपालनके लिये पारस्परिक सम्बन्धोंकी आदर्श कथाएँ, कर्तव्यपालनकी शिक्षा एवं नैतिक शिक्षाके आख्यान, प्राच्य एवं पाश्चात्त्य नीतियाँ, चतुर्वर्गनीति, प्राचीन एवं अर्वाचीन राजनीतिके साथ ही नीतिके प्रमुख ग्रन्थों और बृहस्पति-नीति, शौनक-नीति, शुक्र-नीति, कणिक-नीति,

विदुर-नीति तथा चाणक्य-नीति आदि नीतियोंके स्वरूपको यथासाध्य सरल एवं सुगमरूपसे प्रस्तुत करनेका प्रयास किया गया है, जिससे सर्वसाधारण अपने विस्मृत सनातन कल्याणकारी पथसे परिचित हो सके और सन्मार्गका अवलम्बन ग्रहण कर परमार्थको प्राप्त कर सके।

इस वर्ष '**नीतिसार-अङ्क**' के लिये लेखक महानुभावोंने उत्साहपूर्वक जो सहयोग प्रदान किया है, वह अत्यधिक प्रशंसनीय है। भगवत्कृपासे इतने लेख और सामग्रियाँ प्राप्त हुईं कि उन सबको इस अङ्कमें समाहित करना सम्भव नहीं था, फिर भी विषयकी सर्वाङ्गीणताको ध्यानमें रखते हुए अधिकतम सामग्रियोंका संयोजन करनेका विशेष प्रयत्न किया गया है। सामग्रीकी अधिकताके कारण इस अङ्कमें फरवरी मासका 'परिशिष्टाङ्क' भी संलग्न है।

उन लेखक महानुभावोंके हम अत्यधिक कृतज्ञ हैं, जिन्होंने कृपापूर्वक अपना अमूल्य समय लगाकर नीति-सम्बन्धी सामग्री तैयारकर यहाँ प्रेषित की है। हम उन सबकी सम्पूर्ण सामग्रीको इस 'विशेषाङ्क' में स्थान न दे सके, इसका हमें खेद है। इसमें हमारी विवशता ही कारण है। इनमेंसे कुछ तो एक ही विषयपर अनेक लेख आनेके कारण न छप सके तथा कुछ अच्छे लेख विलम्बसे आये, जिनमें कुछ लेखोंको स्थानाभावके कारण पर्याप्त संक्षिप्त करना पड़ा और कुछ नहीं दिये जा सके। यद्यपि इसमेंसे कुछ सामग्रीको आगेके साधारण अङ्कोंमें देनेका प्रयास अवश्य करेंगे, परंतु विशेष कारणोंसे कुछ लेख प्रकाशित न हो सकेंगे तो विद्वान् लेखक हमारी विवशताको ध्यानमें रखकर हमें अवश्य क्षमा करनेकी कृपा करेंगे।

हम अपने उन सभी पूज्य आचार्यों, परम सम्मान्य पवित्रहृदय संत-महात्माओंके श्रीचरणोंमें प्रणाम करते हैं, जिन्होंने 'विशेषाङ्क' की पूर्णतामें किंचित् भी योगदान किया है। सद्विचारोंके प्रचार-प्रसारमें वे ही निमित्त हैं, क्योंकि उन्हींके सद्भावपूर्ण तथा उच्च विचारयुक्त भावनाओंसे 'कल्याण' को सदा शक्ति-स्रोत प्राप्त होता रहता है। हम अपने विभागके तथा प्रेसके अपने उन सभी सम्मान्य साथी-सहयोगियोंको भी प्रणाम करते हैं, जिनके स्नेहपूर्ण सहयोगसे यह पवित्र कार्य सम्पन्न हो सका है। त्रुटियों एवं व्यवहारदोषके लिये उन सबसे क्षमाप्रार्थी हैं।

'**नीतिसार-अङ्क**' के सम्पादनमें जिन संतों एवं विद्वान् लेखकोंसे सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ है, उन्हें हम अपने मानस-पटलसे विस्मृत नहीं कर सकते। सर्वप्रथम मैं वाराणसीके समादरणीय पं० श्रीलालबिहारीजी शास्त्रीके प्रति हृदयसे आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने प्रेरणाप्रद लेख एवं परामर्श प्रदान कर निष्कामभावसे अपनी सेवाएँ परमात्मप्रभुके श्रीचरणोंमें समर्पित की हैं। 'गोधन' के सम्पादक श्रीशिवकुमारजी गोयलके प्रति भी हम आभार व्यक्त करते हैं; जो निरन्तर अपने पूज्य पिता श्रीरामशरणदासजी, पिलखुआके संग्रहालयसे अनेक दुर्लभ सामग्रियाँ हमें उपलब्ध कराते हैं, साथ ही कई विशिष्ट महानुभावोंसे भी सामग्री एकत्र कर भेजनेका कष्ट करते हैं।

इस अङ्कके सम्पादनमें अपने सम्पादकीय विभागके वयोवृद्ध विद्वान् पं० श्रीजानकीनाथजी शर्मा एवं अन्य महानुभावोंने अत्यधिक हार्दिक सहयोग तथा आशीर्वाद प्रदान किया है। इसके सम्पादन, संशोधन एवं चित्र-निर्माण आदिमें जिन-जिन लोगोंसे हमें सहयोग मिला है, वे सभी हमारे अपने हैं, उन्हें धन्यवाद देकर हम उनके महत्त्वको घटाना नहीं चाहते।

वास्तवमें 'कल्याण' का कार्य भगवान्‌का कार्य है, अपना कार्य भगवान् स्वयं करते हैं, हम तो केवल निमित्तमात्र हैं। इस बार '**नीतिसार-अङ्क**' के सम्पादन-कार्यके अन्तर्गत जगन्नियन्ता प्रभु तथा उनकी सत्-नीतियोंका चिन्तन, मनन और सत्सङ्गका सौभाग्य निरन्तर प्राप्त होता रहा, यह हमारे लिये विशेष महत्त्वकी बात थी। हमें आशा है कि इस 'विशेषाङ्क' के पठन-पाठनसे हमारे सहृदय पाठकोंको भी यह सौभाग्य-लाभ अवश्य प्राप्त होगा।

अन्तमें हम अपनी त्रुटियोंके लिये आप सबसे पुनः क्षमा-प्रार्थना करते हुए दीनवत्सल अकारण करुणावरुणालय परमात्मप्रभुसे यह प्रार्थना करते हैं कि वे हमें तथा जगत्‌के सम्पूर्ण जीवोंको सद्बुद्धि प्रदान करें, जिससे सभी सत्-नीतिकी ओर अग्रसर होकर जीवनके वास्तविक लक्ष्यको प्राप्त कर सकें।

—**राधेश्याम खेमका**
सम्पादक

॥ श्रीहरिः ॥

गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तकोंका सूचीपत्र

(दिसम्बर २००१)

कोड		मूल्य	डाकखर्च
	श्रीमद्भगवद्गीता		
	गीता-तत्त्व-विवेचनी—		
	(टीकाकार-श्रीजयदयालजी गोयन्दका) गीता-विषयक २५१५ प्रश्न और उनके उत्तर-रूपमें विवेचनात्मक हिन्दी टीका, सचित्र, सजिल्द आकर्षक		
1	बहुरंगे आवरणके साथ बृहदाकार	१००.०० ■	३०
2	,, ,, ग्रन्थाकार	६०.०० ■	१६
3	,, ,, साधारण संस्करण	४०.०० ■	१२
1118	,, ,, बँगला	६५.०० ■	१६
800	,, ,, तमिल	७५.०० ■	१९
1100	,, ,, ओडिआ	७०.०० ■	१६
1112	,, ,, कन्नड़	७०.०० ■	१७
457	,, ,, अँग्रेजी अनुवाद	५०.०० ■	१४
1172	,, ,, तेलुगु	७०.०० ■	१७
1313	,, ,, गुजराती	७०.०० ■	१७
1304	,, ,, मराठी	७०.०० ■	१६
	गीता-साधक-संजीवनी—(टीकाकार—स्वामी श्रीरामसुखदासजी) गीताके मर्मको समझनेहेतु व्याख्यात्मक शैली एवं सरल, सुबोध भाषामें हिन्दी टीका, सचित्र, सजिल्द		
5	बृहदाकार	१६०.०० ■	४४
6	,, ग्रन्थाकार परिशिष्टसहित	८५.०० ■	२२
7	,, ,, मराठी अनुवाद	८५.०० ■	१८
467	,, ,, गुजराती अनुवाद	९०.०० ■	२०
1080 / 1081	,, ,, अँग्रेजी अनुवाद (दो खण्डोंमें)	७०.०० ■	१७
763	,, ,, बँगला	८५.०० ■	२०
1121	,, ,, ओडिआ	१००.०० ■	२३
	साधक-संजीवनी-परिशिष्ट—		
949	,, ,, पुस्तकाकार (१ से ६ अध्याय)	८.०० ■	३
896	,, ,, ,, (१३ से १८ अध्याय)	७.०० ■	२
1317	गीता पॉकेट साइज (साधक-संजीवनीके आधारपर अन्वय और पदच्छेदसहित)	१२.०० ■	३
	गीता-दर्पण—(स्वामी श्रीरामसुखदासजीद्वारा) गीताके तत्त्वोंपर प्रकाश, लेख, गीता-व्याकरण और छन्द-सम्बन्धी गूढ़ विवेचन		
8	सचित्र, सजिल्द	३५.०० ■	९
504	गीता-दर्पण (मराठी अनुवाद) सजिल्द	३०.०० ■	८
556	,, ,, (बँगला अनुवाद) सजिल्द	३५.०० ■	९
468	,, ,, (गुजराती अनुवाद) ,,	३०.०० ■	९
784	ज्ञानेश्वरी गूढ़ार्थ-दीपिका (मराठी)	१२०.०० ■	१९
748	,, मूल गुटका (मराठी)	२५.०० ■	४
859	,, मूल मझला (मराठी)	३५.०० ■	५
10	गीता-शांकर-भाष्य—	५०.०० ■	१०
581	गीता-रामानुज-भाष्य—	■	
11	गीता-चिन्तन—(श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारके गीता विषयक लेखों, विचारों, पत्रों आदिका संग्रह)	■	

कोड		मूल्य	डाकखर्च
	गीता—मूल, पदच्छेद, अन्वय, भाषा-टीका, टिप्पणी-प्रधान और सूक्ष्म विषय एवं 'त्यागसे भगवत्प्राप्ति'		
17	लेखसहित, सचित्र, सजिल्द	२०.०० ■	५
	12 (गुजराती) २५.००, 13 (बँगला) २०.००, 14 (मराठी) २५.००, 726 (कन्नड़) २५.००, 772 (तेलुगु) २०.००, 823 (तमिल) २०.००		
16	गीता—प्रत्येक अध्यायके माहात्म्य, सजिल्द, मोटे अक्षरोंमें	२५.०० ■	४
15	गीता—(मराठी अनुवाद)	३०.०० ■	५
18	,, भाषा-टीका, टिप्पणी-प्रधान विषय, मोटा टाइप	१२.०० ■	३
1157	(ओडिआ) १०.००, 1315 (गुजराती) १५.००		
502	,, सजिल्द	१८.०० ■	४
	771 (तेलुगु) १२.००, 815 गीता श्लोकार्थसहित (ओडिआ) १५.००, 718 गीता तात्पर्यके साथ (कन्नड़) १५.००, 743 (तमिल) १५.००		
19	गीता—केवल भाषा	७.०० ■	२
	663 गीता—(तेलुगु) ५.००, 795 (तमिल) ५.००		
750	,, भाषा पाकेट साइज (हिन्दी)	४.०० ■	१
20	,, भाषा-टीका पाकेट साइज (हिन्दी)	५.०० ■	२
633	,, भाषा-टीका पाकेट साइज सजिल्द	८.०० ■	२
	455 (अँग्रेजी) ५.००, 534 (अँग्रेजी) सजिल्द ७.००, 1257 (मराठी) ६.००, 496 (बँगला) ६.००, 714 (असमिया) ५.००, 1008 (ओडिआ) ६.००, 936 (गुजराती) ६.००, 1288 (कन्नड़) ६.०० 1034 (गुजराती) सजिल्द १०.००, 1031 (तेलुगु) ६.००		
21	श्रीपञ्चरत्नगीता—गीता, विष्णुसहस्रनाम, भीष्मस्तवराज, अनुस्मृति, गजेन्द्रमोक्ष (मोटे अक्षरोंमें)	१५.०० ■	३
	1219 (ओडिआ) १५.००		
22	गीता—मूल, मोटे अक्षरोंवाली	६.०० ■	२
23	गीता—मूल, विष्णुसहस्रनामसहित	३.०० ■	१
	661 (कन्नड़) ५.००, 662 (तेलुगु) ४.००, 793 (तमिल) ५.००, 739 (मलयालम) ४.००, 541 (ओडिआ) ३.००,		
488	नित्यस्तुतिः—गीता मूल, विष्णुसहस्रनामसहित	५.०० ■	१
700	गीता—छोटी साइज मूल	१.५० ■	१
1036	,, ,, लघु आकार (ओडिआ)	१.५० ■	१
24	गीता ताबीजी—मूल	३.०० ■	१
957	,, (बँगला)	३.०० ■	१
566	गीता—ताबीजी एक पत्रेमें सम्पूर्ण गीता (१०० प्रति एक साथ)	.२५ ■	१
288	गीताके कुछ श्लोकोंपर विवेचन—	▲	
289	गीता-निबन्धावली—	२.५० ▲	१
297	गीतोक्त संन्यास या सांख्ययोगका स्वरूप—	०.७५ ▲	१
388	गीता माधुर्य-सरल प्रश्नोत्तर-शैलीमें (हिन्दी)	७.०० ▲	२
	389 (तमिल) ८.००, 391 (मराठी) ६.००, 392 (गुजराती) ६.००, 393 (उर्दू) ८.००, 1028 (तेलुगु) ८.००, 395 (बँगला) ५.००, 624 (असमिया) ५.००, 754 (ओडिआ) ५.००, 390 (कन्नड़) ६.००		
	487 (अंग्रेजी) ६.००, 679 (संस्कृत) ६.००		

कोड		मूल्य	डाकखर्च
470	गीता-रोमन गीता मूल, श्लोक एवं अंग्रेजी अनुवाद (सजि०)		
1223	,, ,, ,, (अजि०)	१०.०० ■	२
1242	पाण्डव गीता एवं हंस गीता (श्लोकार्थसहित)	३.०० ■	१
874	गीता दैनन्दिनी (२००२)— पुस्तकाकार डीलक्स	४०.०० ■	६
503	,, ,, रोमन ,, प्लास्टिक कवर	३०.०० ■	४
1348	,, ,, रोमन ,, (१५ महीनेकी)	३५.०० ■	७
506	,, ,, (२००२)—पाकेट साइज डीलक्स	२०.०० ■	३
615	,, ,, (,,)— ,, प्लास्टिक कवर	१६.०० ■	३
1347	,, ,, (,,)— ,, (बाइबल पेपर)	२०.०० ■	२
464	गीता-ज्ञान-प्रवेशिका- स्वामी श्रीरामसुखदासजी	१२.०० ■	३
508	गीता सुधा तरंगिनी-गीताका पद्यानुवाद	■	
	रामायण		
	श्रीरामचरितमानस-बृहदाकार, मोटा टाइप, सजिल्द		
80	आकर्षक आवरण	२२०.०० ■	३५
1095	,, ग्रन्थाकार (राजसंस्करण)	१७०.०० ■	२४
81	,, ,, सचित्र, सटीक मोटा टाइप, सजिल्द आकर्षक आवरण	१२०.०० ■	१९
697	,, ,, साधारण	१००.०० ■	१६
82	,, ,, मझला साइज, सजिल्द	६०.०० ■	९
1318	श्रीरामचरितमानस रोमन एवं अंग्रेजी अनुवादसहित	२००.०० ■	२०
456	श्रीरामचरितमानस-अँग्रेजी अनुवादसहित	१००.०० ■	१५
786	,, ,, मझला ,, ,,	५०.०० ■	१०
83	,, ,, मूलपाठ, मोटे अक्षरोंमें, सजिल्द	६५.०० ■	१०
1218	,, ,, (ओडिआ)	७०.०० ■	१०
84	,, ,, मूल, मझला साइज	३५.०० ■	६
85	,, ,, मूल, गुटका	२५.०० ■	४
1282	,, ,, मूल मझला डीलक्स	६०.०० ■	८
790	,, ,, केवल भाषा	६०.०० ■	१२
954	,, ,, ग्रन्थाकार बँगला	१२०.०० ■	१९
799	,, ,, गुजराती ग्रन्थाकार	१२०.०० ■	१८
1314	,, ,, मराठी ग्रन्थाकार	१२०.०० ■	१८
1352	,, ,, तेलुगु ग्रन्थाकार	१२०.०० ■	१८
785	,, ,, गुजराती मझला साइज	४५.०० ■	९
878	,, ,, गुजराती मूल मझला	३५.०० ■	६
879	,, ,, मूल गुटका	२५.०० ■	४
	[श्रीरामचरितमानस-अलग-अलग काण्ड (सटीक)]		
94	,, ,, बालकाण्ड	१६.०० ■	३
95	,, ,, अयोध्याकाण्ड	१५.०० ■	३
1349	,, ,, सुन्दरकाण्ड सटीक मोटा टाइप (लाल अक्षरोंमें) श्रीहनुमानचालीसासहित	१५.०० ■	२
98	,, ,, सुन्दरकाण्ड	४.०० ■	१
832	,, ,, (कन्नड़) ६.००, 753 (तेलुगु) ४.००,		
1356	,, ,, (बँगला) ४.००		
101	,, ,, लंकाकाण्ड	८.०० ■	२
102	,, ,, उत्तरकाण्ड	८.०० ■	२
141	,, ,, अरण्य, किष्किन्धा एवं सुन्दरकाण्ड	८.०० ■	२

- **पुस्तकें डाकसे मँगवानेपर ५% पैकिग खर्च, अंकित डाकखर्च तथा १७ रु० प्रति पैकेट रजिस्ट्रीखर्च अतिरिक्त देय है।**
- **पुस्तकोंके मूल्योंमें परिवर्तन होनेपर पुस्तकपर छपा मूल्य ही देय होगा।**
- **पूरी जानकारीहेतु सूचीपत्र मुफ्त मँगायें। निर्यातके मूल्य एवं नियम अलग हैं।**

कोड		मूल्य	डाकखर्च
830	श्रीरामचरितमानस—सुन्दरकाण्ड मूल मोटा (रंगीन)	१२.०० ■	२
99	„ „ सुन्दरकाण्ड-मूल, गुटका	३.०० ■	१
100	„ „ सुन्दरकाण्ड-मूल, मोटा टाइप	५.०० ■	१
948	„ „ (गुजराती) ५.००, 1204 (ओडिआ) ५.००		
858	„ „ सुन्दरकाण्ड-मूल, लघु आकार	२.०० ■	१
1199	„ „ (गुजराती) २.००		
86	मानसपीयूष-(श्रीरामचरितमानसपर सुप्रसिद्ध तिलक, टीकाकार—श्रीअञ्जनीनन्दनशरण (सातों खण्ड)	१०५० ■	१२०
1192	मानस-गूढ़ार्थ-चन्द्रिका (खण्ड-१)	९०.०० ■	११
1193	मानस-गूढ़ार्थ-चन्द्रिका (खण्ड-२)	१००.०० ■	१३
1194	मानस-गूढ़ार्थ-चन्द्रिका (खण्ड-३)	११०.०० ■	१४
1195	„ „ (खण्ड-४)	१५०.०० ■	१७
1196	„ „ (खण्ड-५)	९०.०० ■	१२
1197	„ „ (खण्ड-६)		
1291	श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण कथा-सुधा-सागर	८५.०० ■	११
75, 76	श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण—सटीक, दो खण्डोंमें सेट	२००.०० ■	३१
77	„ „ केवल भाषा	१२०.०० ■	१९
583	„ „ (मूलमात्रम्)	८०.०० ■	१४
78	„ „ सुन्दरकाण्ड, मूलमात्रम्	१५.०० ■	३
924	„ „ (तेलुगु)	१७.००	
452, 453	„ „ (अँग्रेजी अनुवादसहित दो खण्डोंमें सेट)	२२०.०० ■	३६
1002	सं० वाल्मीकीय रामायणाङ्क	६५.०० ■	११
74	अध्यात्मरामायण—सटीक, सजिल्द	५०.०० ■	९
1256	अध्यात्मरामायण—(तमिल)	५०.०० ■	८
845	„ „ —(तेलुगु)	६०.०० ■	११
223	मूल रामायण—	१.०० ■	१
935	सं० रामायण—(गुजराती)	२.०० ■	१
460	रामाश्वमेध—	१०.०० ■	३
401	मानसमें नाम-वन्दना—	७.०० ▲	२
103	मानस-रहस्य—	३०.०० ■	५
104	मानस-शंका-समाधान	१०.०० ■	२

अन्य तुलसीकृत साहित्य

कोड		मूल्य	डाकखर्च
105	विनयपत्रिका—सरल भावार्थसहित	२४.०० ■	४
106	गीतावली— „ „ „	२२.०० ■	४
107	दोहावली— „ „ „	१०.०० ■	२
108	कवितावली— „ „ „	१०.०० ■	२
109	रामाज्ञाप्रश्न— „ „	■	
110	श्रीकृष्णगीतावली— „ „ „	४.०० ■	१
111	जानकीमंगल— „ „ „	३.०० ■	१
112	हनुमानबाहुक— „ „ „	३.०० ■	१
113	पार्वतीमंगल— सरल भावार्थसहित	३.०० ■	१
114	वैराग्य-संदीपनी एवं बरवै रामायण—	३.०० ■	१
115	बरवै रामायण—	१.०० ■	१

सूर-साहित्य

कोड		मूल्य	डाकखर्च
555	श्रीकृष्णमाधुरी—	१२.०० ■	३
61	सूर-विनय-पत्रिका—	१६.०० ■	३
62	श्रीकृष्ण-बाल-माधुरी—	१३.०० ■	३
735	सूर-रामचरितावली—	११.०० ■	३
547	विरह-पदावली—	१०.०० ■	२
864	अनुराग-पदावली—	१२.०० ■	३

पुराण, उपनिषद् आदि

कोड		मूल्य	डाकखर्च
28	श्रीमद्भागवत-सुधासागर—सम्पूर्ण श्रीमद्भागवतका भाषानुवाद, सचित्र, सजिल्द	१२०.०० ■	१८
25	श्रीशुकसुधासागर—बृहदाकार, बड़े टाइपमें,	२५०.०० ■	३८
1190, 1191	श्रीशुकसुधासागर—सचित्र मोटा टाइप दो खण्डोंमें सेट	२५०.०० ■	३५
26, 27	श्रीमद्भागवत-महापुराण—सटीक—दो खण्डोंमें सेट	२००.०० ■	३१
564,565	„ „ „ अँग्रेजी सेट	२००.०० ■	३०
29	श्रीमद्भागवत-महापुराण— मूल मोटा टाइप	८०.०० ■	१२
124	„ „ —मूल मझला	५०.०० ■	७
1092	भागवतस्तुति-संग्रह—	५५.०० ■	७
571	श्रीकृष्णलीला चिन्तन—	१००.०० ■	१२
30	श्रीप्रेम-सुधासागर—श्रीमद्भागवत, दशम स्कन्धका भाषानुवाद, सचित्र, सजिल्द	५०.०० ■	८
31	भागवत एकादश स्कन्ध—सचित्र, सजिल्द	१६.०० ■	४
728	महाभारत—हिन्दी टीका-सहित, सजिल्द, सचित्र [छः खण्डोंमें]सेट	१०५० ■	१२२
38	महाभारत-खिलभाग हरिवंशपुराण—हिन्दी टीका	१४०.०० ■	२२
637	जैमिनीय अश्वमेध पर्व—	५०.०० ■	९
39,511	संक्षिप्त महाभारत—केवल भाषा, सचित्र, सजिल्द सेट (दो खण्डोंमें)	२००.०० ■	३०
44	संक्षिप्त पद्मपुराण—सचित्र, सजिल्द	१२०.०० ■	१८
789	सं० शिवपुराण—मोटा टाइप	१००.०० ■	१५
1286	सं० शिवपुराण— (गुजराती)	११०.०० ■	१५
1133	सं० देवीभागवत—मोटा टाइप	१२०.०० ■	१८
1326	सं० देवीभागवत (गुजराती)	१२०.०० ■	१८
48	श्रीविष्णुपुराण—सानुवाद, सचित्र, सजिल्द	७०.०० ■	११
1364	श्रीविष्णुपुराण—(केवल हिन्दी)	५५.०० ■	८
1183	नारदपुराण—	१००.०० ■	१५
279	संक्षिप्त स्कन्दपुराण—सचित्र, सजिल्द	१४०.०० ■	
539	संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण—	५५.०० ■	८
1111	ब्रह्मपुराण—	७०.०० ■	९
1189	सं० गरुडपुराण—	८०.०० ■	१२
584	सं० भविष्यपुराण—	७५.०० ■	११
1113	नरसिंहपुराणम्—	५५.०० ■	८
631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण—	७५.०० ■	१४
517	गर्गसंहिता—भगवान् कृष्णकी दिव्य लीलाओंका वर्णन, सचित्र, सजिल्द	७०.०० ■	१२
47	पातञ्जलयोग-प्रदीप—पातञ्जलयोग-सूत्रोंका वर्णन	८०.०० ■	१३
135	पातञ्जलयोगदर्शन—	९.०० ■	२
582	छान्दोग्योपनिषद्—सानुवाद शांकरभाष्य	५०.०० ■	१०
577	बृहदारण्यकोपनिषद्— „ „	७०.०० ■	१४
66	ईशादि नौ उपनिषद्-अन्वय-हिन्दी व्याख्या	४०.०० ■	६
67	ईशावास्योपनिषद्-सानुवाद, शांकरभाष्य	४.०० ■	१
846	„ „ „ „ (तेलुगु)	३.०० ■	१
68	केनोपनिषद्— „ „	९.०० ■	२
578	कठोपनिषद्— „ „	१०.०० ■	२
69	माण्डूक्योपनिषद्— „ „	■	
513	मुण्डकोपनिषद्—सानुवाद शांकरभाष्य	६.०० ■	२
70	प्रश्नोपनिषद्—सानुवाद शांकरभाष्य	७.०० ■	२
71	तैत्तिरीयोपनिषद्-सानुवाद शांकरभाष्य	■	
72	ऐतरेयोपनिषद्— „ „	५.०० ■	१
73	श्वेताश्वतरोपनिषद्— „ „	१६.०० ■	३
65	वेदान्त-दर्शन-हिन्दी व्याख्या-सहित, सजिल्द	३५.०० ■	६
639	श्रीनारायणीयम्—सानुवाद	२५.०० ■	५
908	„ मूलम् (तेलुगु)	■	
201	मनुस्मृति—दूसरा अध्याय सानुवाद		

भक्त-चरित्र

कोड		मूल्य	डाकखर्च
40	भक्तचरिताङ्क—सचित्र, सजिल्द	८०.०० ■	१६
51	श्रीतुकाराम-चरित-जीवनी और उपदेश	३०.०० ■	५
121	एकनाथ-चरित्र—	१२.०० ■	२
1336	मीरा चरित्र—	४.०० ■	१
53	भागवतरत्न प्रह्लाद—	१५.०० ■	३
123	चैतन्य-चरितावली-सम्पूर्ण एक साथ	८०.०० ■	१३
751	देवर्षि नारद—	८.०० ■	२
167	भक्त भारती—		
168	भक्त नरसिंह मेहता— 1168 (मराठी) ८.००, 613 (गुजराती) ७.००	७.०० ■	२
169	भक्त बालक-गोविन्द-मोहन आदिकी गाथा	४.०० ■	१
685	„ „ (तेलुगु)	४.०० ■	१
721	„ „ (कन्नड़)	५.०० ■	१
170	भक्त नारी—मीरा, शबरी आदिकी गाथा	४.०० ■	१
171	भक्त पञ्चरत्न—रघुनाथ-दामोदर आदिकी	६.०० ■	१
682	भक्त पञ्चरत्न—(तेलुगु)	५.०० ■	१
172	आदर्श भक्त—शिबि, रन्तिदेव आदिकी गाथा 687(तेलुगु) ५.००, 840 (कन्नड़) ५.००, 1076 (गुजराती) ६.००	५.०० ■	१
173	भक्त सप्तरत्न-दामा, रघु आदिकी भक्तगाथा 1082 (गुजराती) ५.००	५.०० ■	१
174	भक्त चन्द्रिका-सखू, विट्ठल आदि छः भक्तगाथा 892 भक्त चन्द्रिका(गुजराती)४.००, 951(कन्नड़) ५.००, 917 (तेलुगु) ५.००, 1073 (मराठी) ४.००, 1173 (ओडिआ) ५.००	४.०० ■	१
175	भक्त-कुसुम-जगन्नाथ आदि छः भक्तगाथा	४.०० ■	१
176	प्रेमी भक्त-बिल्वमंगल, जयदेव आदि 1087 (गुजराती) ५.००	५.०० ■	१
177	प्राचीन भक्त—मार्कण्डेय, उत्तङ्क आदि	८.०० ■	२
178	भक्त सरोज—गङ्गाधरदास, श्रीधर आदि	६.०० ■	१
179	भक्त सुमन—नामदेव, राँका-बाँका आदिकी भक्तगाथा 1143 (गुजराती) ७.००	६.०० ■	१
180	भक्त सौरभ—व्यासदास, प्रयागदास आदि	६.०० ■	१
181	भक्त सुधाकर—रामचन्द्र, लाखा आदिकी भक्तगाथा	५.०० ■	१
875	„ „ (गुजराती)	६.०० ■	१
182	भक्त महिलारत्न-रानी रत्नावती, हरदेवी आदि 1084 (गुजराती) ६.००	६.०० ■	१
183	भक्त दिवाकर—सुव्रत, वैश्वानर आदि आठ भक्तगाथा	५.०० ■	१
184	भक्त रत्नाकर—माधवदास, विमलतीर्थ आदि चौदह भक्तगाथा	५.०० ■	१
185	भक्तराज हनुमान्-हनुमान्‌जीका जीवनचरित्र 854 (ओडिआ) ४.००, 608 (तमिल) ६.००, 767 (तेलुगु)५.००, 835(कन्नड़) ४.००, 806 (गुजराती) ४.००	४.०० ■	१
186	सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र— 1200 (ओडिआ) ३.००	३.०० ■	१
187	प्रेमी भक्त उद्धव— 642 (तमिल) ४.००, 686 (तेलुगु) ३.००, 890 (गुजराती) ३.००, 1202 (ओडिआ) ३.००	२.५० ■	१
188	महात्मा विदुर— 947 (गुजराती) ३.००, 741 (तमिल) ३.०० 1201 (ओडिआ) ३.००	■	
136	विदुरनीति—	८.०० ■	२
138	भीष्मपितामह—	८.०० ■	२
691	भीष्मपितामह—(तेलुगु)	९.०० ■	२
189	भक्तराज ध्रुव—	३.०० ■	१
688	„ „ (तेलुगु)	■	

परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दकाके शीघ्र कल्याणकारी प्रकाशन

कोड		मूल्य	डाकखर्च
683	तत्त्वचिन्तामणि—(सभी खण्ड एक साथ) ग्रन्थाकार	७०.०० ■	१८
814	साधन-कल्पतरु—	■	
527	प्रेमयोगका तत्त्व—(हिन्दी)	९.०० ■	४
521	प्रेमयोगका तत्त्व—(अँग्रेजी अनुवाद)	६.०० ▲	२
242	महत्त्वपूर्ण शिक्षा—	१२.०० ■	४
760	„ „ (तेलुगु)	३.०० ▲	१
528	ज्ञानयोगका तत्त्व—(हिन्दी)	▲	
520	„ „ (अँग्रेजी अनुवाद)	८.०० ▲	३
266	कर्मयोगका तत्त्व—(भाग-१)	६.०० ▲	२
267	„ „ (भाग-२)	७.०० ▲	२

कोड		मूल्य		डाकखर्च
303	प्रत्यक्ष भगवद्दर्शनके उपाय— (भक्तियोगका तत्त्व भाग १)	६.००	▲	३
298	भगवान्‌के स्वभावका रहस्य— (भक्तियोगका तत्त्व भाग २)	६.००	▲	२
243	परम साधन —भाग-१	६.००	▲	२
244	,, ,, —भाग-२	५.००	▲	२
245	आत्मोद्धारके साधन—भाग-१	७.००	▲	३
335	अनन्यभक्तिसे भगवत्प्राप्ति— (आत्मोद्धारके साधन भाग-२)	६.००	▲	२
877	,, ,, (गुजराती)	७.००	▲	२
579	अमूल्य समयका सदुपयोग— 666(तेलुगु) ६.००, 932 (गुजराती) ६.००, 1099 (मराठी) ६.००	६.००	▲	२
246	मनुष्यका परम कर्तव्य—भाग-१	७.००	▲	२
247	,, ,, भाग-२	७.००	▲	२
611	इसी जन्ममें परमात्मप्राप्ति— 1052 (गुजराती) ६.००	७.००	▲	२
588	अपात्रको भी भगवत्प्राप्ति—	८.००	▲	२
1296	कर्णवासका सत्संग 1007 (तमिल) ८.००	६.००	▲	२
1015	भगवत्प्रेमकी प्राप्तिमें भावकी प्रधानता—	५.००	▲	२
248	कल्याणप्राप्तिके उपाय- (त०चि०म०भा०१)	९.००	■	३
275	,, ,, (बँगला)	१०.००	■	३
249	शीघ्र कल्याणके सोपान-भाग-२, ,, ,, खण्ड-१ 1164 (गुजराती) ८.००	८.००	▲	३
250	ईश्वर और संसार-भाग-२,(खण्ड-२)	८.००	▲	३
519	अमूल्य शिक्षा- भाग-३,(खण्ड-१)	७.००	▲	२
253	धर्मसे लाभ अधर्मसे हानि-त० चि० भाग-३, (खण्ड-२)	८.००	▲	२
251	अमूल्य वचन-तत्त्वचिन्तामणि भाग-४, (खण्ड-१)	८.००	▲	३
252	भगवद्दर्शनकी उत्कण्ठा-,,(खण्ड-२)	७.००	▲	३
254	व्यवहारमें परमार्थकी कला-त०चि०भाग-५, (खण्ड-१) 1144 (गुजराती) ८.००	७.००	▲	२
255	श्रद्धा-विश्वास और प्रेम-,, भाग-५, (खण्ड-२) 1146 (गुजराती) ८.००	८.००	▲	३
258	तत्त्वचिन्तामणि- ,,भाग-६, (खण्ड-१)	५.००	▲	२
257	परमानन्दकी खेती-,,भाग-६, (खण्ड-२)	७.००	▲	२
260	समता अमृत और विषमता विष-भाग-७, (खण्ड-१)	६.००	▲	३
259	भक्ति-भक्त-भगवान्-भाग-७, (खण्ड-२)	७.००	▲	३
256	आत्मोद्धारके सरल उपाय—	६.००	▲	३
261	भगवान्‌के रहनेके पाँच स्थान— 839 (कन्नड़) ३.००, 689 (तेलुगु) ३.००, 643 (तमिल) ३.००, 889 (गुजराती) ३.००, 1252 (ओडिआ) ३.००	३.००	▲	१
262	रामायणके कुछ आदर्श पात्र— 768 (तेलुगु) ६.००, 833 (कन्नड़) ७.००, 933 (गुजराती) ५.००, 1205 (ओडिआ) ६.००, 1353 (तमिल) ७.००		▲	
263	महाभारतके कुछ आदर्श पात्र— 766(तेलुगु) ५.००, 720 (कन्नड़) ६.००, 894 (गुजराती) ५.००, 1354 (तमिल) ७.००	५.००	▲	२
264	मनुष्य-जीवनकी सफलता—भाग-१	७.००	▲	२
265	,, ,, ,, भाग-२	५.००	▲	२
268	परमशान्तिका मार्ग— भाग-१	६.००	▲	२
269	,, ,, भाग-२	६.००	▲	२
543	परमार्थ-सूत्र-संग्रह—	६.००	▲	२
769	साधननवनीत— 1061 (गुजराती) ७.००	५.००	▲	२
945	,, ,, (कन्नड़)	७.००	▲	२

कोड		मूल्य		डाकखर्च
599	हमारा आश्चर्य—	७.००	▲	२
681	रहस्यमय प्रवचन—	७.००	▲	२
1021	अध्यात्मिक प्रवचन—	६.००	▲	२
1324	अमृत वचन	७.००	▲	२
1022	निष्काम श्रद्धा और प्रेम—	५.००	▲	२
292	नवधा भक्ति—	४.००	▲	१
273	नल-दमयन्ती— 645(तमिल) ५.००, 836 (कन्नड़) २.००, 1059 (गुजराती) ३.००, 1203(ओडिआ) ३.००, 916 (तेलुगु) ५.००	३.००	▲	१
274	महत्त्वपूर्ण चेतावनी—	३.००	▲	१
276	परमार्थ-पत्रावली—बँगला, प्रथम भाग	४.००	▲	१
277	उद्धार कैसे हो?—५१ पत्रोंका संग्रह 931 (गुजराती) ५.००	४.००	▲	२
278	सच्ची सलाह—८० पत्रोंका संग्रह	६.००	▲	२
280	साधनोपयोगी पत्र—७२ पत्रोंका संग्रह	६.००	▲	२
281	शिक्षाप्रद पत्र—७० पत्रोंका संग्रह	७.००	▲	२
282	पारमार्थिक पत्र—९१ पत्रोंका संग्रह	६.००	▲	२
284	अध्यात्मविषयक पत्र—५४ पत्रोंका संग्रह	४.००	▲	२
283	शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ—	५.००	▲	२
480	,, ,, (अँग्रेजी)	४.००	▲	१
716	,, ,, (कन्नड़) 1077 (गुजराती) ५.००	६.००	▲	२
680	उपदेशप्रद कहानियाँ—	७.००	▲	२
818	,, ,, (गुजराती)	७.००	▲	२
1109	,, ,, (कन्नड़)	८.००	▲	२
915	,, ,, (तेलुगु)	८.००	▲	२
891	प्रेममें विलक्षण एकता—	६.००	▲	२
958	मेरा अनुभव—	६.००	▲	२
1120	सिद्धान्त एवं रहस्यकी बातें—	६.००	▲	२
1283	सत्संगकी मार्मिक बातें—	६.००	▲	२
1150	साधनकी आवश्यकता—	६.००	▲	२
320	वास्तविक त्याग—	४.००	▲	२
285	आदर्श भ्रातृप्रेम—	४.००	▲	१
1187	,, ,, (ओडिआ)	४.००	▲	१
286	बालशिक्षा— 690 (तेलुगु)३.००, 719 (कन्नड़) ३.००, 1079 (ओडिआ) ३.००, 1045 (गुजराती) ३.००	३.००	▲	१
287	बालकोंके कर्तव्य— 1163 (ओडिआ) ३.००	३.००	▲	१
272	स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा—	७.००	▲	२
834	,, ,, ,, (कन्नड़) 1046 (गुजराती) ६.००	७.००	▲	२
290	आदर्श नारी सुशीला— 312(बँगला) ३.००, 665 (तेलुगु) ३.००, 644 (तमिल), ३.००,1174 (ओडिआ)२.००, 1047 (गुजराती) ३.००, 1276 (मराठी) २.००	३.००	▲	१
291	आदर्श देवियाँ— 1221 (ओडिआ) ३.००	३.००	▲	१
300	नारीधर्म—	३.००	▲	१
293	सच्चा सुख और उसकी प्राप्तिके उपाय— 1050 (गुजराती) १.५०	१.००	▲	१
294	संत-महिमा— 1048 (गुजराती) १.५०, 1038 (ओडिआ) १.५०	१.००	▲	१
295	सत्संगकी कुछ सार बातें—(हिन्दी) 296 (बँगला) १.००, 466(तमिल)१.००, 678 (तेलुगु) १.००, 844 (गुजराती) १.५०, 1040 (ओडिआ) १.५०, 1279 (मराठी) १.५०	१.५०	▲	१
301	भारतीय संस्कृति तथा शास्त्रोंमें नारीधर्म—	१.५०	▲	१
310	सावित्री और सत्यवान्—(हिन्दी) 893 (गुजराती) २.००, 609 (तमिल)२.००, 664 (तेलुगु)२.००, 1220 (ओडिआ) २.००	२.००	▲	१
717	(कन्नड़)	४.००	▲	१

कोड		मूल्य		डाकखर्च
299	श्रीप्रेमभक्ति-प्रकाश—ध्यानावस्थामें प्रभुसे वार्तालाप	३.००	▲	१
907	श्रीप्रेमभक्ति प्रकाशिका—(तेलुगु)	१.५०	▲	१
304	गीता पढ़नेके लाभ और त्यागसे भगवत्प्राप्ति— गजलगीतासहित— 1060 (गुजराती) १.००	१.५०	▲	१
703	गीता पढ़नेके लाभ और त्यागसे भगवत्प्राप्ति—(असमिया)	१.००	▲	१
536	गीता पढ़नेसे लाभ, सत्यकी शरणसे मुक्ति—(तमिल)		▲	
305	गीताका तात्त्विक विवेचन एवं प्रभाव—	२.००	▲	१
309	भगवत्प्राप्तिके विविध उपाय— (कल्याणप्राप्तिकी कई युक्तियाँ) 1078 (ओडिआ) ३.००	३.००	▲	१
311	परलोक और पुनर्जन्म एवं वैराग्य—	१.५०	▲	१
306	धर्म क्या है? भगवान् क्या हैं?— 1206 (गुजराती) १.००, 1089 (ओडिआ) १.५०	१.००	▲	१
307	भगवान्‌की दया— 1051 (गुजराती) १.००	१.५०	▲	१
1039	भगवान्‌की दया एवं भगवत्कृपा (ओडिआ)	१.५०	▲	१
725	भगवान्‌की दया एवं भगवान्‌का हेतुरहित सौहार्द— (कन्नड़)	३.००	▲	१
316	ईश्वर साक्षात्कारके लिये नाम-जप सर्वोपरि साधन है और सत्यकी शरणसे मुक्ति	१.००	▲	१
722	सत्यकी शरणसे मुक्ति और गीता पढ़नेके लाभ—(कन्नड़)	२.००	▲	१
314	व्यापार-सुधारकी आवश्यकता और हमारा कर्तव्य— 1055 (गुजराती) १.५०, 1170 (मराठी) १.५०	१.५०	▲	१
623	धर्मके नामपर पाप—	१.००	▲	१
315	चेतावनी और सामयिक चेतावनी— 1056 (गुजराती) १.००	१.५०	▲	१
318	ईश्वर दयालु और न्यायकारी है और अवतारका सिद्धान्त— 1053 (गुजराती) १.००	१.५०	▲	१
270	भगवान्‌का हेतुरहित सौहार्द एवं महात्मा किसे कहते हैं ?—	१.००	▲	१
673	भगवान्‌का हेतुरहित सौहार्द—(तेलुगु)	१.५०	▲	१
271	भगवत्प्रेमकी प्राप्ति कैसे हो?—	१.५०	▲	१
302	ध्यान और मानसिक पूजा— 1127 (गुजराती) १.००	१.५०	▲	१
326	प्रेमका सच्चा स्वरूप और शोकनाशके उपाय— 1054 (गुजराती) १.००	१.००	▲	१
328	संध्या-गायत्रीका महत्त्व, चतु:श्लोकी भागवत एवं गजलगीतासहित—	१.५०	▲	१

परम श्रद्धेय श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार (भाईजी) -के अनमोल प्रकाशन

कोड		मूल्य		डाकखर्च
820	भगवच्चर्चा—(ग्रन्थाकार)		■	
050	पदरत्नाकर—	५०.००	■	१०
049	श्रीराधा-माधव-चिन्तन—	५०.००	■	१०
058	अमृत-कण—	१६.००	■	३
332	ईश्वरकी सत्ता और महत्ता—	१५.००	■	४
333	सुख-शान्तिका मार्ग—	१५.००	■	३
343	मधुर—	११.००	■	३
056	मानव-जीवनका लक्ष्य—	९.००	■	३
331	सुखी बननेके उपाय—	१०.००	■	२
334	व्यवहार और परमार्थ—	१०.००	■	३
514	दु:खमें भगवत्कृपा—	९.००	■	३
386	सत्संग-सुधा—		■	
342	संतवाणी—ढाई हजार अनमोल बोल	१५.००	■	३
850	,, (तमिल) (भाग १)		▲	
952	,, (,,) (भाग २)		▲	
953	,, (,,) (भाग ३)		▲	

कोड		मूल्य	डाकखर्च
347	तुलसीदल—	१०.०० ■	२
339	सत्संगके बिखरे मोती—	१०.०० ■	२
349	भगवत्प्राप्ति एवं हिन्दू-संस्कृति—	१२.०० ■	३
350	साधकोंका सहारा—	१५.०० ■	४
351	भगवच्चर्चा—(भाग-५)	१५.०० ■	४
352	पूर्ण समर्पण—	१५.०० ■	४
353	लोक-परलोक-सुधार—(भाग-१)	८.०० ▲	२
354	आनन्दका स्वरूप—(लोक-परलोक-सुधार भाग-२)	८.५० ■	३
355	महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर—२९२ (भाग-३)	१०.०० ■	३
356	शान्ति कैसे मिले ?—(लोक-परलोक-सुधार भाग-४)	१३.०० ■	३
357	दुःख क्यों होते हैं ?— (भाग-५)	१२.०० ■	३
348	नैवेद्य—	१०.०० ■	३
337	दाम्पत्य-जीवनका आदर्श—	७.०० ▲	२
905	दाम्पत्य-जीवनका आदर्श—(तेलुगु)	८.०० ▲	२
	1128 (गुजराती) ७.००		
336	नारीशिक्षा—	८.०० ▲	२
	1062 (गुजराती) ८.००		
340	श्रीरामचिन्तन—	९.०० ■	२
338	श्रीभगवन्नाम-चिन्तन—	१०.०० ▲	२
345	भवरोगकी रामबाण दवा—	८.०० ▲	२
346	सुखी बनो—	७.०० ▲	२
341	प्रेमदर्शन—	९.०० ▲	२
904	,, (तेलुगु) १२.००		
358	कल्याण-कुंज—(क० कुं० भाग-१)	६.०० ▲	२
359	भगवान्‌की पूजाके पुष्प—(,, भाग-२)	७.०० ▲	२
360	भगवान् सदा तुम्हारे साथ हैं(,, भाग-३)	७.०० ▲	२
361	मानव-कल्याणके साधन—(,, भाग-४)	१०.०० ■	३
362	दिव्य सुखकी सरिता— (,, भाग-५)	५.०० ▲	१
	1067 (गुजराती) ६.००		
363	सफलताके शिखरकी सीढ़ियाँ-(,, भाग-६)	५.०० ▲	१
364	परमार्थकी मन्दाकिनी—(,, भाग-७)	५.०० ▲	१
366	मानव-धर्म—	६.०० ▲	१
526	महाभाव-कल्लोलिनी	५.०० ▲	१
367	दैनिक कल्याण-सूत्र—	४.०० ▲	१
368	प्रार्थना—इक्कीस प्रार्थनाओंका संग्रह	३.०० ▲	१
865	,, (ओडिआ)	३.०० ▲	१
777	प्रार्थना-पीयूष—	२.०० ▲	१
369	गोपीप्रेम—	३.०० ▲	१
370	श्रीभगवन्नाम—	३.०० ▲	१
	1186 (ओडिआ) ३.००		
373	कल्याणकारी आचरण—	१.५० ▲	१
374	साधन-पथ—सचित्र	४.०० ▲	१
	1126 (गुजराती) ४.००		
375	वर्तमान शिक्षा—	२.०० ▲	१
376	स्त्री-धर्म-प्रश्नोत्तरी—	३.०० ▲	१
377	मनको वश करनेके कुछ उपाय—	१.०० ▲	१
	1058 (गुजराती) १.५०		
378	आनन्दकी लहरें—	१.५० ▲	१
848	,, ,, (बँगला)	१.५० ▲	१
1011	,, ,, (ओडिआ)	१.५० ▲	१
1049	,, ,, (गुजराती) १.५०		
379	गोवध भारतका कलंक एवं गायका माहात्म्य—	३.०० ▲	१
380	ब्रह्मचर्य—	२.०० ▲	१
1041	ब्रह्मचर्य एवं मनको वश करनेके उपाय—(ओडिआ)	१.०० ▲	१
381	दीनदुखियोंके प्रति कर्तव्य—	१.०० ▲	१
382	सिनेमा मनोरंजन या विनाशका साधन	▲	
344	उपनिषदोंके चौदह रत्न—	५.०० ▲	१
371	राधा-माधव-रससुधा (षोडशगीत) सटीक	३.०० ▲	१
384	विवाहमें दहेज—	१.०० ▲	१
809	दिव्य संदेश एवं मनुष्य सर्वप्रिय और जीवन कैसे बनें—	१.०० ▲	१

परम श्रद्धेय स्वामी रामसुखदासजीके कल्याणकारी साहित्य

कोड		मूल्य	डाकखर्च
465	साधन-सुधा-सिन्धु—	७०.०० ■	१८
400	कल्याण-पथ—	६.०० ▲	२
401	मानसमें नाम-वन्दना—	७.०० ▲	२
605	जित देखूँ तित तू—	५.०० ▲	२
406	भगवत्प्राप्ति सहज है—	५.०० ▲	२
535	सुन्दर समाजका निर्माण—	७.०० ▲	२
1175	प्रश्नोत्तर मणिमाला—	७.०० ▲	२
	1305 (बँगला) ७.००, 1209 (ओडिआ) ७.००		
1247	मेरे तो गिरधर गोपाल—	४.०० ▲	१
403	जीवनका कर्तव्य—	६.०० ▲	२
436	कल्याणकारी प्रवचन—(हिन्दी)	५.०० ▲	२
	404 (गुजराती) ७.००, 816 (बँगला) ३.००, 1139 (ओडिआ) ६.००		
405	नित्ययोगकी प्राप्ति—	६.०० ▲	२
1093	आदर्श कहानियाँ—	६.०० ▲	२
	1208 (ओडिआ) ६.००		
407	भगवत्प्राप्तिकी सुगमता—	६.०० ▲	२
593	,, (कन्नड़) ५.००, 881 (मराठी) ४.००		
408	भगवान्‌से अपनापन—	४.०० ▲	१
	1066 (गुजराती) ४.००, 1138 (ओडिआ) ४.००		
861	सत्संग-मुक्ताहार—	४.०० ▲	१
1003	,, ,, (ओडिआ)	३.०० ▲	१
1151	,, (गुजराती) ३.००		
860	मुक्तिमें सबका अधिकार—	१.०० ▲	१
1152	,, ,, (गुजराती) १.५०		
409	वास्तविक सुख—	५.०० ▲	१
	1243 (तमिल) ५.००		
1308	प्रेरक कहानियाँ	५.०० ▲	१
411	साधन और साध्य—	४.०० ▲	१
880	,, ,, (मराठी) ३.००, 956 (बँगला) २.००		
412	तात्त्विक प्रवचन—(हिन्दी)	४.०० ▲	२
	885 (मराठी) ४.००, 1004 (ओडिआ) ४.००, 955 (बँगला) ३.००, 413 (गुजराती) ४.००		
414	तत्त्वज्ञान कैसे हो? एवं मुक्तिमें सबका समान अधिकार	६.०० ▲	२
410	जीवनोपयोगी प्रवचन—	६.०० ▲	२
822	अमृत-बिन्दु—	५.०० ▲	२
940	,, ,, (गुजराती)	५.०० ▲	२
1102	,, ,, (बँगला) ५.००, 1110 (तमिल) ५.००		
821	किसान और गाय—	१.५० ▲	१
416	जीवनका सत्य—	४.०० ▲	१
942	,, ,, (गुजराती)	४.०० ▲	१
417	भगवन्नाम—	३.०० ▲	१
898	,, (मराठी)	४.०० ▲	१
418	साधकोंके प्रति—	४.०० ▲	१
	1303 (बँगला) ४.००, 886 (मराठी) ४.००		
419	सत्संगकी विलक्षणता—	३.०० ▲	१
	1063 (गुजराती) ३.००		
545	जीवनोपयोगी कल्याण-मार्ग—	३.०० ▲	१
	1064 (गुजराती) ३.००		
420	मातृशक्तिका घोर अपमान—	३.०० ▲	१
	805 (तमिल) २.००, 849 (बँगला) १.०० 882 मराठी २.००, 939 (गुजराती) ३.००, 1005 (ओडिआ) ३.००		
421	जिन खोजा तिन पाइयाँ—	४.०० ▲	१
	1359(बँगला) ४.००		
422	कर्मरहस्य—(हिन्दी)	३.०० ▲	१
	1358 (बँगला) ४.००423(तमिल) ३.००, 325 (कन्नड़) २.५०, 817 (ओडिआ) ३.००,		
424	वासुदेवः सर्वम्—	३.०० ▲	१
	1006 (मराठी) ३.००		
425	अच्छे बनो—	४.०० ▲	१
426	सत्संगका प्रसाद—	४.०० ▲	१
946	,, ,, (गुजराती)	४.०० ▲	१

कोड		मूल्य	डाकखर्च
1019	सत्यकी खोज—	४.०० ▲	१
1035	सत्यकी स्वीकृतिसे कल्याण—	१.०० ▲	१
1360	तू-ही-तू	१.५० ▲	१
1176	शिखा (चोटी) धारणकी आवश्यकता और हम कहाँ जा रहे हैं? विचार करें—	१.५० ▲	१
	1293 (बँगला) १.५०		
1255	कल्याणके तीन सुगम मार्ग—	१.५० ▲	१
	1319 (बँगला) १.५०, 1339 (मराठी) ३.००		
431	स्वाधीन कैसे बनें?—	१.५० ▲	१
702	यह विकास है या विनाश जरा सोचिये—	१.५० ▲	१
589	भगवान् और उनकी भक्ति—	५.०० ▲	२
617	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम—	३.०० ▲	१
	1117 (तमिल) ५.००, 625(बँगला) ३.००, 758 (तेलुगु)३.००, 796 (ओडिआ) ३.००, 831 (कन्नड़) २.००, 941 (गुजराती) २.००, 899 मराठी ३.००		
427	गृहस्थमें कैसे रहें ?—(हिन्दी)	५.०० ▲	२
	428 (बँगला) ३.००, 429 (मराठी) ७.००, 128 (कन्नड़) ५.००, 430(ओडिआ)४.००, 472 (अँग्रेजी) ३.००, 553(तमिल)८.००, 733 (तेलुगु) ५.००, 943 (गुजराती) ५.००		
432	एकै साधे सब सधै—	४.०० ▲	१
	1088 (गुजराती) ३.००, 655 (तमिल) ४.००, 761 (तेलुगु) ४.००		
433	सहज साधना—	३.०० ▲	१
	1165 (गुजराती) ३.००, 903 (बँगला) ३.००, 1267 (ओडिआ) ३.००		
434	शरणागति—(हिन्दी)	३.०० ▲	१
	568 (तमिल)३.००, 757 (ओडिआ)३.००, 759 (तेलुगु)३.००		
435	आवश्यक शिक्षा—(सन्तानका कर्तव्य एवं आहार-शुद्धि)	४.०० ▲	१
	1177 (गुजराती) २.००		
1012	पञ्चामृत—(१०० पन्नोंका पैकेटमें)	१.०० ■	१
	1229 (गुजराती) १.००		
1037	हे मेरे नाथ मैं आपको भूलूँ नहीं— (१०० पन्नोंका पैकेटमें)	१.०० ■	१
1072	क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं?—	३.०० ▲	१
	1141 (गुजराती) ३.००, 1130 (ओडिआ) ३.००		
730	संकल्पपत्र—	२.०० ▲	१
515	सर्वोच्चपदकी प्राप्तिका साधन—	१.०० ▲	१
	938 (गुजराती) १.००, 606 (तमिल) २.००		
770	अमरताकी ओर—	५.०० ▲	२
	1145 (गुजराती) ४.००		
438	दुर्गतिसे बचो— (हिन्दी)	१.५० ▲	१
449	,, (बँगला) (गुरुतत्त्व-सहित) २.००, 900 (मराठी)		
439	महापापसे बचो —(हिन्दी)	१.५० ▲	१
	451 (बँगला) १.००, 731 (तेलुगु) १.५०, 549 (उर्दू)१.२५, 597 (कन्नड़) १.५०, 1148 (गुजराती) १.००		
591	महापापसे बचो, संतानका कर्तव्य (तमिल)	▲	
440	सच्चा गुरु कौन ?—	१.५० ▲	१
798	गुरुतत्त्व— (ओडिआ)	१.५० ▲	१
732	नित्य-स्तुति, आदित्य-हृदयस्तोत्र (तेलुगु)	१.०० ■	१
736	नित्य-स्तुति, आदित्य-हृदयस्तोत्र (कन्नड़)	१.०० ■	१
781	अलौकिक प्रेम—	१.५० ▲	१
1153	,, (गुजराती) १.००		
444	नित्य-स्तुति और प्रार्थना—	१.५० ▲	१
729	सार-संग्रह एवं सत्संगके अमृत-कण	१.५० ▲	१
1178	,, ,, (गुजराती) १.५०		
445	हम ईश्वरको क्यों मानें ?—(हिन्दी)	१.५० ▲	१
450	,, (बँगला)१.००, 554 (नेपाली)		
745	भगवत्तत्त्व—	१.०० ▲	१
632	सब जग ईश्वररूप है—	४.०० ▲	१

कोड		मूल्य		डाकखर्च
447	मूर्तिपूजा-नाम-जपकी महिमा—	१.५०	▲	१
852	,, ,, (ओडिआ) १.५०, 469 (बँगला) १.००, 569 (तमिल) १.००, 734 (तेलुगु) २.००, 901 (मराठी)			
723	नाम-जपकी महिमा, आहार-शुद्धि— (कन्नड़)	३.००	▲	१
	671 (तेलुगु) १.००, 550 (तमिल) १.००			

नित्यपाठ साधन-भजन-हेतु

कोड		मूल्य		डाकखर्च
592	नित्यकर्म-पूजा-प्रकाश—	३०.००	■	५
610	व्रतपरिचय—	२५.००	■	४
1162	एकादशी-व्रतका माहात्म्य—मोटा टाइप	१०.००	■	२
1136	वैशाख-कार्तिक-माघमास-माहात्म्य	१८.००	■	३
052	स्तोत्ररत्नावली—सानुवाद	१८.००	■	३
	914 (तेलुगु) १७.००			
117	दुर्गासप्तशती—मूल, मोटा टाइप	१२.००	■	२
876	,, ,, मूल गुटका	६.००	■	२
909	,, ,, मूल (तेलुगु)	१०.००	■	२
843	,, ,, मूल (कन्नड़)	६.००	■	२
1346	,, ,, सानुवाद मोटा टाइप	२०.००	■	३
1366	,, ,, सानुवाद (गुजराती)	१५.००	■	३
118	,, ,, सानुवाद	१५.००	■	३
489	,, ,, सजिल्द	२०.००	■	३
866	,, ,, केवल हिन्दी	१०.००	■	२
1161	,, ,, केवल भाषा मोटा टाइप	३०.००	■	४
1281	,, ,, सटीक राजसंस्करण	३०.००	■	४
819	श्रीविष्णुसहस्त्रनाम-शांकरभाष्य	१२.००	■	३
206	विष्णुसहस्त्रनाम—सटीक	३.००	■	१
837	,, कन्नड़	४.००	■	१
	226 मूलपाठ १.५०, 740 (मलयालम) 670 (तेलुगु) १.५०, 737 (कन्नड़) २.००, 794 (तमिल) २.००, 937 (गुजराती) १.५०			
509	सूक्ति-सुधाकर—सूक्ति-संग्रह	१०.००	■	२
207	रामस्तवराज—(सटीक)		■	
211	आदित्यहृदयस्तोत्रम्—हिन्दी-अँग्रेजी-अनुवाद-सहित	१.५०	■	१
	1070 (ओडिआ) १.५०			
224	श्रीगोविन्ददामोदरस्तोत्र-भक्त बिल्वमंगलरचित		■	
674	,, ,, (तेलुगु)	३.००	■	१
1154	,, ,, (ओडिया)	३.००	■	१
231	रामरक्षास्तोत्रम्—	१.५०	■	१
912	,, ,, सटीक (तेलुगु)	१.५०	■	१
675	संक्षिप्त रामायणम् और रामरक्षास्तोत्रम् (तेलुगु)	२.००	■	१
715	महामन्त्रराजस्तोत्रम्—		■	
704	श्रीशिवसहस्त्रनामस्तोत्रम्—		■	
705	श्रीहनुमत्सहस्त्रनामस्तोत्रम्—		■	
706	श्रीगायत्रीसहस्त्रनामस्तोत्रम्—	२.००	■	१
707	श्रीरामसहस्त्रनामस्तोत्रम्—		■	
708	श्रीसीतासहस्त्रनामस्तोत्रम्—	२.००	■	१
709	श्रीसूर्यसहस्त्रनामस्तोत्रम्—		■	
710	श्रीगङ्गासहस्त्रनामस्तोत्रम्—	२.००	■	१
711	श्रीलक्ष्मीसहस्त्रनामस्तोत्रम्—		■	
712	श्रीगणेशसहस्त्रनामस्तोत्रम्—		■	
713	श्रीराधिकासहस्त्रनामस्तोत्रम्—		■	
810	श्रीगोपालसहस्त्रनामस्तोत्रम्—	३.००	■	१
495	दत्तात्रेय-वज्रकवच—सानुवाद	२.००	■	१
	930 (तेलुगु) ३.००			
229	श्रीनारायणकवच एवं अमोघ शिवकवच—	३.००	■	१
	1069 (ओडिआ) १.५०			
563	शिवमहिम्नस्तोत्र—	३.००	■	१
1023	श्रीशिवमहिम्नःस्तोत्रम्-सटीक तेलुगु	३.००	■	१
054	भजन-संग्रह—पाँचों भाग एक साथ	२४.००	■	४
063	पद-पद्माकर—		■	
140	श्रीरामकृष्णलीला-भजनावली—			
328	भजनसंग्रह	१४.००	■	३
142	चेतावनी-पद-संग्रह—(दोनों भाग)	१४.००	■	२

कोड		मूल्य		डाकखर्च
144	भजनामृत—६७ भजनोंका संग्रह	६.००	■	१
1355	सचित्र स्तुति संग्रह	५.००	■	१
1344	सचित्र आरती संग्रह—	१०.००	■	२
153	आरती-संग्रह—१०२ आरतियोंका संग्रह	५.००	■	१
807	सचित्र आरतियाँ—	८.००	■	२
1287	,, ,, (गुजराती)	१०.००		
385	नारद-भक्ति-सूत्र—सानुवाद	१.००	▲	१
330	,, ,, ,, (बँगला)	२.००	▲	१
499	,, ,, ,, (तमिल)	१.००	▲	१
208	सीतारामभजन—	३.००	■	१
221	हरेरामभजन—दो माला (गुटका)	३.००	■	१
222	हरेरामभजन—१४ माला		■	
576	विनय-पत्रिकाके पैंतीस पद—	२.००	■	१
225	गजेन्द्रमोक्ष-सानुवाद, हिन्दी पद्य, भाषानुवाद	१.५०	■	१
677	,, सानुवाद, (तेलुगु)	१.५०	■	१
	1068 (ओडिआ) १.५०			
699	गङ्गालहरी—	१.००	■	१
232	श्रीरामगीता—	२.००	■	१
383	भगवान् कृष्णकी कृपा तथा दिव्य प्रेमकी प्राप्तिके लिये—	१.००	■	१
1094	हनुमानचालीसा-हिन्दी भावार्थसहित	४.००	■	१
227	हनुमानचालीसा—(पाकेट साइज)	१.५०	■	१
695	,, ,, ,, (छोटी साइज)	१.००	■	१
	1198 (गुजराती) १.००, 600(तमिल) २.००, 626 (बँगला) १.५०, 676 (तेलुगु) १.५०, 828(गुजराती) १.५०, 738 (कन्नड़) १.००, 856 (ओडिआ) १.५०, 1323(असमिया) १.५०			
228	शिवचालीसा—	१.५०	■	१
1185	शिवचालीसा— लघु आकार	१.००	■	१
851	दुर्गाचालीसा, विन्ध्येश्वरीचालीसा	१.५०	■	१
1033	दुर्गाचालीसा—लघु	१.००	■	१
203	अपरोक्षानुभूति—	२.००	■	१
139	नित्यकर्म-प्रयोग—	८.००	■	२
524	ब्रह्मचर्य और संध्या-गायत्री—	२.००	■	१
210	सन्ध्योपासनविधि एवं तर्पण—बलिवैश्वदेवविधि—मन्त्रानुवादसहित	३.००	■	१
236	साधकदैनन्दिनी—	२.००	■	१
614	सन्ध्या—	१.५०	■	१

बालोपयोगी पाठ्यपुस्तकें

कोड		मूल्य		डाकखर्च
573	बालक-अङ्क—(कल्याण-वर्ष २७)	८०.००	■	१६
1316	बालपोथी (शिशु), रंगीन	१०.००	■	२
461	,, ,, भाग-१	३.००	■	१
212	,, ,, भाग-२	३.००	■	१
684	,, ,, भाग-३	२.००	■	१
764	,, ,, भाग-४	४.००	■	१
765	,, ,, भाग-५	४.००	■	१
125	,, ,, रंगीन, भाग-१	४.००	■	१
216	बालककी दिनचर्या—	३.००	■	१
214	बालकके गुण—	३.००	■	१
217	बालकोंके सीख—	३.००	■	१
219	बालकके आचरण—	३.००	■	१
218	बाल-अमृत-वचन—	३.००	■	१
696	बाल-प्रश्नोत्तरी—	३.००	■	१
215	आओ बच्चो तुम्हें बतायें—	३.००	■	१
213	बालकोंकी बोल-चाल—	३.००	■	१
145	बालकोंकी बातें—	६.००	■	१
146	बड़ोंके जीवनसे शिक्षा—	६.००	■	१
150	पिताकी सीख—	७.००	■	२
197	संस्कृतिमाला—भाग-१	२.००	■	१
516	आदर्श चरितावली—	३.००	■	१
396	आदर्श ऋषि-मुनि—		■	
397	आदर्श देशभक्त—	४.००	■	१
398	आदर्श सम्राट्—			
399	आदर्श संत—	४.००	■	१
402	आदर्श सुधारक—	३.००	■	१
897	लघुसिद्धान्तकौमुदी—		■	
148	वीर बालक—	५.००	■	१

कोड		मूल्य		डाकखर्च
149	गुरु और माता-पिताके भक्त बालक—	५.००	■	१
152	सच्चे-ईमानदार बालक—	४.००	■	१
155	दयालु और परोपकारी बालक-बालिकाएँ—	४.००	■	१
156	वीर बालिकाएँ—	४.००	■	१
727	स्वास्थ, सम्मान और सुख—	३.००	■	१
209	रामायणमध्यमा-परीक्षा-पाठ्य पुस्तक—	०.७५	■	१

सर्वोपयोगी प्रकाशन

कोड		मूल्य		डाकखर्च
698	मार्क्सवाद और रामराज्य-स्वामी करपात्रीजी		■	
202	मनोबोध—	५.००	■	१
746	श्रमण नारद—	२.००	■	१
747	सप्तमहाव्रत—	२.००	■	१
1300	महाकुम्भ पर्व—		■	
542	ईश्वर—	२.००	■	१
196	मननमाला—			
57	मानसिक दक्षता-(मनोवैज्ञानिक विश्लेषण)		■	
59	जीवनमें नया प्रकाश—(ले० रामचरण महेन्द्र)	१३.००	■	२
60	आशाकी नयी किरणें—	१४.००	■	२
132	स्वर्णपथ—	११.००	■	२
55	महकते जीवनफूल-	१८.००	■	३
64	प्रेमयोग—	१३.००	■	३
774	गीताप्रेस-परिचय—	४.००	■	१
387	प्रेम-सत्संग-सुधामाला—	१०.००	■	२
668	प्रश्नोत्तरी—	१.००	■	१
501	उद्धव-सन्देश—	१३.००	■	२
191	भगवान् कृष्ण—	३.५०	■	१
	601(तमिल) ५.००, 641 (तेलुगु) ५.००, 895 (गुजराती) ३.००			
193	भगवान् राम—		■	
	1085 (गुजराती) ४.००			
195	भगवान्पर विश्वास—	४.००	■	१
120	आनन्दमय जीवन—	१०.००	■	२
130	तत्त्वविचार—	९.००	■	२
133	विवेक-चूड़ामणि—	१०.००	■	२
910	विवेक-चूड़ामणि—(तेलुगु)	१३.००	■	२
701	गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका	३.००	▲	१
	826 (ओडिआ) २.००, 762 (बँगला) २.००, 742 (तमिल) २.५०, 752 (तेलुगु) २.००, 802 (मराठी) २.००, 783 (अंग्रेजी) २.००, 804 (गुजराती) २.००, 838 (कन्नड़) २.००			
131	सुखी जीवन—	९.००	■	२
122	एक लोटा पानी—	१०.००	■	२
888	परलोक और पुनर्जन्मकी सत्य घटनाएँ—	१०.००	■	२
1217	भवनभास्कर—	१०.००	■	१
134	सती द्रौपदी—	८.००	■	२
137	उपयोगी कहानियाँ—	७.००	■	१
	919 (तेलुगु) ६.००, 127 (तमिल) ७.००, 724 (कन्नड़) ५.००, 934 (गुजराती) ६.००			
157	सती सुकला—	३.००	■	१
147	चोखी कहानियाँ—	४.००	■	१
	692(तेलुगु) ४.००, 646 (तमिल) ६.००			
159	आदर्श उपकार-(पढ़ो, समझो और करो)	८.००	■	२
160	कलेजेके अक्षर—,, ,, ,, ,,	८.००	■	२
161	हृदयकी आदर्श विशालता— ,, ,,	८.००	■	२
162	उपकारका बदला—	८.००	■	२
163	आदर्श मानव-हृदय— ,, ,,	८.००	■	२
164	भगवान्के सामने सच्चा सो सच्चा—,, ,,	८.००	■	२
165	मानवताका पुजारी—	८.००	■	२
827	तेईस चुलबुली कहानियाँ— .. ,,	८.००	■	२
166	परोपकार और सच्चाईका फल-,, ,,	८.००	■	२
510	असीम नीचता और असीम साधुता-	८.००	■	२
129	एक महात्माका प्रसाद—	१५.००	■	३
151	सत्संगमाला एवं ज्ञानमणिमाला—	७.००	■	२

चित्रकथा

कोड		मूल्य		डाकखर्च
190	बाल-चित्रमय श्रीकृष्णलीला—	८.००	■	२
1114	श्रीकृष्णलीला (राजस्थानी शैली १८ वीं शताब्दी)	१००.००	■	७

कोड		मूल्य	डाकखर्च
867	भगवान् सूर्य—	४०.०० ■	५
1156	एकादश रुद्र (शिव)—	५०.०० ■	५
1032	बालचित्र-रामायण—पुस्तकाकार	४.०० ■	२
869	कन्हैया—(धारावाहिक)	१०.०० ■	२
	1096 (बँगला) १०.००, 647 (तमिल) ७.००		
	1224 (गुजराती) १०.००, 1249(ओडिआ) १०.००		
870	गोपाल—(धारावाहिक)	१०.०० ■	२
	1097 (बँगला) १०.००, 649 (तमिल)७.००		
871	मोहन—(धारावाहिक)	१०.०० ■	२
	1098 (बँगला) १०.००, 650 (तमिल)७.००,		
	1225 (गुजराती) १०.००, 1248 (ओडिआ) १०.००		
872	श्रीकृष्ण—(धारावाहिक)	१०.०० ■	२
	1123(बँगला)८.००, 648 (तमिल) ७.००		
1018	नवग्रह—चित्र एवं परिचय	१०.०० ■	२
1016	रामलला—	१५.०० ■	२
1116	राजाराम— पत्रिका ,,	१५.०० ■	२
862	मुझे बचाओ, मेरा क्या कसूर?	१५.०० ■	२
1017	श्रीराम—नवीन संस्करण	१५.०० ■	२
1278	दशमहाविद्या	१०.०० ■	२
829	अष्टविनायक—	१०.०० ■	२
	1010 (ओडिआ) १०.००,		
	857 (मराठी) ६.००, 1226 (गुजराती)१०.००		
1214	मानस-स्तुति-संग्रह—	१०.०० ■	२
1343	हर-हर महादेव	१५.०० ■	३
204	ॐ नमः शिवाय—		
	(द्वादश ज्योतिर्लिंगोंकी कथा)	१५.०० ■	२
1075	,, (बँगला)	१५.०० ■	२
1250	,, (ओडिआ)	१५.०० ■	२
787	जय हनुमान—	१५.०० ■	२
887	,, (तेलुगु) १५.००, 1009 (ओड़िआ) १५.००		
779	दशावतार—	१०.०० ■	२
1292	,, (बँगला)	१०.०० ■	२
1215	प्रमुख देवता—	१०.०० ■	२
1216	प्रमुख देवियाँ—	१०.०० ■	२
205	नवदुर्गा—	१०.०० ■	२
	1357 (कन्नड़) १०.००, 1228 (गुजराती) १०.००,		
	1301 (तेलुगु) १०.००, 825(असमिया) ५.००,		
	808 (अंग्रेजी) ८.००, 863 (ओडिआ) ८.००,		
	1043 (बँगला) ८.००		
1307	नवदुर्गा पॉकेट साइज	४.०० ■	१
537	बाल-चित्रमय बुद्धलीला—	५.०० ■	२
194	बाल-चित्रमय चैतन्यलीला—	■	
693	श्रीकृष्णरेखा-चित्रावली—	■	
656	गीता-माहात्म्यकी कहानियाँ—	६.०० ■	२
	1134 (तमिल) ८.००, 1309 (तेलुगु) १०.००		
651	गोसेवाके चमत्कार—		
365	गोसेवाके चमत्कार— (तमिल)	८.०० ■	२

रंगीन चित्र-प्रकाशन

कोड		मूल्य	डाकखर्च
237	जयश्रीराम—भगवान् रामकी सम्पूर्ण लीलाओंका चित्रण	१५.०० ●	
546	जय श्रीकृष्ण—भगवान् कृष्णकी सम्पूर्ण लीलाओंका चित्रण	१५.०० ●	
1001	जगज्जननी श्रीराधा—	८.०० ●	
1020	श्रीराधा-कृष्ण—युगल छवि	८.०० ●	
491	हनुमान्जी—(भक्तराज हनुमान्)	८.०० ●	
492	भगवान् विष्णु—	८.०० ●	
560	लड्डू गोपाल (भगवान् श्रीकृष्णका बालस्वरूप)	८.०० ●	
1351	सुमधुर गोपाल—	८.०० ●	
548	मुरलीमनोहर—(भगवान् मुरलीमनोहर)	८.०० ●	
776	सीताराम— युगल छवि	८.०० ●	
1290	नटराज शिव—	८.०० ●	
630	सर्वदेवमयी गौ—	८.०० ●	
531	श्रीबाँकेबिहारी—	८.०० ●	
812	नवदुर्गा (माँ दुर्गाके नौ स्वरूपोंका चित्रण)	८.०० ●	
437	कल्याण-चित्रावली—I	८.०० ●	२
1320	कल्याण-चित्रावली—II	८.०० ●	२

'कल्याण' के पुनर्मुद्रित विशेषाङ्क

कोड		मूल्य	डाकखर्च
1184	कृष्णाङ्क— (कल्याण ६)	१००.०० ■	१३
749	ईश्वराङ्क— (,, ७)	९०.०० ■	१३
635	शिवाङ्क— (,, ८)	८०.०० ■	१५
41	शक्ति-अङ्क— (,, ९)	१००.०० ■	१५
616	योगाङ्क— (,, १०)	■	
627	संत-अङ्क— (कल्याण १२)	१००.०० ■	१८
604	साधनाङ्क— (,, १५)	७५.०० ■	
1104	भागवताङ्क— (,, १६)	१३०.०० ■	१९
1002	सं० वाल्मीकीय रामायणाङ्क—(,, १८)	६५.०० ■	११
44	संक्षिप्त पद्मपुराण—(,, १९)	१२०.०० ■	१८
539	संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण—(,,२१)	५५.०० ■	८
1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण (कल्याण २१)	७०.०० ■	९
43	नारी-अङ्क— (,, २२)	७०.०० ■	
659	उपनिषद्-अङ्क— (,, २३)	१००.०० ■	१५
518	हिन्दू-संस्कृति-अङ्क- (,, २४)	१००.०० ■	१८
279	सं० स्कन्दपुराण— (,, २५)	१४०.०० ■	
40	भक्त-चरिताङ्क— (,, २६)	८०.०० ■	१६
573	बालक-अङ्क— (,, २७)	८०.०० ■	१६
1183	नारदपुराण— (,, २८)	१००.०० ■	१५
667	संतवाणी-अङ्क— (,, २९)	■	
587	सत्कथा-अङ्क— (,, ३०)	७५.०० ■	१४
636	तीर्थाङ्क— (,, ३१)	८५.०० ■	१५
660	भक्ति-अङ्क— (,, ३२)	■	
1133	सं० देवीभागवत-मोटा टाइप (,, ३४)	१२०.०० ■	१८
574	संक्षिप्त योगवासिष्ठाङ्क- (,, ३५)	९०.०० ■	१४
789	सं० शिवपुराण-(बड़ा टाइप)(,, ३६)	१००.०० ■	१५
1286	,, ,, (गुजराती)	११०.०० ■	१५
631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराणाङ्क(,, ३७)	७५.०० ■	१४
1135	भगवन्नाम-महिमा और प्रार्थना-अङ्क	८५.०० ■	१३
572	परलोक-पुनर्जन्माङ्क —(,, ४३)	७०.०० ■	१४
517	गर्ग-संहिता-[भगवान् श्रीराधाकृष्णकी दिव्य लीलाओंका वर्णन](,, ४४ एवं ४५)	७०.०० ■	१२
1113	नरसिंह पुराणम्— (,, ४५)	५५.०० ■	८
657	श्रीगणेश-अङ्क —(,, ४८)	६५.०० ■	१०
42	हनुमान-अङ्क— (,, ४९)	७०.०० ■	११
791	सूर्याङ्क— (,, ५३)	६०.०० ■	९
584	स० भविष्यपुराणाङ्क (,, ६६)	७५.०० ■	११
586	शिवोपासनाङ्क— (,, ६७)	७५.०० ■	११
628	रामभक्ति-अङ्क— (कल्याण ६८)	६५.०० ■	११
653	गोसेवा-अङ्क— (,, ६९)	७०.०० ■	११
1132	धर्मशास्त्राङ्क— (,, ७०)	■	
1131	कूर्मपुराणाङ्क— (,, ७१)	■	
448	भगवल्लीला-अङ्क—(,, ७२)	६५.०० ■	११
1044	वेद-कथाङ्क (,, ७३)	७५.०० ■	
1189	सं० गरुडपुराणाङ्क (,, ७४)	८०.०० ■	१२
	कल्याण एवं कल्याण-कल्पतरुके मासिक अङ्क		
	कल्याण-मासिक-अङ्क	६.०० ■	२
602	Kalyana-Kalpataru (Monthly Issues)	■	

अन्य भारतीय भाषाओंके प्रकाशन

संस्कृत

कोड		मूल्य	डाकखर्च
679	गीतामाधुर्य	६.०० ▲	२

बँगला

कोड		मूल्य	डाकखर्च
763	गीता-साधक-संजीवनी—	८५.०० ■	२०
1118	गीतातत्त्व-विवेचनी—	६५.०० ■	१६
556	गीता-दर्पण—	३०.०० ■	९
013	गीता-पदच्छेद—	२०.०० ■	६
957	गीता-ताबीजी—	३.०० ■	१
954	श्रीरामचरितमानस—ग्रन्थाकार	१२०.०० ■	१९
1356	सुन्दर कांड सटीक	४.०० ■	१
626	हनुमानचालीसा—	१.५० ■	१
1043	नवदुर्गा—	१०.०० ■	२
1292	दशावतार—	१०.०० ■	२
1075	ॐ नमः शिवाय—	१५.०० ■	२
1103	मूल रामायण एवं रामरक्षास्तोत्र—	२.०० ■	१
1096	कन्हैया—	१०.०० ■	२
1097	गोपाल—	१०.०० ■	२
1098	मोहन—	१०.०० ■	२
1123	श्रीकृष्ण—	८.०० ■	२
848	आनन्दकी लहरें—	१.५० ▲	१
849	मातृशक्तिका घोर अपमान—	१.०० ▲	१
496	गीता भाषा टीका—(पाकेट साइज)	६.०० ■	२
275	कल्याण-प्राप्तिके उपाय—	१०.०० ■	३
395	गीतामाधुर्य—	५.०० ▲	२
816	कल्याणकारी प्रवचन—	३.०० ▲	१
428	गृहस्थमें कैसे रहें ? —	३.०० ▲	१
1319	कल्याणके तीन सुगम मार्ग	१.५० ▲	१
1305	प्रश्नोत्तर मणिमाला—	७.०० ▲	२
276	परमार्थ-पत्रावली— भाग-१	४.०० ▲	१
1306	कर्तव्य साधनासे भगवत्प्राप्ति	४.०० ▲	१
903	सहज साधना—	३.०० ▲	१
1359	जिन खोजा तिन पाइयाँ	४.०० ▲	१
449	दुर्गतिसे बचो गुरुतत्त्व—	२.०० ▲	१
450	हम ईश्वरको क्यों मानें?—	१.०० ▲	१
1293	शिखा (चोटी) धारणकी आवश्यकता और हम कहाँ जा रहे हैं?—	१.५० ▲	१
312	आदर्श नारी सुशीला—	२.०० ▲	१
955	तात्त्विक प्रवचन—	३.०० ▲	१
956	साधन और साध्य—	२.०० ▲	१
330	नारद एवं शांडिल्य-भक्ति-सूत्र—	२.०० ▲	१
625	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम	३.०० ▲	१
1102	अमृत-बिन्दु—	५.०० ▲	२
1115	तत्त्वज्ञान कैसे हो?—	४.०० ▲	१
1303	साधकोंके प्रति—	४.०० ▲	१
1358	कर्म रहस्य	४.०० ▲	१
1122	क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं?—	३.०० ▲	१
451	महापापसे बचो—	१.०० ▲	१
762	गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका	२.०० ▲	१
469	मूर्तिपूजा—	१.०० ▲	१
1140	भगवान्‌के दर्शन प्रत्यक्ष हो सकते हैं—	१.०० ▲	१
296	सत्संगकी सार बातें—	१.०० ▲	१
443	संतानका कर्तव्य—	१.०० ▲	१

मराठी

कोड		मूल्य	डाकखर्च
1314	श्रीरामचरितमानस सटीक मोटा टाइप	१२०.०० ■	१८
784	ज्ञानेश्वरी गूढ़ार्थ-दीपिका—	१२०.०० ■	१९
859	ज्ञानेश्वरी—मूल मझला	३५.०० ■	५
748	ज्ञानेश्वरी—मूल गुटका	२५.०० ■	४
853	एकनाथी भागवत—मूल	९०.०० ■	१४
7	साधक-संजीवनी टीका—	८५.०० ■	१८
1304	गीता-तत्त्व-विवेचनी	७०.०० ■	१६
1071	श्रीनामदेवांची गाथा—	५०.०० ■	७
855	हरीपाठ—	३.०० ■	१
504	गीता-दर्पण—	३०.०० ■	८
14	गीता-पदच्छेद—	२५.०० ■	६
15	गीता माहात्म्यसहित—	३०.०० ■	५
1257	गीताश्लोकार्थसहित (पाकेट साइज)	६.०० ■	२
1168	भक्त नरसिंह मेहता	८.०० ■	२
1073	भक्त चन्द्रिका—	४.०० ■	१
857	अष्टविनायक—	६.०० ■	१
391	गीतामाधुर्य—	६.०० ▲	२
429	गृहस्थमें कैसे रहें ?—	७.०० ▲	२
1283	मूर्तिपूजा—	१.५० ▲	१
880	साधन और साध्य—	३.०० ▲	१
886	साधकोंके प्रति	४.०० ▲	१
802	गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका	२.०० ▲	१
884	सन्तानका कर्तव्य—	१.५० ▲	१
885	तात्त्विक प्रवचन —	४.०० ▲	१
1006	वासुदेवः सर्वम्—	३.०० ▲	१
1279	सत्संगकी कुछ सार बातें	१.५० ▲	१
1099	अमूल्य समयका सदुपयोग	६.०० ▲	२
1276	आदर्शनारी सुशीला	२.०० ▲	१
901	नाम-जपकी महिमा—	▲	
900	दुर्गतिसे बचो—	▲	
902	आहार-शुद्धि—	▲	
1170	हमारा कर्तव्य—	१.५० ▲	१
881	भगवत्प्राप्तिकी सुगमता—	४.०० ▲	२
898	भगवन्नाम—	४.०० ▲	१
882	मातृशक्तिका घोर अपमान—	२.०० ▲	१
899	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम	३.०० ▲	१
1339	कल्याणके तीन सुगम मार्ग और सत्यकी स्वीकृतिसे कल्याण	३.०० ▲	१

गुजराती

कोड	पुस्तक	मूल्य		डाकखर्च
467	साधक-संजीवनी—	९०.००	■	२०
1313	गीता-तत्त्व-विवेचनी	७०.००	■	१७
468	गीता-दर्पण—	३०.००	■	९
12	गीता-पदच्छेद—	२५.००	■	५
1286	संक्षिप्त शिवपुराण	११०.००	■	१६
1326	संक्षिप्त देवीभागवत	१२०.००	■	१८
1085	भगवान् राम—	४.००	■	१
1315	गीता भाषाटीका (मोटा टाइप)	१५.००	■	३
936	गीता छोटी—सटीक	६.००	■	२
1034	गीता छोटी—सजिल्द	१०.००	■	२
799	श्रीरामचरितमानस—ग्रन्थाकार	१२०.००	■	१८
785	,, ,, मझला साइज	४५.००	■	९
878	श्रीरामचरितमानस—मूल मझला	३५.००	■	६
879	,, ,, मूल गुटका	२५.००	■	४
948	सुन्दरकाण्ड—मूल मोटा-	५.००	■	१
1199	सुन्दरकाण्ड— मूल लघु आकार	२.००	■	१
1225	मोहन— (धारावाहिक चित्रकथा)	१०.००	■	२
1224	कन्हैया— ,,	१०.००	■	२
1228	नवदुर्गा—	१०.००	■	२
1366	दुर्गासप्तशती—सटीक	१५.००	■	३
1227	सचित्र आरतियाँ	१०.००	■	२
1226	अष्ट विनायक	१०.००	■	२
895	भगवान् श्रीकृष्ण—	३.००	■	१
613	भक्त नरसिंह मेहता—	७.००	■	२
934	उपयोगी कहानियाँ—	६.००	■	१
1076	आदर्श भक्त—	६.००	■	१
1082	भक्त सप्तरत्न —	५.००	■	१
1084	भक्त महिलारत्न—	६.००	■	१
875	भक्त सुधाकर—	६.००	■	१
892	भक्त चन्द्रिका—	४.००	■	१
1143	भक्त सुमन—	७.००	■	१
1087	प्रेमी भक्त—	५.००	■	१
890	प्रेमी भक्त उद्धव—	३.००	■	१
947	महात्मा विदुर—		■	
937	विष्णुसहस्रनाम—	१.५०	■	१
1229	पंचामृत—	१.००	■	१
935	संक्षिप्त रामायण (वाल्मीकीय रामायण-अन्तर्गत)	२.००	■	१
1077	शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ—	५.००	▲	१
1164	शीघ्र कल्याणके सोपान—	८.००	▲	२
1146	श्रद्धा, विश्वास और प्रेम—	८.००	▲	२
1144	व्यवहारमें परमार्थकी कला—	८.००	▲	२
1046	स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा—	६.००	▲	२
1062	नारीशिक्षा—	८.००	▲	२
1128	दाम्पत्य-जीवनका आदर्श—	७.००	▲	२
1052	इसी जन्ममें भगवत्प्राप्ति—	६.००	▲	२
1061	साधननवनीत—	७.००	▲	२
1047	आदर्श नारी सुशीला—	३.००	▲	१
1059	नल-दमयन्ती—	३.००	▲	१
1045	बालशिक्षा—	३.००	▲	१
1049	आनन्दकी लहरें—	१.५०	▲	१
1067	दिव्य सुखकी सरिता—	६.००	▲	१
1126	साधन पथ—	४.००	▲	१
1058	मनको वश करनेके उपाय एवं कल्याणकारी आचरण—	१.५०	▲	१
1054	प्रेमका सच्चा स्वरूप और सत्यकी शरणसे मुक्ति—	१.००	▲	१
933	रामायणके आदर्श पात्र—	५.००	▲	२
931	उद्धार कैसे हो?—	५.००	▲	२
946	सत्संगका प्रसाद—	४.००	▲	२
1063	सत्संगकी विलक्षणता—	३.००	▲	१
1064	जीवनोपयोगी कल्याण-मार्ग—	३.००	▲	१
1165	सहज साधना—	३.००	▲	१
942	जीवनका सत्य—	४.००	▲	१
1145	अमरताकी ओर—	४.००	▲	१
1151	सत्संगमुक्ताहार—	३.००	▲	१
940	अमृत-बिन्दु—	५.००	▲	२
1066	भगवान्से अपनापन—	४.००	▲	१
893	सती सावित्री—	२.००	▲	१
894	महाभारतके आदर्श पात्र—	५.००	▲	२
941	देशकी वर्तमान दशा तथा परिणाम—	२.००	▲	१
943	गृहस्थमें कैसे रहें?—	५.००	▲	२
1177	आवश्यक शिक्षा—	२.००	▲	१
1088	एकै साधे सब सधै—	३.००	▲	१
932	अमूल्य समयका सदुपयोग—	६.००	▲	२
938	सर्वोच्चपदप्राप्तिके साधन—	१.००	▲	१
939	मातृ-शक्तिका घोर अपमान—	३.००	▲	१
1050	सच्चा सुख—	१.५०	▲	१
1206	धर्म क्या है? भगवान् क्या है?—	१.००	▲	१
1051	भगवान्की दया—	१.००	▲	१
1060	त्यागसे भगवत्प्राप्ति और गीता पढ़नेके लाभ	१.००	▲	१
806	रामभक्त हनुमान्—	४.००	■	१
828	हनुमानचालीसा—	१.५०	■	१
1198	हनुमानचालीसा—लघु आकार	१.००	■	१
392	गीतामाधुर्य-	६.००	▲	२
404	कल्याणकारी प्रवचन—	७.००	▲	२
1141	क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं?—	३.००	▲	१
1086	कल्याणकारी प्रवचन—भाग-२	४.००	▲	१
889	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान—	३.००	▲	१
877	अनन्य भक्तिसे भगवत्प्राप्ति—	७.००	▲	२
818	उपदेशप्रद कहानियाँ—	७.००	▲	२
413	तात्त्विक प्रवचन—	४.००	▲	२
844	सत्संगकी कुछ सार बातें—	१.५०	▲	१
1056	चेतावनी एवं सामयिक चेतावनी—	१.००	▲	१
1053	अवतारका सिद्धान्त और ईश्वर दयालु एवं न्यायकारी—	१.००	▲	१
1055	हमारा कर्तव्य एवं व्यापार सुधारकी आवश्यकता—	१.५०	▲	१
1127	ध्यान और मानसिक पूजा—	१.००	▲	१
804	गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका	२.००	▲	१
1048	संत-महिमा—	१.५०	▲	१
1148	महापापसे बचो—	१.००	▲	१
1178	सार-संग्रह, सत्संगके अमृत-कण—	१.५०	▲	१
1153	अलौकिक प्रेम—	१.००	▲	१
1152	मुक्तिमें सबका अधिकार—	१.५०	▲	१

तमिल

कोड	पुस्तक	मूल्य		डाकखर्च
1256	अध्यात्म रामायण	५०.००	■	८
800	गीता-तत्त्व-विवेचनी—	७५.००	■	१९
823	गीता पदच्छेद—	२०.००	■	७
743	गीता मूलम्—	१५.००	■	४
795	गीता भाषा—		■	
794	विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्—	२.००	■	१
793	गीता मूल-विष्णुसहस्रनाम—	५.००	■	२
389	गीतामाधुर्य—	८.००	▲	३
127	उपयोगी कहानियाँ—		■	
646	चोखी कहानियाँ—	६.००	■	१
600	हनुमानचालीसा—	२.००	■	१
601	भगवान् श्रीकृष्ण—		■	
608	भक्तराज हनुमान्—		■	
642	प्रेमी भक्त उद्धव—		■	
1246	भक्तचरित्रम्—	६.००	■	१
365	गोसेवाके चमत्कार—	८.००	■	२
1134	गीता-माहात्म्यकी कहानियाँ—	८.००	■	२
647	कन्हैया— (धारावाहिक चित्रकथा)		■	
648	श्रीकृष्ण—(,, ,,)		■	
649	गोपाल—(,, ,,)		■	
650	मोहन—(,, ,,)		■	
850	संतवाणी—(भाग १)		▲	
952	,, (,, २)		▲	
953	,, (,, ३)		▲	
741	महात्मा विदुर—		■	
1042	पञ्चामृत—		■	
742	गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका		▲	
553	गृहस्थमें कैसे रहें ?—	८.००	▲	२
1110	अमृत बिन्दु—	५.००	▲	२
536	गीता पढ़नेके लाभ, सत्यकी शरणसे मुक्ति		▲	
1117	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम	५.००	▲	२
591	महापापसे बचो, संतानका कर्तव्य-	३.००	▲	१
466	सत्संगकी सार बातें—	१.००	▲	१
423	कर्मरहस्य—		▲	
568	शरणागति—	३.००	▲	१
569	मूर्तिपूजा—		▲	
551	आहारशुद्धि—		▲	
645	नल-दमयन्ती—		▲	
644	आदर्श नारी सुशीला—	३.००	▲	१
643	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान—		▲	
550	नाम-जपकी महिमा—		▲	
499	नारद-भक्ति-सूत्र—	१.००	▲	१
606	सर्वोच्चपदकी प्राप्तिके साधन—		▲	
609	सावित्री और सत्यवान्—		▲	
805	मातृशक्तिका घोर अपमान—	२.००	▲	१
607	सबका कल्याण कैसे हो ?—		▲	
792	आवश्यक चेतावनी—		▲	
655	एकै साधै सब सधै—		▲	
1243	वास्तविक सुख—	५.००	▲	२
1007	अपात्रको भी भगवत्प्राप्ति—	८.००	▲	२
1353	रामायणके कुछ आदर्श पात्र	७.००	▲	२
1354	महाभारतके कुछ आदर्श पात्र	७.००	▲	२

कन्नड़

कोड	पुस्तक	मूल्य		डाकखर्च
1112	गीता-तत्त्व-विवेचनी—	७०.००	■	१७
726	गीता पदच्छेद—	२५.००	■	६
718	गीता तात्पर्यके साथ—	१५.००	■	३
1288	गीता श्लोकार्थ	६.००	■	२
661	गीता मूल (विष्णुसहस्रनामसहित)	५.००	■	२
736	नित्यस्तुतिः, आदित्यहृदयस्तोत्रम्—	१.५०	■	१
1105	श्रीवाल्मीकि रामायणम् संक्षिप्त	१.५०	■	१
738	हनुमत्-स्तोत्रावली—		■	
737	विष्णुसहस्रनाम एवं सहस्रनामावली	२.००	■	१
721	भक्त बालक—	५.००	■	१
951	भक्त चन्द्रिका—	५.००	■	१
716	शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ—	६.००	▲	२
1109	उपदेशप्रद कहानियाँ	८.००	▲	२
724	उपयोगी कहानियाँ—		■	
832	श्रीरामचरितमानस—सुन्दरकाण्ड (सटीक)	६.००	■	२
1357	नवदुर्गा	१०.००	■	२
835	श्रीरामभक्त हनुमान्		■	
837	विष्णुसहस्रनाम—सटीक	४.००	■	१
840	आदर्श भक्त—	५.००	■	१
841	भक्त सप्तरत्न—	५.००	■	१
842	ललितासहस्रनामस्तोत्र—		■	
843	दुर्गासप्तशती—मूल	६.००	■	२
390	गीतामाधुर्य—	६.००	▲	२
128	गृहस्थमें कैसे रहें ?—	५.००	▲	२
720	महाभारतके आदर्श पात्र—	६.००	▲	२
945	साधननवनीत —	७.००	▲	२
717	सावित्री-सत्यवान् और आदर्श नारी सुशीला	४.००	▲	१
723	नाम-जपकी महिमा और आहारशुद्धि	३.००	▲	१
725	भगवान्की दया एवं भगवान्का हेतुरहित सौहार्द	३.००	▲	१
722	सत्यकी शरणसे मुक्ति, गीता पढ़नेके लाभ	२.००	▲	१
325	कर्मरहस्य —			
593	भगवत्प्राप्तिकी सुगमता—			
597	महापापसे बचो—	१.५०	▲	१
598	वास्तविक सुख—			
719	बालशिक्षा—	३.००	▲	१
831	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम		▲	
833	रामायणके आदर्श पात्र—	७.००	▲	२
834	स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा—	७.००	▲	२
836	नल-दमयन्ती—	२.००	▲	१
838	गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका	२.००	▲	१
839	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान—	३.००	▲	१

असमिया

कोड	पुस्तक	मूल्य		डाकखर्च
714	गीता-भाषा-टीका—पॉकिट साइज	५.००	■	२
1222	श्रीमद्भागवत-माहात्म्य—		■	
825	नवदुर्गा—	५.००	■	२
1323	श्रीहनुमान चालीसा	१.५०	■	१
624	गीतामाधुर्य—	५.००	▲	२
703	गीता पढ़नेके लाभ—	१.००	▲	१

कोड		मूल्य		डाकखर्च
	ओडिआ			
1100	गीता-तत्त्व-विवेचनी—ग्रन्थाकार	७०.००	■	१६
1121	गीता-साधक-संजीवनी	१००.००	■	२३
1218	रामचरितमानस—मूल मोटा टाइप	७०.००	■	१०
1157	गीता—सटीक मोटे अक्षर(अजि०)	१०.००	■	३
815	गीता श्लोकार्थसहित— (सजि०)	१५.००	■	३
541	गीता मूल विष्णुसहस्रनामसहित—	३.००	■	१
1219	गीता पंचरत्न	१५.००	■	३
1008	गीता—पॉकेट साइज	६.००	■	२
1009	जय हनुमान्—	१५.००	■	२
863	नवदुर्गा—	८.००	■	२
854	भक्तराज हनुमान्—	६.००	■	१
1173	भक्त चन्द्रिका—		■	
856	हनुमानचालीसा—	१.५०	■	१
754	गीतामाधुर्य—	५.००	▲	२
1003	सत्संगमुक्ताहार—	३.००	▲	१
1004	तात्त्विक प्रवचन—	४.००	▲	१
1208	आदर्श कहानियाँ—	६.००	▲	१
1139	कल्याणकारी प्रवचन—	[illegible]	▲	२
1138	भगवान्से अपनापन—	४.००	▲	१
1209	प्रश्नोत्तर मणिमाला—	[illegible]	▲	२
798	गुरुतत्त्व—	१.५०	▲	१
797	संतानका कर्तव्य-सच्चा आश्रय—	१.५०	▲	१
817	कर्मरहस्य—	३.००	▲	१
1010	अष्टविनायक—	१०.००	■	२
1248	मोहन	१०.००	■	२
1249	कन्हैया	१०.००	■	२
1250	ॐ नमः शिवाय	१५.००	■	३
1036	गीता—मूल लघु आकार	१.५०	■	१
1070	आदित्यहृदयस्तोत्र—	[illegible]	■	[illegible]
1068	गजेन्द्रमोक्ष—	१.५०	■	१
1069	नारायणकवच—	[illegible]		१
1078	भगवत्प्राप्तिके विविध उपाय—	३.००	▲	१
1079	बालशिक्षा—	३.००	▲	१
1163	बालकोंके कर्तव्य—	३.००	▲	१
1252	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान	३.००	▲	१
1187	आदर्श भ्रातृप्रेम—		▲	
1174	आदर्श नारी सुशीला—		▲	
1220	सावित्री और सत्यवान्—		▲	
1221	आदर्श देवियाँ—		▲	
1038	संत-महिमा—	१.००	▲	
1089	धर्म क्या है? भगवान् क्या हैं?—	१.५०	▲	१
1039	भगवान्की दया एवं भगवत्कृपा—	१.५०	▲	१
1090	प्रेमका सच्चा स्वरूप—(पॉकिट साइज)	१.५०	▲	१
1091	हमारा कर्तव्य—	१.५०	▲	१
1040	सत्संगकी कुछ सार बातें—	१.५०	▲	१
1041	ब्रह्मचर्य एवं मनको वश करनेके कुछ उपाय		▲	
1011	आनन्दकी लहरें—	१.५०	▲	१
826	गर्भपात उचित या अनुचित—	२.००	▲	१
757	शरणागति—	३.००	▲	१
1186	श्रीभगवन्नाम—		▲	

कोड		मूल्य		डाकखर्च
430	गृहस्थमें कैसे रहें ?—	४.००	▲	
1267	सहज साधना—		▲	
1005	मातृशक्तिका घोर अपमान—	३.००	▲	१
852	मूर्तिपूजा-नामजपकी महिमा—	१.५०	▲	१
865	प्रार्थना—	३.००	▲	१
796	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम	३.००	▲	१
1130	क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं?—	३.००	▲	१
1154	गोविन्ददामोदरस्तोत्र—	३.००	■	१
1200	सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र—	३.००	■	१
1201	महात्मा विदुर—		■	
1202	प्रेमी भक्त उद्धव—		■	
1203	नल-दमयन्ती—	३.००	▲	१
1204	सुन्दरकाण्ड—मूल मोटा	५.००	■	१
1205	रामायणके कुछ आदर्श पात्र—	६.००	▲	२
	नेपाली			
394	गीतामाधुर्य—		▲	
554	हम ईश्वरको क्यों मानें?—		▲	
	उर्दू			
393	गीतामाधुर्य—	८.००	▲	२
549	महापापसे बचो—	१.५०	▲	१
590	मनकी खटपट कैसे मिटे?—	०.८०	▲	१
	तेलुगु			
1172	गीता-तत्त्व-विवेचनी—	७०.००	■	१७
1031	गीता—छोटी पॉकेट साइज	६.००	■	२
1028	गीतामाधुर्य	८.००	▲	२
1352	रामचरितमानस—सटीक ग्रन्थाकार	१२०.००	▲	१८
845	अध्यात्मरामायण—	६०.००	■	११
908	नारायणीयम्—मूलम्		■	
909	दुर्गासप्तशती—मूलम्	४०.००	■	२
924	वाल्मीकि रामायणम् सुन्दरकाण्डम् मूलम्	१७.००	■	३
910	विवेकचूडामणि—	१३.००	■	२
930	दत्तात्रेय वज्रकवच—	३.००	■	१
846	ईशावास्योपनिषद्—	३.००	■	१
771	गीता तात्पर्यसहित—	१२.००	■	३
772	गीता पदच्छेद अन्वयसहित—	२०.००	■	५
915	उपदेशप्रद कहानियाँ	८.००	▲	२
692	चोखी कहानियाँ—	४.००	■	१
682	भक्तपञ्चरत्न—	५.००	■	१
[illegible]	[illegible] उद्धव—	३.००	■	१
687	आदर्श भक्त—	५.००	■	१
767	भक्तराज हनुमान्—	५.००	■	१
917	भक्त चन्द्रिका—	५.००	■	१
685	भक्त बालक—	४.००	■	१
918	भक्त सप्तरत्न—	५.००	■	१
929	महाभक्तलू (तेलुगु)	६.००	■	१
670	विष्णुसहस्रनाम—मूल	१.५०	■	१
1023	श्रीशिवमहिम्नः स्तोत्रम्-सटीक (तेलुगु)	३.००	■	१
1025	स्तोत्रकदम्बम्—	३.००	■	१

कोड		मूल्य		डाकखर्च
914	स्तोत्ररत्नावली—	१७.००	■	३
1029	भजन-संकीर्तनावली—	१०.००	■	२
688	भक्तराज ध्रुव—		■	
753	सुन्दरकाण्ड— सटीक	४.००	■	१
691	श्रीभीष्मपितामह—	९.००	■	२
732	नित्यस्तुतिः, आदित्यहृदयस्तोत्रम्—	१.५०	■	१
904	नारदभक्तिसूत्र मुलु (प्रेमदर्शन-तेलुगु)—	१२.००	■	३
887	जय हनुमान् पत्रिका—	१५.००	■	२
1301	नवदुर्गा पत्रिका	१०.००	■	२
1309	गीता माहात्म्यकी कहानियाँ	१०.००	■	२
912	रामरक्षास्तोत्र—सटीक	१.५०	■	१
905	आदर्श दाम्पत्य-जीवनमु—	८.००	▲	२
906	भगन्तुडे आत्मेयुणु—	३.००	▲	१
676	हनुमानचालीसा—	१.५०	■	१
641	भगवान् श्रीकृष्ण	५.००	■	१
662	गीता मूल (विष्णुसहस्रनामसहित)	४.००	■	१
663	गीता भाषा—		■	
674	गोविन्ददामोदरस्तोत्र—	३.००	■	१
675	सं० रामायणम्, रामरक्षास्तोत्रम्—	३.००	■	१
677	गजेन्द्रमोक्षम्—	१.५०	■	१
801	ललितासहस्रनाम—	३.००	■	१
919	मंचि कथलु—(उपयोगी कहानियाँ)	६.००	■	१
920	परमार्थ-पत्रावली—	४.००	▲	१
913	भगवत्प्राप्ति सर्वोत्कृष्ट— साधनमु नाम-स्मरणमें—	१.५०	▲	१
766	महाभारतके आदर्श पात्र—	५.००	▲	२
760	महत्त्वपूर्ण शिक्षा—	३.००	▲	१
768	रामायणके कुछ आदर्शपात्र—	६.००	▲	२
733	गृहस्थमें कैसे रहें?—	५.००	▲	२
761	एकै साधे सब सधै—	४.००	▲	१
759	शरणागति एवं मुकुन्दमाला—	३.००	▲	१
752	गर्भपात उचित या अनुचित—फैसला आपका—	२.००	▲	१
734	आहारशुद्धि , मूर्तिपूजा—	२.००	▲	१
664	सावित्री-सत्यवान्—	२.००	▲	१
665	आदर्श नारी सुशीला—	३.००	▲	१
666	अमूल्य समयका सदुपयोग—	६.००	▲	२
672	सत्यकी शरणसे मुक्ति—	१.००	▲	१
671	नामजपकी महिमा—	१.००	▲	१
678	सत्संगकी कुछ सार बातें—	१.००	▲	१
731	महापापसे बचो—	१.५०	▲	१
758	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम	३.००	▲	१
916	नल-दमयन्ती—	५.००	▲	१
689	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान—	३.००	▲	१
690	बालशिक्षा—	३.००	▲	१
907	प्रेमभक्ति-प्रकाशिका—	१.५०	▲	१
673	भगवान्का हेतुरहित सौहार्द—	१.५०	▲	१
926	सन्तानका कर्तव्य—	१.५०	▲	१
	मलयालम			
739	गीता विष्णुसहस्रनाम—मूल	४.००	■	१
740	विष्णुसहस्रनाम—मूल		■	

Checked

Recommended By—

Our English Publications

Code		Price		Postage
457	Shrimad Bhagavadgita—Tattva-Vivechani (By Jayadayal Goyandka) Detailed Commentary	50.00	■	14
1080	Shrimad Bhagavadgita—Sadhak-Sanjivani (By Swami Ramsukhdas) (English Commentary)			
1081	Set of 2 volumes	70.00	■	17
455	Bhagavadgita (With Sanskrit Text and English Translation) Pocket size	5.00	■	2
534	" " Bound	7.00	■	2
470	Bhagavadgita—Roman Gita (With Sanskrit Text and English Translation) (Bound)		■	
1223	" " " (Unbound)	10.00	■	2
808	NavaDurga (Story with the Picture)	8.00	■	2
452, 453	Shrimad Valmiki Ramayana (With Sanskrit Text and English Translation) Set of 2 volumes	220.00	■	36
1318	Shri Ramacharitamanas (With Hindi Text Roman Transliteration & English Translation)	200.00	■	20
456	Shri Ramacharitamanas (With Hindi Text and English Translation)	100.00	■	15
786	" " " Medium	50.00	■	10
564, 565	Shrimad Bhagvat (With Sanskrit Text and English Translation) Set	200.00	■	30

Code		Price		Postage
783	Abortion Right or Wrong you Decide	2.00	▲	1
824	Songs From Bhartrihari	2.00	■	1
494	The Immanence of God (By MadanMohan Malaviya)		■	
	By Jayadayal Goyandka			
477	Gems of Truth [Vol. I]	5.00	▲	2
478	" [Vol. II]	6.00	▲	2
479	Sure Steps to God-Realization	8.00	▲	3
481	Way to Divine & Bliss			
482	What is Dharma? What is God?	1.50	▲	1
480	Instructive Eleven Stories	4.00	▲	1
694	Dialogue with the Lord During Meditation	2.00	▲	1
1125	Five Divine Abodes	2.00	▲	1
520	Secret of Jnana Yoga	8.00	▲	3
521	" " Prem Yoga	6.00	▲	2
522	" " Karma Yoga	9.00	▲	3
523	" " Bhakti Yoga	8.00	▲	3
658	Secrets of Gita	4.00	▲	2
1013	Gems of Satsang	1.00	▲	1
	By Hanuman Prasad Poddar			
484	Look Beyond the Veil	6.00	▲	2
622	How to Attain Eternal Happiness ?	8.00	▲	2

Code		Price		Postage
483	Turn to God			
485	Path to Divinity	7.00	▲	2
847	Gopis Love for Sri Krisna	4.00	▲	1
620	The Divine Name and Its Practice	2.50	▲	1
486	Wavelets of Bliss & the Divine Message		▲	
	By Swami Ramsukhdas			
498	In Search of Supreme Abode		▲	
619	Ease in God-Realization	4.00	▲	1
471	Benedictory Discourses	5.00	▲	1
473	Art of Living	3.00	▲	1
487	Gita Madhurya (English)	6.00	▲	2
1101	The Drops of Nectar (Amrita Bindu)			
472	How to Lead A Household Life			
570	Let us Know the Truth	3.00	▲	1
638	Sahaj Sadhna	2.00	▲	1
634	God is Everything	3.00	▲	1
621	Invaluable Advice	2.00	▲	1
474	Be Good		▲	
497	Truthfulness of Life	2.00	▲	1
669	The Divine Name	2.00	▲	1
476	How to be Self-Reliant			
552	Way to Attain the Supreme Bliss	1.00	▲	1
562	Ancient Idealism for Modernday Living	1.00	▲	1

॥ श्रीहरिः ॥

'कल्याण' का उद्देश्य और इसके नियम

भक्ति, ज्ञान, वैराग्य धर्म और सदाचारसमन्वित लेखोंद्वारा जन-जनको कल्याण-पथ (आत्मोद्धारके सुमार्ग)-पर अग्रसरित करनेकी प्रेरणा देना इसका एकमात्र उद्देश्य है।

नियम—भगवद्भक्ति, ज्ञान, वैराग्यादि प्रेरणाप्रद एवं कल्याण-मार्गमें सहायक अध्यात्मविषयक, व्यक्तिगत आक्षेपरहित लेखोंके अतिरिक्त अन्य विषयोंके लेख 'कल्याण' में प्रकाशित नहीं किये जाते। लेखोंको घटाने-बढ़ाने और छापने-न-छापनेका अधिकार सम्पादकको है। अमुद्रित लेख बिना माँगे लौटाये नहीं जाते। लेखोंमें प्रकाशित मतके लिये सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

१-'कल्याण' का वर्तमान वार्षिक सदस्यता-शुल्क डाक-व्ययसहित नेपाल-भूटान तथा भारत वर्षमें रु० १२० (सजिल्द विशेषाङ्कका रु० १३५) और विदेशके लिये सजिल्द विशेषाङ्कका हवाई डाक (Air mail)-से US$25 (रु० ११५०) तथा समुद्री डाक (Sea mail)-से US$13 (रु० ६००) है। समुद्री डाकसे पहुँचनेमें बहुत समय लग सकता है, अत: हवाई डाकसे ही अङ्क मँगवाना चाहिये।

२-**'कल्याण' का नया वर्ष जनवरीसे आरम्भ होकर दिसम्बरतक रहता है, अतः ग्राहक जनवरीसे ही बनाये जाते हैं।** वर्षके मध्यमें बननेवाले ग्राहकोंको जनवरीसे ही अङ्क दिये जाते हैं। एक वर्षसे कमके लिये ग्राहक नहीं बनाये जाते हैं।

३-**ग्राहकोंको वार्षिक शुल्क १५ दिसम्बरतक 'कल्याण'-कार्यालय अथवा गीताप्रेसकी पुस्तक-दूकानोंपर अवश्य भेज देना चाहिये।** जिन ग्राहक-सज्जनोंसे अग्रिम मूल्य-राशि प्राप्त न होगी, उन्हें विशेषाङ्क वी०पी०पी० द्वारा भेजनेका विचार है। वी०पी०पी० द्वारा 'कल्याण'-विशेषाङ्क भेजनेमें यद्यपि वी०पी०पी० डाक-शुल्कके रूपमें रु० १० ग्राहकको अधिक देना पड़ता है; तथापि अङ्क सुविधापूर्वक सुरक्षित मिल जाता है। **अतः सभी ग्राहकोंको वी०पी०पी० ठीक समयसे छुड़ा लेनी चाहिये।** दसवर्षीय ग्राहक भी बनाये जाते हैं, इससे आप प्रतिवर्ष शुल्क भेजने/वी०पी० पी० छुड़ानेकी असुविधासे बच सकते हैं।

४-जनवरीके विशेषाङ्कके साथमें फरवरीका अङ्क संलग्न रहता है। मार्चसे दिसम्बरतकके अङ्क प्रतिमास भली प्रकार जाँच करके मासके प्रथम सप्ताहतक डाकसे भेजे जाते हैं। यदि किसी मासका अङ्क २० तारीखतक न मिले तो डाक-विभागसे जाँच करनेके उपरान्त हमें सूचित करना चाहिये। खोये हुए मासिक अङ्कोंके उपलब्ध होनेकी स्थितिमें पुनः भेजनेका प्रयास किया जाता है। मार्च-अङ्कके प्रेषणमें डाकघरसे वी०पी०पी० की राशि प्राप्त होने तथा उसके समायोजनमें समय लगनेके कारण एक माहका विलम्ब होना सम्भावित है।

५-पता बदलनेकी सूचना कम-से-कम ३० दिनोंके पहले कार्यालयमें पहुँच जानी चाहिये। पत्रोंमें **ग्राहक-संख्या, पिनकोड-सहित पुराना और नया—पूरा पता पढ़नेयोग्य सुस्पष्ट, सुन्दर अक्षरोंमें लिखना चाहिये।**

६-पत्र-व्यवहारमें 'ग्राहक-संख्या' न लिखे जानेपर कार्यवाही होना कठिन है। अतः 'ग्राहक-संख्या' प्रत्येक पत्रमें अवश्य लिखी जानी चाहिये।

७-जनवरीका विशेषाङ्क ही वर्षका प्रथम अङ्क होता है। वर्षपर्यन्त मासिक अङ्क ग्राहकोंको उसी शुल्क-राशिमें भेजे जाते हैं।

८-**'कल्याण' में व्यवसायियोंके विज्ञापन किसी भी स्थितिमें प्रकाशित नहीं किये जाते।**

'कल्याण' के दसवर्षीय ग्राहक

दसवर्षीय सदस्यता-शुल्क १२०० रुपये, सजिल्द विशेषाङ्कके लिये १३५० रुपये, विदेश (Foreign)-के लिये सजिल्द विशेषाङ्कका हवाई डाक (Air mail)-से US$ 250 (रु० ११,२५०), समुद्री डाक (Sea mail)-से US$130 (रु० ५,८५०) है। फर्म, प्रतिष्ठान आदि भी ग्राहक बन सकते हैं। डाक-व्यय आदिमें अप्रत्याशित वृद्धि होनेपर अवधिके बीचमें भी सदस्यता-शुल्कमें वृद्धि की जा सकती है। किसी अनिवार्य कारणवश यदि 'कल्याण' का प्रकाशन बंद हो जाय तो जितने अङ्क मिलें उतनेमें ही संतोष करना चाहिये।

व्यवस्थापक— **'कल्याण', पत्रालय—गीताप्रेस—२७३००५ (गोरखपुर)**

रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७
प्र० ति० २०-१२-२००१
पंजीकृत-संख्या—जी० आर०—१३
LICENCE NO.-3 LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT.

धर्म-नीतिके आदर्श प्रतिमान

प्रशान्तचित्ताः सर्वेषां सौम्याः कामजितेन्द्रियाः। कर्मणा मनसा वाचा परद्रोहमनिच्छवः॥
दयार्द्रमनसो नित्यं स्तेयहिंसापराङ्मुखाः। गुणेषु परकार्येषु पक्षपातमुदान्विताः॥
सदाचारावदाताश्च परोत्सवनिजोत्सवाः। पश्यन्तः सर्वभूतस्थं वासुदेवममत्सराः॥
दीनानुकम्पिनो नित्यं भृशं परहितैषिणः। विषयेष्वविवेकानां या प्रीतिरुपजायते॥
वितन्वते तु तां प्रीतिं शतकोटिगुणां हरौ। नित्यकर्तव्यताबुद्ध्या यजन्तः शङ्करादिकान्॥
विष्णुस्वरूपान् ध्यायन्ति भक्त्या पितृगणेष्वपि। विष्णोरन्यं न पश्यन्ति विष्णुं नान्यत् पृथग्गतम्॥
पार्थक्यं न च पार्थक्यं समष्टिव्यष्टिरूपिणः। जगन्नाथ तवास्मीति दासोऽहं चास्मि नो पृथक्॥
अन्तर्यामी यदा देवः सर्वेषां हृदि संस्थितः। सेव्यो वा सेवको वापि भवतो नान्योऽस्ति कश्चन॥

इति भावनया कृतावधानाः प्रणमन्तः सततं च कीर्तयन्तः।
हरिमब्जजवन्द्यपादपद्मं प्रभजन्तस्तृणकं [illegible]नेषु॥
उपकृतिकुशला जगत्स्वजंस्त्रं परकुशलानि निजानि मन्यमानाः।
अपि परपरिभावने दयार्द्राः शिवमनसः खलु वैष्णवाः प्रसिद्धाः॥
दृषदि परधने च लोष्टखण्डे परवनितासु च कूटशाल्मलीषु।
सखिरिपुसहजेषु बन्धुवर्गे सममतयः खलु वैष्णवाः प्रसिद्धाः॥

जिनका चित्त अत्यन्त शान्त है, जो सबके प्रति कोमल भाव रखते हैं, जिन्होंने स्वेच्छानुसार अपनी इन्द्रियोंपर विजय प्राप्त कर ली है तथा जो मन, वाणी और क्रियाद्वारा कभी दूसरोंसे द्रोह करनेकी इच्छा नहीं रखते, जिनका चित्त दयासे द्रवीभूत रहता है, जो चोरी और हिंसासे सदा ही मुख मोड़े रहते हैं, सद्गुणोंके संग्रह तथा दूसरोंके कार्यसाधनमें जो प्रसन्नतापूर्वक संलग्न रहते हैं, सदाचारसे जिनका जीवन सदा उज्ज्वल—निष्कलङ्क बना रहता है, जो दूसरोंके उत्सवको अपना उत्सव मानते हैं, समस्त प्राणियोंके भीतर भगवान् वासुदेवको विराजमान देखकर कभी किसीसे ईर्ष्या-द्वेष नहीं करते, दीनोंपर दया करना जिनका स्वभाव बन गया है और जो सदा परहितसाधनकी विशेष इच्छा रखते हैं। अविवेकी मनुष्योंका विषयोंमें जैसा प्रेम होता है, उससे सौ करोड़ गुनी अधिक प्रीतिका विस्तार वे भगवान् श्रीहरिके प्रति करते हैं। नित्य कर्तव्यबुद्धिसे विष्णुस्वरूप शङ्कर आदि देवताओंका भक्तिपूर्वक पूजन और ध्यान करते हैं, पितरोंमें भी भगवान् विष्णुकी ही बुद्धि रखते हैं, भगवान् विष्णुसे भिन्न दूसरी किसी वस्तुको नहीं देखते और भगवान् विष्णुको किसी दूसरी वस्तुसे पृथक् नहीं देखते। समष्टि और व्यष्टि सबको भगवान्का ही स्वरूप समझते हैं तथा भगवान्को जगत्से भिन्न तथा अभिन्न दोनों मानते हैं। 'भगवान् जगन्नाथ! मैं आपका दास हूँ; आपके स्वरूपमें भी मैं हूँ, आपसे पृथक् कदापि नहीं हूँ। जब आप भगवान् विष्णु अन्तर्यामीरूपसे सबके हृदयमें विराजमान हैं, तब सेव्य अथवा सेवक कोई भी आपसे भिन्न नहीं है।' इस भावनासे सदा सावधान रहकर—ब्रह्माजीके द्वारा वन्दनीय युगलचरणारविन्दोंवाले श्रीहरिको सदा प्रणाम करते, उनके नामोंका कीर्तन करते, उन्हींके भजनमें तत्पर रहते और संसारके लोगोंके समीप अपनेको तृणके समान तुच्छ मानकर विनयपूर्ण बर्ताव करते हैं। जगत्में सब लोगोंका उपकार करनेके लिये जो कुशलताका परिचय देते हैं, दूसरोंके कुशल-क्षेमको अपना ही मानते हैं, दूसरोंका तिरस्कार देखकर उनके प्रति दयासे द्रवीभूत हो जाते हैं तथा सबके प्रति मनमें कल्याणकी भावना रखते हैं, वे ही भगवद्भक्तके नामसे प्रसिद्ध हैं। जो पत्थर, पर-धन और मिट्टीके ढेलेमें; परायी स्त्री और कूटशाल्मली नामक नरकमें; मित्र, शत्रु, सगे भाई तथा बन्धुवर्गमें समान बुद्धि रखनेवाले हैं, वे ही निश्चितरूपसे भगवद्भक्तके नामसे प्रसिद्ध हैं। (स्कन्दपुराण)